

ध्वनि और संगीत

प्रो० ललितकिशोर सिंह, M Sc
प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय



• भारतीय ज्ञानपीठ, काशी •

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रंथमाला हिंदी ग्रंथाङ्क-३२
सम्पादक-नियामक लक्ष्मीचन्द्र जैन

DHWANI AUR SANGEET

(Music)

by

LALITKISHORE SINGH

Published by

Bhartiya Jnanpeeth Kashi



प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ कशा

मुद्रक

सन्मति मुद्रणालय वाराणसी

द्वितीय संस्करण १९६२

मूल्य साठे चार रुपये



भारतीय सगीतके आदि आचार्य
भरतकी
पुण्य स्मृतिमे

विषय-सूची

अध्याय	विषय	पृष्ठ
१	प्रवक्ष	९
२	कम्पन और आवृत्ति	१२
३	तरंग और वेग	२०
४	तरंग-मयाग और स्थावर तरंग	२९
५	ध्वनिचक्र और उनका विश्लेषण	३५
६	स्यारता तापता और गुण	४३
७	प्रेरित कम्पन और अनुनाद	५६
८	ढाल और परिणामी स्वर	६८
९	स्वर और ग्राम	७४
१०	विकृत स्वर और साधारण ग्राम	८४
११	स्वर-मवाद और स्वर-मघान	९५
१२	ग्राम रचना विधि	११९
१३	संगीत	१३८
१४	प्राचीन स्वर ग्राम	१४५
	(क) बर्षिक-पद्धति	१४५
	(ख) भरत-पद्धति	१५३
	(ग) गान्धर्व-पद्धति	१६५
	(घ) श्रुति-स्वर विचार	१७४

विषय	पृष्ठ
मध्यकालीन स्वर ग्राम	१८९
(क) वाक्शिणात्य पद्धति	१८९
(ख) उत्तरीय पद्धति	२०१
आधुनिक स्वर ग्राम	२१३
(क) स्वरित	२१३
(ख) स्वर ग्राम	२१९
(ग) छोट (घाट)	२२७
(घ) वादी सवादी	२४७
(ङ) भ्रुति प्रयोग	२५६
हिन्दुस्तानी सगातकी वैज्ञानिकता और परम्परा	२७६
उदाहरण ग्रन्थ	२८४
उदाहरण लेख	२८६
परिशिष्ट १	२८७
परिशिष्ट २	२९१
परिशिष्ट ३	३०१
परिशिष्ट ४	३०३
अनुक्रमणिका	३०६

प्राक्कथन



प्रस्तुत पुस्तक दो भागमें बाँटी जा सकती है। इनमें से पहले भागका विस्तार बारहवें अध्याय तक होगा, जिसमें ध्वनि विज्ञानके उष्माका घनन और मौलिक सिद्धांतोंका स्पष्टीकरण है। दूसरे भागका क्षेत्र तेरहवें अध्यायमें अंत तक होगा, जिसमें नये पुराने, सभी भारतीय स्वर ग्रामोंका ध्वनिक विश्लेषण है। पहले भागमें सवाँ, सघात, ग्राम रचना विधि आदि का घनन अपेक्षाकृत विस्तारसे दिया गया है, इसलिए कि ध्वनि विज्ञान की सामान्य पाठ्य-पुस्तकमें इनका स्थान प्राप्त पाया जाता है।

ध्वनि विज्ञानवाले भागकी रचना प्रसिद्ध ध्वनिकीकी कृतियोंके आधारपर हुई है। पर भारतीय संगीतवाले भागमें बहूतेरे ऐसे सिद्धान्त और परिणामोंका निरूपण है, जिनका उत्तरदायित्व परे तौरसे लेखकपर ही है। जैसे—बत्, भरत और शाङ्गदेवके स्वर ग्रामोंका निरूपण श्रुति, मूर्च्छना आदि पारिभाषिकोंका तात्पर्य निष्पत्ति, रामामात्यके ग्राम-गस्थान और 'स्वयंभूस्वर' की व्याख्या सवाद और यमकत्वके आधारपर भातखण्डके दस ठाट विधानकी निष्पत्ति, इत्यादि। ये परिणाम विवादग्रस्त हैं। विवाद ध्वनिकीके आधारपर ही तो इससे नये अनुसंधानकी प्रथम ही मिलगा। पर यदि बद्धमूल धारणा और जड़ीभूत संस्कार से विवाद खड़ा हो जाये तो इससे कोई लाभ नहीं। नये परिणामोंकी निष्पत्तिमें यथाशक्ति तक और प्रमाणोंका उपयोग किया गया है। फिर भी परम वाक्यके अधिकारी होनेकी स्थिति विज्ञानिक विचारोंके लिए निषिद्ध है।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि इस कृतिका प्रधान विषय हिन्दुस्तानी या उत्तरीय पद्धति है। यह अन्तिम अध्यायमें स्पष्ट हो

जाता है। प्रसंगवश आधुनिक दक्षिणात्य पद्धतिपर भी विचार किया गया है और जहाँ-तहाँ पश्चात्य पद्धतिका भी स्पष्ट है। पर इन पद्धतियाँ साथ-साथ यावहारिक सम्पर्क न होनेसे इनकी विवेचनामें प्रामाणिकताका दावा नहीं किया जा सकता। अंतिम अध्यायमें हिन्दुस्तानी-पद्धतिकी विशेषताओं का अधिक स्पष्ट करनेके लिए दक्षिणात्य पद्धतिके साथ तुलना आवश्यक जान पड़ी। इस प्रसंगमें दक्षिणात्य पद्धतिकी कई श्रुतियाँ और ध्यान आकर्षित किया गया है। यह आक्षेप जसा लग सकता है, पर इसमें अपमानकी भावना नहीं है। दाना पद्धतियाँ विभेद यदि तथ्यत भ्रान्त मिथ्य हो जायें तो यह सतोप ही की बात होगी, क्योंकि परिणाममें दाना पद्धतियाँ एकता ही चरम लक्ष्य हैं।

ध्वनि विज्ञानका स्वतंत्र समावेश हेल्महोल्ज, वलसेर्ना, जोस आदि प्रमुख विज्ञानिकोंके लिखे हुए संगीतविषयक ग्रन्थोंके ढाँचेपर हुआ है। नाद और संगीतमें समवाय सम्बन्ध है, इसलिए नाद विज्ञानके द्वारा ही संगीतका भौतिक संस्थान समझा जा सकता है। इसके अतिरिक्त यहाँ इसकी विशेष आकांक्षा है। आये दिन अनुसंधानकी धुन सभी क्षेत्रोंमें दिखायी पड़ती है। आपाततः संगीत प्रेमा भी अनुसंधानके लिए उत्तेजित हो उठी है। यह निःसन्देह ही शुभ लक्षण है। पर अभी उनकी दृष्टि भारतीय संगीतके अतिशक्ति, अतिप्राकृतिक और आध्यात्मिक पक्षपर ही केन्द्रित है। इसीलिए वनस्पतियाँ रागोंका प्रभाव या भिन्न भिन्न रोगोंकी चिकित्सा में भिन्न भिन्न रागोंका उपयोगिता जैसे विलक्षण, पर उत्तेजक, विषयोंमें ही उनका मनायोग है। अनुसंधानका क्षेत्र चुनना व्यक्तिगत रुचिपर निर्भर है, पर यह बात दना आवश्यक है कि भारतीय संगीतके भौतिक पक्षमें भी अनुसंधानका बहुत बड़ा क्षेत्र है, और ऐसे अनुसंधानके लिए ध्वनि विज्ञानका ज्ञान अनिवार्य है। इसलिए जो संगीत प्रेमी भौतिक अनुसंधानमें रुचि रखते हैं, उनके लिए यह ध्वनि विज्ञानका अङ्ग बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा। अनुसंधानका यह माग न तो नूनन है और न विलक्षण। शाङ्गदेव, मतङ्ग आदिने संगीत

का उद्देश्य जनसाधारणको यथासुविधि आनन्द देना ही बनाया है। गान्धेय ने संगीतके लिए 'अनाहतनाद'का निराकरण किया है। वस्तुतः संगीतमें रहस्यवाद कवियोंकी देन है, संगीत शास्त्रियाकी नहीं।

परिणिष्टम संगीतके सस्कृत ग्रन्थका उद्धरण विस्तारमें दिया गया है। वह इसलिए कि ये ग्रन्थ सभी जगह नहीं पाये जाते। इसी उद्देश्यसे मिस्री, फारसी आदि स्वर ग्राम भी दे दिये गये हैं। तीक्ष्ण दृष्टिवाले संगीत प्रेमी इनमें कुछ न कुछ कामकी बातें निकाल ही सकते हैं।

पाठ्यपुस्तक न होनेसे इस पुस्तकके प्रकाशनमें बहुत विलम्ब हुआ। इसी अपराधके कारण इसकी पाण्डुलिपि एक प्रमुख सस्थाके कार्यालयमें सालों पड़ा रही। धन्यवाद है भारतीय ज्ञानपीठके अधिकारियोंको, जिन्होंने इसके प्रकाशनका गुरु भार मुक्त हृदयमें ग्रहण किया। ज्ञानपीठके कायकर्ता भी प्रशंसार्ह पात्र हैं जिनकी तत्परतासे ही यह पुस्तक शीघ्र प्रकाशित हो सकी।

अन्तमें उन मित्रोंको धन्यवाद है जिनकी शुभकामना पुस्तकके निर्माण कालमें निरन्तर लेखकके साथ रही है। लेखकपर सबसे अधिक आभार आचार्य र० वृ० आमुण्डीका है जिनका प्रास्तावक, सहायक और सत्परा मर्ग लेखकके साथ मिलता रहा है।

दि० वि० वि० }
काशी

—ललितनिशोर सिंह

१ प्रवेश



१ यद्यपि ध्वनिका बाध कानास ही होता ह, पर इतनेसे ही ध्वनि की धारणा पूरी नहीं हाती । जत्र हम ध्वनि सुनते हैं तो यह खयाल हाता ह कि यह किसी-न किसी द्रव्यम पत्ता हुई ह और एक विशेष दिशास, कुठ दूरी त कर, हमारे पास जा रही ह । अर्थात् ध्वनि बाधक लिए उत्पादक, माध्यम और ग्राहक, इन तीनाका अस्तित्व अनिवाय ह । कभी-कभी कानामें आपसे आप गूँज उठा करती ह । इसका कारण कान और मस्तिष्कका विकार ह । ऐसी गूँजकी उत्पत्तिमें न तो किसी उत्पादक द्रव्य और न किसी माध्यमकी सहकारिता ह, इसलिए इस 'ध्वनि' नहीं कह सकते । सगीतके प्राचीन शास्त्रकाराने इसीलिए योगक 'अनाहत नाद'को सगीतका आधार नहीं माना है । वे द्रव्यके आघातसे उत्पन्न 'आहत नाद'से ही सगीत का उद्भव मानते ह ।

तात्पर्य यह कि सगीत और विज्ञानकी परिभाषामें वह भौतिक ध्वनि ही आती ह जो किसी भौतिक द्रव्यम उत्पन्न हाती ह, किसी भौतिक माध्यममें चलकर काना तक पहुँचती ह और उनके ज्ञान तत्तुआको छेड़ती ह, त्रिमस मस्तिष्क उसका अनुभव करता ह ।^१

१ या ता श्रय द्रव्यर कम्पनसे, द्रव्यक माध्यममें उत्पन्न सभी आदोलनाया तरगासो ध्वनि कहत है, चाह घट कानको मुनायो दे या न द । आधुनिक भौतिक विज्ञानमें एक नय विभागकी वृद्धि हो रही है जिसका सम्बन्ध उन 'अतिध्वनिक' तरगास हैं जिनका ग्रहण करना कानोंकी क्षमताक बाहर है । पर सगीतमें उसी ध्वनिका समावेश है जिस कान ग्रहण कर सक ।

२ ध्वनि द्रव्यमें कस उत्पन्न होती है, इसपर विचार करना आवश्यक है। किमी कासके कटोरका छोरर लगनस या किमी तन हुए पीतलके तारको छेडनेमें आवाज सुनायी जाती है। वस हा टेंबलपर हाथ मारनेस भी शब्द सुनायी दता है। कटार, तार या टेन्क पटरका ध्यानसे दखनपर वे हिलत हुए मालूम हागे। तबक परदपर बालूक बण फला दिये जायें तो तबलेका जंगलियासे ठुकरात ही बालूक बण नाच उठेंगे। इसलिए यह अनुभव सिद्ध है कि उत्पादक द्रव्यके कम्पनस ध्वनिका उत्पत्ति होती है।

पर हाथको धार धीरे वायुम लिलानेमें ध्वनि सुनायी नहीं दती। वस ही एक मोटी लाठा या एक चाबुकी हाथमें लवर उम अपन चारा आर धीर धीर घुमायें ता पहलु काई ध्वनि सुनायो न दगी। पर यन्त्र उमके घूमनकी गतिका धार धार बढ़ायें तो एक जवस्थाम धीमी आवाज सुनायी दगी, और जस-जस गति बढ़ती जायगी वस-वस आवाज तज होनी जायगी। मतलब यह कि हर तरहक कम्पनसे ध्वनि पदा नही होती। कम्पनका एक सीमा है जिसस धीमा हानस द्रव्यमें कम्पन हानपर भा बह ध्वनि उत्पन्न नहीं करता।

३ कम्पन काफा तज होनस ध्वनि पदा होती है। पर वह काना तज कंस पहुँचती है? साधारणत कान और उत्पादकक बीच वायु रहता है और इसी वायुमें ध्वनिका गवार हाता है। पर इसमें यह न मान लेना चाहिए कि वायु ही ध्वनि-गमनका एकमात्र आश्रय या माध्यम है। कीर्त पानाकं भीतर इट बजाव ता पानीकं भीतर ही दूसरा यन्त्र इट बजनकी आवाज काफी दूरी तक सुन सकता है। एक लम्बी सूनी लकड़ीक लम्बे छुदक एक गिरपर कीर्त कान रखे ता दूसरे छिरेपर धार धीर चाकुरा बुरदनकी छरकराइट साफ सुनायी दगी। रलय लाइनपर कान रखनमें बहूत दूरपर लागी दूई धीमी ठीकर या गाडीकी आवाज स्पष्ट सुनायी दगी। ता सब अनुभवाम यह मानना पड़ता कि ध्वनि-गमनका माध्यम वायुकी तरह गस, जलका तरह द्रव, या लाइ-लकड़ीकी तरह ठोस—इनमें-स काई

भी द्रव्य हा सकता है ।

४ अब प्रश्न यह उठता है कि किसी द्रव्यके अभावमें अर्थात् शून्यमें ध्वनिका संचार सम्भव है या नहीं । इस प्रश्नका निराकरण एक साधारण प्रयोगसे हो सकता है । एक बटी काचकी बोतलके साथ वायु निकालनेवाला पम्प लगा दिया जाये । उस बोतलमें एक विजलीकी घण्टी लटका दी जाये जिसके तार और बटन बाहर हों । बोतल इस तरह खन्द कर दी जाये कि हवा आ-जा न सके । अब बटन दबानेमें विजलीकी घण्टी बजने लगेगी और ध्वनि बाहर सुनायी देगी । पर पम्पके द्वारा हवा जस-जस बाहर निकलगी वस-ही-वस ध्वनि धीमी पड़ती जायगी । यहातक कि एक अवस्थामें आतामें घण्टी बजती हुई सुनायी देगी पर कोई ध्वनि सुनायी न पड़ेगी । इस साधारण प्रयोगसे, जिसका प्रवच किसी भी प्रयोगशालामें आमानीसे हो सकता है, यह सिद्ध होता है कि ध्वनि-संचार द्रव्यके अभावमें, या शून्यमें नहीं हो सकता । उसके लिए किसी द्रव्यका माध्यम, चाहे वह गैस, द्रव या ठोस अवस्थामें हो, आवश्यक है ।

इस प्रकार उत्पादक द्रव्यमें उत्पन्न कम्पन गम, द्रव या ठोस माध्यमके द्वारा काना तक पहुँचता है । इस आगत कम्पनके वगसे कानके परद भी कम्पित हो उठते हैं और फिर इस परदके कम्पनमें, हड्डियाँ, परद और द्रवज जटिल पर सूक्ष्म यंत्रके द्वारा, श्रुति-तन्तुआमें स्पन्दन पदा होत हैं । इहो स्पन्दनसे मस्तिष्कका ध्वनिका बाध होता है ।



२ कम्पन और आवृत्ति

५ यह साधारण अनुभवकी बात है कि कुछ ध्वनियां कानोको खास तौरसे प्रिय मालूम होती हैं जम बाँसुराकी आवाज या ताराकी झनकार। ऐसी ध्वनियांका संगीत ध्वनि या नाद कहते हैं। इनके अतिरिक्त सारी ध्वनियां 'गार' कहते हैं। इस पारिभाषिक जयमें राव कहेंगे। राव' का प्रयोग यहाँ बहुत ही व्यापक जयमें हुआ है। वनानिक' परिभाषामें टेबलपर हाथ मारनसे या साधारण बोल चालमें जा ध्वनियाँ निकलती हैं वे सब राव बही जाती हैं। रावसे अभिप्राय सगानतर ध्वनिस है।

यह बताया जा चुका है कि ध्वनिकी उत्पत्ति द्रव्यके कम्पनसे होती है। राव और नादका भेद इस कम्पनकी प्रक्रियाम ही प्रत्यक्ष हो जाता है। रावके उत्पादकका कम्पन क्षणिक और अनियमित होता है और वह माध्यमका क्षणिक अभिघातसे आ दालित कर देता है। इसीसे कान भी एक आकस्मिक अभिघात या धक्काका ही अनुभव करता है। इसके विपरीत नादके उत्पादकका कम्पन नियमित और लगातार होता है। इससे माध्यम और कानके परदेमें भी नियमित स्पन्दन पदा होता है। मनुष्यके गलेसे, या सामान्यतः सभी जावोंके गण्ड, दाता प्रवारकी ध्वनियाँ निकलती हैं।

यह सम्भव है कि अनुभवकी दृष्टिमें वहाँ नाद राव सा जान पड़े और राव नाद-सा। किसी ऐसी कमरेमें जहाँ दीवारोंमें ध्वनिका परावतन अधिक होता है मधुर संगीत भी राव-सा ही जान पडगा और किसी हरनकी आवाज, जो कठिन पथरपर जल्के अभिघातसे पदा होती है मधुर संगीत सी मालूम होगा। पर हमसे ऊपर दिया हुआ नाद और रावका पारिभाषिक भेद उपयुक्त है सिद्ध होता है।

आजकल नगरोंका राव एक सामाजिक समस्या है गया है इससे

वनानिकाका ध्यान रावके अध्ययनकी ओर आकर्षित हुआ ह । पर सगीतका सम्बन्ध नादसे है, रावसे नहीं ।

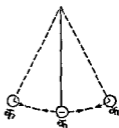
६ नाद द्रव्यके नियमित कम्पनसे पदा होता ह । किसी सितार या तमूरेके तारको छेड़कर उसे ध्यानसे देखनेपर इस कम्पनके रूपकी कुछ धारणा



आवृत्ति १

हा सकती ह । तारका छेड़नेपर वह अपनी स्थिति क (आ० १) से वक्र होकर ऊपर का क' पर आता ह । यहा इसकी गति शून्य हो जाती ह और यह क की ओर लौटता ह । पर क पर अब यह अपने वेगके कारण ठहर नहीं पाता, इससे दूसरी ओर क'' तक जाता है । क'' पर इसकी गति शून्य हो जाती ह और यह पहले ही की तरह क की ओर लौटता ह । इस बार भी यह क पर ठहर नहीं सकता । इससे फिर पहले कम्पनकी आवृत्ति होती ह । कम्पनकी इस लगातार ओर नियमित आवृत्तिसे ही नाद पैदा होता ह ।

पर नागोत्पादक द्रव्यकी गति इतनी तीव्र होती ह कि उस आँखासे पर खना कठिन ह । इसीसे दालकके द्वारा, जो इस नियमित कम्पनका स्थूल रूप प्रत्यक्ष कर देता ह, इसकी विवेचना की जा सकती ह । एक हलक और दठ धागेमें किसी धातुका भारी गोली लटकाकर दालक बनाया जा सकता है जैसा राजमिस्तिरीका साहुल हाता ह । इसे स्थितिसे स्थान क (आवृत्ति २) से हिलाकर छोड़ दे ता यह बहुत देर तक डोलता रहेगा । गोली क से क' पर जायेगी और वहा क्षणिक स्थितिके बाद इसकी दिशा बदलेगी ।



आवृत्ति २

यह फिर लौटकर क पर आवेगा । पर यहाँ अपन वगव कारण ही यह रुक न सकेगी और क" तक पहुँचेगी । यहाँस फिर पहलेकी ही तरह लौटकर क पर पहुँचेगी । इसी कम्पनकी आवृत्ति बटुन दर तक होती रहेगी ।

इस दालकव कम्पनम और तारक कम्पनमें कोई अंतर नही ह । नादके सभी उत्पादकाम इसी प्रकारका कम्पन पाया जाता ह ।

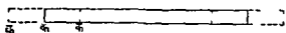
७ (आ० १ २) क मे क' क' स क, क से क" और फिर क" स क तकका गतिको एक कम्पन कहते ह । यह एक ऐसा टुकडा ह जिसकी आवृत्ति हानी रहती ह । क-क'-क"-क का चक्र पूरा करनेम जितना समय लगता है उस 'कम्पन-काल' या सक्षिप्त रूपमें 'काल' कहते ह । क-क' या क-क" की दूरीको कम्प विस्तार' कहत ह । एक सेकेण्डमें किमी दोलक या तारका जितना कम्पन होता ह उमे उस दोलक या तारकी 'आवृत्ति' कहते है । मगीतकी दृष्टिसे यह 'आवृत्ति' सबसे अधिन महत्त्वकी परिभाषा ह ।

८ ऊपरकी परिभाषासे काल और आवृत्तिका सम्बन्ध बडी सरलतासे निकाला जा सक्ता ह । यदि काल क ह और आवृत्ति आ ह, ता

$$आ = \frac{१}{क} \quad (१)$$

अर्थात् यदि काल $\frac{१}{१०}$ सकेण्ड हो तो आवृत्ति १० कम्पन प्रति सकेण्ड होगी ।

९ आकृति १ के अनुसार तारका कम्पन आडी दिगाम होता ह । पर यदि अगुलियाम रालकी युक्तनी लगाकर उनस तारको रगडें ता एक बहुत ही महीन आवाज सुनायी पक्गा । इस अवस्थामें कम्पन तारकी लम्बाईका दिगामे ही होता ह (आ० ३) ।



आकृति ३

पहले प्रकारक कम्पनका अनुभव्य वस्तु ह और दूसरे प्रकारक कम्पनकी अनुभव्य' । बिना कम्पन या समझक टुकडपर रालकी महीन युक्तनी छिडक

कर उसस किता धातुक छडको तजीसे रगडें तो अनुदध्य कम्पनका ध्वनि काकी तेज सुनायी पडेगी । कभा कभा इसराज या बेला बजानमें जब कमानो आडी न चलकर तिरछा हा जाती ह और तारको लम्बाइकी िणामें रगडा देतो हैं ता इसी तरहक धातु निकलत ह ।

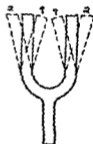
१० • धातुक डण्ड या छामें, तारकी तरह अनुप्रस्य कम्पन भा होता ह । एक डण्डके दोना तिराके नीचे दा तिकानी गिट्टिया रख दें और बीचमें काठनी हयोडोस ठोकर मारे तो डण्डसे अनुप्रस्य कम्पनकी ध्वनि निकलगी । इस कम्पनकी आवृत्ति मामूली तौरसे, डण्डके अनुदध्य कम्पनकी आवृत्तिसे बढत हो कम हाती ह । (आ० ४)



आवृत्ति ४



(क)
आवृत्ति ५



(ख)

अनुप्रस्य कम्पनके लिए एक चौकोर लाहक डण्डको आ० ५ (ख) का तरह मोडकर एक मात्र बनाया जाना है जिस द्विभुज कहते ह । इसक नीचे बीचो-बीच साहेकी टण्टी लगी रहता ह, जिस अँगुलियाम पकडकर द्विभुजका टुकरानेस इसकी दोना भुजाजाम कम्पन हान लगता है । इसी अवस्थामें द्विभुजका टेब्लपर टण्टीके सहारे गढा कर दें तो इसक कम्पनसे उत्पन्न ध्वनि साफ सुनाया पडेगा । नाचक अध्ययनके लिए यह द्विभुज बढा हो उपयोगी यत्र ह । यह आगे बताया जायेगा कि इसमें-स गुद्ध स्वर निकलता ह और इसीलिए इसका स्वर तुलनाक लिए प्रमाण माना जाता

ह (अनुच्छ ३४)। इसक सम्पन्नका दग आ० ५ (र) में दिगाया गया है। किसी एक भुजाको टुकरानम, पहल दोना ही भुजाए एक दूसरोका तरफ झुकती है, फिर एक-दूसरोस दूर हटकर फल जाती है। यह क्रिया बार-बार हाती रहता ह।

११ हम दखन ह कि तार या दालकवा छड दनपर वह छोटा दर तन हिलना रहता ह फिर धार घोर हिलना बन्द हो जाता ह। यदि दालकवा एक आवत्तिये समयको घडीसे नापें तो पता चलेगा कि यह समय सग बराबर ही रहता ह। उमका विस्तार जरूर घटना जाता ह जा अतमें गूँथ ना जाता ह पर कालमें कोई अंतर नहा पडता। घोडी दर हिलनक बाद दालकवा गोलाकी चाल सुस्त मालूम हाती ह, इसस बहुधा यह धारणा होती ह कि दालकवा आवृत्ति काल बढ गया, अर्थात् आवत्ति घट गयी। पर चालकी सुस्तीसे साथ साथ विस्तार भी घट जाता ह इसलिए आवृत्ति-काल सदा बराबर रहता ह। मामूली तोरसे यह कहा जा सक्ता ह कि किसी भी सम्पन्न वस्तुका आवृत्ति विस्तारपर निर्भर नही ह। विस्तार बहुत अधिक बान जानपर आवृत्तिक ऊपर कुछ असर अवश्य पडता ह। पर साधारण अवस्थाम विस्तार और आवृत्ति एक दूसरोस स्वतन्त्र ह। जस, ताप चाह अ म ज (आवृत्ति १) तक हा हिल या इससे अधिक या कम, पर तारकी आवृत्ति ज्या की-त्या रहेगी।

किसी वस्तुका आवृत्ति उगता लम्बाई, माटाई घनत्व स्थिति-स्थापक बरत आकार आदि अनेक भौतिक गुणापर निर्भर ह। जबतक इन गुणामें कोई अन्तर नही हाता तबतक वस्तुका एक सङ्कटकी सम्पन्न सख्या या आवृत्तिमें भी कोई अन्तर नही पडना। एक पानल तारकी लम्बाई माटाई और निचाय बराबर एक-ना रहे तो जब कमा भी छेन्नपर उसकी

१ जा वस्तु दवानम तितना कम दवता ह या मङ्गारनम तितना कम मुद्धता ह, यह उतना हा अधिक स्थिति स्थापक माना जाता ह।

प्रति-सन्नेष्ट कम्पन सह्या एक ही निकलेगी ।

१२ आगे कुछ मुख्य मुख्य वस्तुआकी आवृत्तिका उनक भिन्न भिन्न भौतिक गुणाक माय सम्बन्ध दिखाया जाता ह—

(१) तार—

तारकी आवृत्तिक सम्बन्धम मसनने नीचे दिय हुए नियम निकाल ह

(क) आवृत्ति तारकी लम्बाईकी "युत्क्रम (उलटा) अनुपाती हाती ह । जयात, तारको दूना लम्बा कर देनेम आवृत्ति आधी हा जाती ह ।

(पायथागोरसन इस सम्बन्धका आविष्कार किया था ।)

(ग) यदि लम्बाई बराबर रख और त्रिचावका बल बढावें ता कम्पनकी आवृत्ति इस बलके वर्गमूलके अनुपातस बढनी ह ।

काठके परदेपर बढाया हुई दो तिकानी

घोडियापर तार फला दें और उसके एक

छोरसे १ सेरका बाट लटका दें ता तार

तन जायगा । (आ० ६) । इस तार

की छटनपर एक निश्चित आवृत्तिकी

ध्वनि निकलेगी । अब यदि एक सेरक

बन्ने चार सरका बाट लटकाव ता तार

की आवृत्ति दूनी हो जायेगी ।

(ग) लम्बाई और त्रिचाव समान रहे तो आवृत्ति तारक भारके वर्ग

मूलकी "युत्क्रम अनुपाती होती ह । अर्थात् कुल तारका भार चौगुना हा जाये

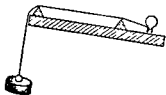
तो आवृत्ति आधा हा जायगी ।

यहाँपर यह ध्यानम रहना चाहिए कि तारका भार दो तरहस बढ

सकता ह—एक तो तारकी मोटाई बढनस दूसरे तारकी धातुका घनत्व

अधिक हानस । जस बराबर लम्बाई, माटाई और त्रिचावक लाहे और

पीतलके तारमें लाहेवालेका आवृत्ति ज्यादा हागी, क्याकि लोहा पीतलस



आवृत्ति ६

(२) डण्डा—

(क) अनुप्रस्थ कम्पन—डण्डक अनुप्रस्थ कम्पनकी आवृत्ति स्थिति स्थापकत्वक वगमूलकी अनुपाती उसक घनत्वकी व्युत्क्रम अनुपाती और लम्बाईक वगका व्युत्क्रम अनुपाती होती ह ।

यदि एक ही डण्डका विचार करें तो उसकी आवृत्ति लम्बाईक वगकी व्युत्क्रम अनुपाती होगी । अर्थात् अगर किसी डण्डेकी लम्बाई आधी कर दी जाय तो उसकी आवृत्ति चौगुनी हो जायेगी और लम्बाई तिहाई कर देनेपर आवृत्ति नौगुनी हो जायेगी । डण्डा जितना छोटा होगा आवृत्ति उतनी ही अधिक होगी । माटाइ बन्नस डण्डेकी आवृत्ति बन्ती ह ।

(ग) अनुन्ध्य कम्पन—डण्डेका अनुन्ध्य कम्पन लम्बाईका व्युत्क्रम अनुपाती होता ह । अर्थात् लम्बाई आधी करनेमें आवृत्ति दूनी और लम्बाई तिहाई करनेमें आवृत्ति तिगुनी हो जाती ह । इसपर माटाईका कोई असर नहीं होता । (अनुप्रस्थ कम्पनस तुलना करो ।)

(३) द्विभुज—

द्विभुजका आवृत्ति लम्बाईक वगकी व्युत्क्रम अनुपाती और कम्पनकी सिगाम चौड़ाईकी अनुपाती होती ह । कम्पन की जाग सिगामकी चौड़ाईका आवृत्तिपर कोई असर नहीं पड़ता । अर्थात् द्विभुज जितना नाटा और माटा हागा, इसकी आवृत्ति उतनी ही अधिक होगी । आ० ७ में कम्पन की सिगामे चौड़ाई क और लम्बाई ल सिगामो गयी ह ।

(४) परदा (जैम, घमड़ना)—

(क) चौगूटा परदा—परदेकी लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई या घनत्व बढ़ता है तो आवृत्ति घटता ह और जब तनावका जोर बढ़ता ह तो आवृत्ति भी बढ़ता ह ।

(ग) गाल परदा—व्यास घनत्व या मोटाई बढ़नेमें आवृत्ति घटती ह और तनाव बढ़नेमें आवृत्ति बढ़ती ह ।



आवृत्ति ७

(५) चदरा (जैसे पीतलका)—

धीमे चदरम लम्बाई चौड़ाई बढनसे और गाल चदरम न्यास बढनसे आवृत्ति घटती है और माटाई बढनसे आवृत्ति बढता है ।

(६) घण्टी—

गाल चदरकी तरह हा घण्टीकी दीवारकी मोटाई बढनसे आवृत्ति बढती है और मुँहकी गालाईका न्यास बढनसे आवृत्ति घटती है ।



आवृत्ति c

(७) वायु (जैसे बाँसुराकी नलीके भीतरका वायु)—

अवच्छिन्न वायु या गसकी लम्बाई बढनेसे आवृत्ति घटती है और उसमें ध्वनिका दग बढनेसे आवृत्ति बढती है ।

३ तरंग और वेग

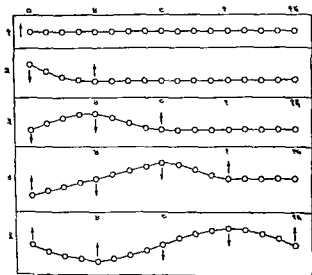
१३ जब किसी वस्तुमें कम्पन होता है तो उससे चारा ओरकी वायुमें एक प्रकारका आन्दोलन पैदा हो जाता है। यह आन्दोलन वायुमें घण्टलाकार होकर फैलता और हमारे कानोंके छिद्रसे होकर भीतरके परदेके कम्पित कर देता है। इस आन्दोलनका प्रसार तरंगके रूपमें होता है, ठीक उसी तरह जैसे जलके ऊपरी तलवा कहा बीचमें हिला देनपर चारा धार छोटी छोटी गहरों फल जाती है।

बड़े तरंग या लहरके रूपसे तो सभी को परिचित है। पर वह कम्पनसे किस पैदा होता है यह जाननेकी बात है। जलकी तरंग रागिकी हम प्रायः देखा करते हैं। कहीं हम बड़े बड़े समुद्री डूँडोंका देखकर डरते हैं और कहीं गात नदीके किनारे छोटा छोटा लहराकी श्रेणी देखकर प्रसन्न होते हैं। ये गहरें कभी हमारा धार दौड़ती हुई नजर आती हैं कभी दूर भागती हुई मालूम पड़ती हैं। पर ध्यानसे दृश्यपर पता चलगा कि आन्दोलनके कारण जलका कोई छण्ड टूटकर हमारी धार नहीं आता। जलका छण्डसे छोटा छण्ड भी अपना स्थान नहीं छोड़ता। वह अपने स्थानपर ही ऊपर-नीचे हिलकर अपने आगेके छण्डका आन्दोलित कर देता है। इस प्रकार आन्दोलन धीरे धीरे फैलता और फैलता जाता है। जलके ऊपर हलके काटवा कोई टुकड़ा खराना है, तो यह प्रत्यक्ष ही जायगा कि जब उस टुकड़ेकी तरंग पार करनी है तो वह तरंगके साथ साथ ऊपर नीचे हिलता है। हर धानके खेतकी मेंढर पर खड हाकर देता—बाके मामूली शक्तिमें एक लहर मा चलनी हुई दीग्य पडगा। लहरके साथ कोई पौधा नहीं चलता। तरंग पौधेका सिरा, तबके बाद एक झुकता जाना है। गिरेके इस प्रकार नियमित अंतरपर झुकनसे ही लहर बनता है जा

चलती हुई मालूम पड़ती है। इस तरह अनक दृष्टांत दिये जा सकते हैं जिनसे तरंगका फलना स्पष्ट होता है।

मतलब यह कि जब किसी माध्यमका प्रत्येक खण्ड या कण, एकके बाद दूसरा, कम्पित होता है तो यही कम्पन या आन्दोलन तरंगका रूप लेकर आगे फलता है।

१४ जा० ९ में तरंग निर्माणकी प्रक्रिया बतायी गयी है। इस समस्याको स्थल रूप देनेके लिए पहली पवित्रम जलके ऊपरी तलके १७ कण दिखाये गये हैं। कणापर क्रमानुसार ०, ८, ८, १२ और

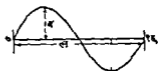


आकृति ९

१६ के अंक लगा दिये गये हैं। शून्य अंकवाला कण दोलककी गोलीकी तरह कम्पित होता है और इस प्रकार अपने कम्पनसे तरंग पदा करता है। पहला पवित्रमें सभी कण एक समतलमें हैं। दूसरी पवित्रमें कण ० अपने पूरे विस्तार तक पहुँच गया है। कण ० के साथ लगे हुए कणाकी श्रेणी भी

इसके साथ ही साथ ऊपरकी खिंच आयी है। इस खिंचावका असर कण ४ तक पहुँच गया है जो ऊपर चलनेका तयार है। गतिकी दिशा तीरस बतायी गयी है। जितन समयक कण ० ऊपर तक पहुँचा उतने समयमें इसके खिंचावका असर कण ४ तक पहुँच गया। तीसरी पंक्तिमें जब कण ० लौट कर फिर अपने पहल समतलके स्थानपर पहुँचता है तो कण ४, पहले खिंचावके कारण, अपन पूरे विस्तार तक जाता है। यहापर जब कण ० के साथ ० जोर ४ के बीचवाल कण आगे पीछे नीचेकी ओर चल वस ही कण ८ के साथ ४ और ८ के बीचवाल कण ऊपरकी खिंच आये जोर इस खिंचावका असर कण ८ तक पहुँच गया। चौथी पंक्तिमें कण ० नीचेकी ओर अपन विस्तारके अन्तमें पहुँच गया है। इतन समयमें ४ पहलके समतलमें और ८ ऊपरकी ओर अपने विस्तारके अन्तमें पहुँचा है। ८ के खिंचावका असर १२ पर पता जा अब ऊपरकी ओर विचलित हो रहा है। पाँचवा पंक्तिमें ० अपन पहलके समतलमें ठीक आरम्भकी दशामें पहुँच गया है। इस समय ४ नीचेकी ओर अपन विस्तारके अन्तमें, ८ समतलमें और १२ ऊपरकी ओर अपने विस्तारके अन्तमें पहुँचा है। १२ के खिंचावका असर अब १६ पर पड रहा है। १६ अब ठीक उसी तरह ऊपरकी जायगा जिस तरह ० कण। दानाकी दशा एक है।

पाँचवा पंक्तिपर ध्यान देना पता चलता है कि जितना समयक कण ० ने एक पूरा चक्कर समाप्त किया उतन समयमें जा-दोला कण १६ तक पहुँच गया और बीचके सार कणाका एक चक्र बन गया। ऊपरकी तरफ अब समय न रहा — ० से १६ तकका आधा नीचेकी घँस गया और आधा ऊपरकी उभर आया (आ० १०)। इस



आवृत्ति १०

प्रकार एक साल और एक उभारस बन हुए ० से १६ तकके मार चक्रका एक तरंग कहते हैं। इसकी सीधी लम्बाई 'λ' का तरंगमान कहते हैं।

मनतसे उभारकी ऊँचाई या ग्यालकी गहराई 'व' का तरंगविस्तार कहते हैं।

आकृति ९ की मारी पविनधाको ल्यनेसे पता चलेगा कि कण० क एध कम्पनमें एक पूरा तरंग बन गया और आ दोलन तरंगमान ल दूरी तक पहुँच गया। अब ० क दूसरे कम्पनके साथ साथ १६ का पहला कम्पन गुरु हागा और बद्ध अपने एक कम्पनमें अपने आगे पहल जसी ही तरंग बना दगा। अर्थात् ० क दो कम्पनमें दो तरंग बनेंगी और आन्दोलन $२ \times$ ल तक पहुँच जायगा। इस प्रकार यदि कण० १ सेकण्डम १० कम्पन पूरा करता ह तो आन्दोलन, तलक ऊपर एक मण्डम १० तक पहुँचना ह। एक मण्डम तरंग जितनी दूर चलती ह वही उमका वेग माना जाता ह। मान ला कि हम कण० क ऊपर कम्पिन द्विभुजकी एक भुजा रखते ह जिसका आवृत्ति आ' है। द्विभुजका प्रेरणाम कण० म १ सेकण्डमें 'आ' कम्पन हाग और आन्दोलन एक सेकण्डमें $ज \times$ ल तक पहुँचगा। यही तरंगका वेग हुआ अर्थात् आवृत्ति और तरंगमान मालूम हो ता तरंगका वेग आसाणीम निकाला जा सकता ह। जैसे—

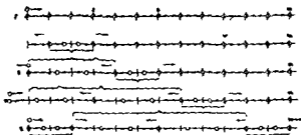
$$व = आ \times ल।$$

(०)

१५ ऊपर जलकी तरंगकी चचा की गयो ह। पर वायुकी तरंगम एक विलक्षणता ह। जल्के अणु एक-दूसरमे प्राय चिपके हुए हात ह। इसलिए जब एक अणु ऊपर उठता ह तो उसके अगल-बगलके अणु भी उसक साथ बँधे-स ऊपरका खिच आते ह। पर वायु मा कितना भी गैसके अणु एक दूसरेसे स्वतंत्र हाते हैं। इसलिए जल्के अणुकी तरह ऊपर उठकर ये अपने अगल बगलके अणुआका विचलित नही कर सकत। य तो अपने सामनेक अणुकी धक्का मारकर ही आन्दोलनका आगे बढ़ा सकते ह। इसलिए जहाँ जलकी तरंगकी दिशा इसक अणुआके कम्पनका दिशाक साथ समकोण बनाती ह अर्थात् आडी होती ह वहाँ वायु या गैसकी तरंगकी दिशा अणुआक कम्पनकी दिशामें ही हाता है। इस प्रकार, तारके कम्पनकी तरह ही तरंग भी दो प्रकारकी हाती ह। पहली

अनुप्रस्थ तरंग और दूरगती अनुदध्य तरंग । ऊपर व विचारसे यह स्पष्ट है कि गमामें बसल अनुदध्य तरंग पत्ता की जा सकती है, किन्तु द्रव या ठोसमें दोना ही प्रकारकी तरंगें पत्ता हो सकती हैं ।

१६ वायव्य अणुके सम्पन्नसे अनुदध्य तरंग वैसे पदा होता है, यह आ० ११ में बताया गया है । एक सीधी रेखामें १३ अणुआक स्थान



आकृति ११

सही रखा-जामे चिह्नित किया गया है । दो अणुआके बीचकी दूरी, दो वि-अणु द्वारा तीन बराबर हिस्सामें बांटी गयी है । पद-ओ पक्षिमें सभी अणु अपन अपन स्थानपर हैं । दूरगती पक्षिमें अणु ० क्षणिक हावर अपने विस्तारक अंत तक पहुँचना है, जो दो अणुआक बीचके अंतरक बराबरमान लिया गया है । अणु ० अपन आगेके अणुका धक्का देकर क्षणिक वर देता है और दूर प्रकार सम्पन्न आग करता है । यह सम्पन्न आगक अणुआमें क्रमशः कुछ समयक अंतरक पहुँचना है । इसलिये जिस समय अणु ० अपन पूरे विस्तारपर पहुँचना है उस समय अणु १ अपने आगे दूरगति बिन्दुपर, और अणु २ बिन्दु १ पर पहुँचता है । अणु ३ चलनका तयार है, अर्थात् अणु ० व सम्पन्नका अंतर अब अणु ३ तक पहुँच गया । दूरगती पक्षिका पत्ताक गाय दयनग पत्ता चलगा कि ० ग ३ तकक अणु तक-दूरगक पाग आ गया है । अणुआके इस प्रकार पाग-पाग जा जानस सम्पन्नता पत्ता होता है । सामग पक्षिमें, जब अणु ० अपन पत्त स्थानपर पहुँचता है तो

'सघनता' की दशा ३ से ६ तक पहुँचती है। अब तीसरी पक्तिवा पहलोक के साथ दखनेपर मालूम होगा कि ० और ३ क बीचक अणु एक-दूसरेसे दूर-दूरपर है। इस प्रकार यहाँ 'विरलता' पैदा हो गया है। चौथी पक्तिमें 'सघनता' ६ स ९ तक पहुँची है और 'विरलता' ० स ६ तक। पाचवी पक्तिमें सघनता ० स १२ तक और विरलता ३ से ९ तक फल गयी है। इस प्रकार ० के एक पूरे कम्पनमें सघनता १२ तक पहुँच गयी और अणु १२ अब ठीक ० की दशामें कम्पन आरम्भ करनेको तयार है। इससे आगे ० दूमरी सघनता और १२ अपना पहली सघनता पटा करण।

पाँचवी पक्तिमें यह स्पष्ट है कि सघनताक पाछ विरलता ल्या रहती है। इस एक सघनता और एक विरलताको मिलाकर एक अनुन्ध्य तरंग मानो जाती है—ठीक उमी प्रकार जैसे एक उभार और एक ग्वाल मिलाकर एक अनुप्रस्थ तरंग बनती है। यदि सघनताकी मात्राको उभारमें और विरलताकी मात्राको ग्वाल प्रकट करें तो दाना प्रकारकी तरंगें एक ही रूप ल लेती है। इसलिए अनुदैध्य तरंग भी आ० १० क वक्रस ही प्रकट हो जा सकती है। यहाँपर एक सघनता आर एक विरलताक भागकी दूरी तो तरंगमान हागी और पहली पक्ति (आ० ११) की अपना अन्तिम सघनता जितनी अधिक होगी वही तरंग विस्तार होगी।

अनुप्रस्थ तरंगकी तरह ही, अगर तरंगमान मालूम हो और अणुवाकी आवृत्ति मालूम हो तो अनुन्ध्य तरंगका वग भी निकाला जा सकता है।

१७ अनुच्छेद ११ में आवृत्तिका सम्बन्ध वस्तुक आकार-प्रकारके साथ लिखाया गया है और यहाँ आवृत्तिका सम्बन्ध तरंगवग और तरंग मानक साथ लिखाया गया है। विचार करनेपर पता चलेगा कि इन दोनों बातोंमें कोई भेद नहीं है। उदाहरणक लिए तारका आवृत्तिका लें। यह बताया जा चुका है कि तारकी आवृत्ति उसकी लम्बाई, लिंबाव और तीर-पर निर्भर है। मग लम्बाईका सम्बन्ध तरंगमानस है और लिंबाव और तीरका सम्बन्ध तरंगवगस है। लिंबाव जितना अधिक और तीर जितना

कम होगा, तारमें अनुप्रस्थ तरंगका घग उतना ही अधिक हागा । इसी प्रकार ङण्डेमें उसके स्थिति स्थापकत्व और घनत्वक अनुसार अनुदध्य तरंगका घग घटता-बढना ह । वायुमें तरंगका वेग वायुका दाब बढनेसे बढता ह और घनत्व बढनेसे घटता ह । मनलब यह कि अनुच्छ ११ में हर एक वस्तुकी आवृत्ति निकालनेके लिए जिन जिन माप-सौलाकी आवश्यकता है वे दो भागमें बाँट जा सकते ह । पहला भाग तो स्थिति स्थापकत्व, घनत्व आदि भौतिक गुणाका ह जिसका सम्बन्ध घगस ह और दूसरा भाग आकारक मापका जस लम्बाई, चौडाई व्यास आदि जिनका सम्बन्ध तरंग मानसे ह ।

१८ किसी वस्तुमें घनत्व आदि निश्चित और स्वाभाविक गुण ह, इसलिए उस वस्तुमें ध्वनिका घग भी निश्चित ह । ङण्डे और चर्रमें, स्थिति-स्थापकत्व उनक अणुआके आपसक तिचावपर निर्भर ह । तार और परदमें यह क्षिपाय कृत्रिम बल लगाकर पदा किया जाना है । इसलिए इस कृत्रिम तिचावका यदि बदला न जाय ता यह भी स्वाभाविक गुणकी कोटिम ही डाला जा सकता ह । इस प्रकार, यह मानना पडता ह कि किसी वस्तुमें ध्वनिका एक घघा हुआ घग होता ह जा उसकी स्वाभाविक दगाआपर निर्भर ह । अब यदि वस्तुकी लम्बाई आदि आकारक मानको बलें तो यह सिद्ध ह कि उस वस्तुकी आवृत्ति बल जायगी । और यदि आकारको भी निश्चित कर दें ता उस वस्तुकी एक अपना आवृत्ति होगी जो उस वस्तुक लिए स्वाभाविक गमशी जायेगी । हम ही वस्तुकी सहज आवृत्ति' कहत ह । अनुच्छ ११ में जा आवृत्तिकी गणना या सम्बन्ध बनाया गया ह वह अराममें सहज आवृत्ति'की ही गणना ह । क्याकि प्रेरणाके द्वारा किसी वस्तुमें कोई भी आवृत्ति पना की जा सकती ह (अनुच्छ ३६) जिनका सम्बन्ध वस्तुकी दगाआसे नहीं ह ।

१९ घनत्व या घगमें ध्वनिका संघार अनुप्रस्थ तरंगक द्वारा ही हाता ह । इस तरंगका घग माध्यम (जिनमें होकर ध्वनि चलती ह) क

स्थिति-स्थापकत्व और घनत्व—युक्त ही दा गुणासे बढ़ा होता है। इसलिए जबकि इन दो गुणों में कोई अंतर नहीं पड़ता तब भी माध्यम में ध्वनिका वेग निश्चित होता है। भिन्न भिन्न द्रव्यों में ध्वनि वेगका मान विज्ञानिकाने अनेक प्रयोगों से निकाला है। उन प्रयोगोंका परिणाम कुछ सामान्य द्रव्योंके लिए, नीचे दिया गया है।

सारिणी १

द्रव्य	तापक्रम	वेग
वायु	०° (डिग्री सेंटीग्रेड)	१०८७ } फुट प्रति
हाइड्रोजन	०°	४१६३ } सकण्ड
जल	१५°	४७१४
तीखा	२०°	११६७०
सीसा	२०°	१६८२०
लकड़ो, ओक (आंशिक साय)	१०°-२०°	१२६२०
काँच	१०°-२०°	१६४०० १९७००,,

इन माग्णिकोंके दत्तनसे पता चलता है कि ध्वनिका वेग गैसोंकी अपेक्षा द्रवोंमें अधिक और द्रवोंकी अपेक्षा घनत्व अधिक होता है। हाइड्रोजनका घनत्व वायुम कम होता है इसलिए इसमें ध्वनिका वेग बढ़ जाता है। द्रव या घनत्व के घनत्व के गुणासे अधिक होता है इसलिए इनमें वेग घटना चाहिए। साथ ही-साथ इनका स्थिति-स्थापकत्व के गुणासे बहुत ज्यादा होता है इसलिए वेग बढ़ना चाहिए। पर पहले कारणसे वेगमें उतनी कमी नहीं होती जितना दूसरे कारणसे वेगमें वृद्धि होता है। इसलिए दाना मिलकर घन और द्रवोंके तरंगका वेग गैसोंकी अपेक्षा बहुत अधिक हो जाता है।

ऊपरकी सारिणीमें वेग निश्चित तापक्रमपर बताया गया है। यह इस

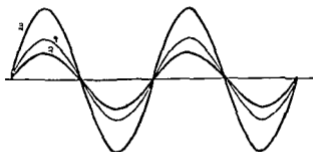
लिए कि माध्यमका तापक्रम बदलनेसे वेगमें भी अंतर आ जाता है, क्योंकि तापक्रमका असर स्थिति-स्थापकत्व और घनत्व, दोनों ही पर पड़ता है। तापक्रम या गरमी बढ़नेसे गैसमें ध्वनिका वेग बढ़ जाता है। वायुमें हर एक डिग्रीकी बढ़तीपर वेग लगभग २ फुट प्रतिसेकण्ड बढ़ जाता है। घना में प्रायः तापक्रम बढ़नेसे वेग घटता है। किंतु लौह और चाँदीमें २०° से १००° तक तापक्रम बढ़ना है और १००° से २००° तक बीच और घनाकी तरह घटता है।



४ तरंग-संयोग और स्थावर तरंग



२० किसी माध्यम में दो तरंग एक ही साथ और एक ही मागसे एक दूसरेके ऊपर चलें तो माध्यमका हर एक कण दोनों ही तरंगों-द्वारा विचलित होगा। ऐसे कणोंका विस्तार अलग अलग दोनों तरंगोंके कारण

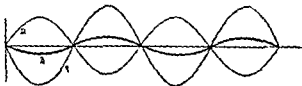


आकृति १२ (१)

का विस्तारक मान हागे, उहीके योगसे बनेगा। जब प्रत्येक कणका विस्तार इन दोनों तरंगोंके प्रभावसे बदल जायेगा तो एक नयी तरंग तयार हागी और पहलकी दोनों तरंगोंका अस्तित्व इस नयी तरंगमें ही लुप्त हो जायेगा।

आ० १२ (१) में दो तरंगें एकके ऊपर एक दिखायी गयी हैं। इनमें तरंग २ का विस्तार तरंग १ के विस्तारसे आधा है और दोनोंका तरंग मान बराबर है। दोनों तरंगें माध्यममें इस दशामें चल रही हैं कि एककी उभार दूसरेकी उभारपर और एककी खाल दूसरेकी खालपर पडती है। जब दोनोंकी उभार एक साथ माध्यमके किसी कणका ऊपर खीचेगी तो उस कणका विस्तार ऊपरकी दिशामें तरंग १ के विस्तारका डगुना हो जायेगा। यही दशा खालका भी हागी। दूसरे कणका नया विस्तार भी

इसा तरह बनगा। इस प्रकार तरंग ३ बनती है जिसका तरंगमान ता पन्ने ही जमा है पर विस्तार तरंग १ से डबोडा है।



आकृति १२ (२)

तरंग १ और तरंग २ माध्यम में एसी दशा में भी चल सकती है कि एककी उभार दूसरकी छात्रपर और एककी छाल दूसरकी उभारपर पड़े। एसी दशा में माध्यमक बिना कणकी जिन समय तरंग १ की उभार उपर खींच रही है उस समय तरंग २ की छाल उस नीचे खींच रही है। अब चकि तरंग २ का विस्तार तरंग १ के विस्तारका आधा है इसलिए कणका विस्तार तरंग १ के विस्तारका आधा रहे जायगा। अब दाना तरंगक स्यागस तरंग ३ बन जायगा [आ० १२ (२)] जिसका तरंगमान ता पन्ने ही जसा रहेगा पर विस्तार तरंग १ का आधा हागा।

अगर माध्यम में दास अधिक तरंग चलन है तो ये मार तरंग मिल कर एक एमा तरंग बनायग जिसका विस्तार इन तरंगके विस्ताराका जोड़ घटा कर निकाला जा सकता है।

२१ जब कई तरंगों में मिला एक नया तरंग बन जाती है तो जिन समय हम किसी तरंगका अनुभव करते हैं उस समय यह बस कहा जा सकता है कि क्या दूसर तरंगक मालस नहीं बनी है? हम ऐसी अनेक तरंगकी कल्पना कर सकते हैं जिनके विस्तारका जोड़ घटा कर अनुभूत तरंग तयार का जा सकती है। मन्ल्ब यह कि जग अनेक तरंगका अस्तित्व माध्यम में उनसे कभी तरंग बनगी यह जाना जा सकता है बस ही, इसके उलटा, अगर बिना तरंगका अस्तित्व मालूम है तो वह किन किन

तरंग संयोग और स्थावर तरंग

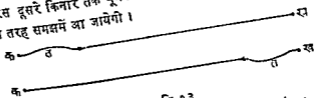
तरंगसे बन सकता है यह भी मालूम किया जा सकता है। इनमें पहला तरंगका 'मदलेपण' हुआ और दूसरा तरंगका 'विदलेपण'।

आ० १२ में दोनों तरंगों बराबर तरंगमानकी ली गयी है। किंतु यदि हमने तरंगके संयोगका नियम समय लिया है तो चाहे तरंगों किसी भी मानकी हा या किसी भी दशामें हा, उनका संयोग आसानीसे निकाला जा सकता है।

आ० १२ (०) में यदि दाना ही तरंगको बराबर विस्तारका मानें तो एककी उभार और दूसरेकी खाल मिलकर शून्य हो जायेगा। परिणाम यह होगा कि माध्यम दो तरंगका संचार होते हुए भी माध्यम शांत रहेगा। यह दशा केवल काल्पनिक नहीं है। अनेक प्रयोगोंसे इस दशाके अस्तित्वकी प्रमाणित किया गया है।

२२ अगर माध्यम दूर तक फला हुआ हो तो उसमें तरंग प्रतिक्षण जाने लगती हुई नजर आयेगी और यदि तरंगका ग्राहक जस कान, और प्रेषक जसे त्रिभुज, माध्यमके भीतर ही हा तो ग्राहकपर इस बढ़ती हुई तरंगकी गतिका हा असर होगा। इस प्रकारकी तरंगको 'जगम तरंग' कहते हैं। इसी तरंगके द्वारा हम ध्वनि सुनते हैं।

जब माध्यम छोटा और सीमित होता है जमे लोहेका छोटा डण्डा या बांसुरी, तो तरंग एक किनारेमे दूसरे किनारेपर पहुँचकर वहासे लौटती है और फिर पहले किनारेपर पहुँचकर लौटती है। इस प्रकार तरंग एक किनारस दूसरे किनारे तक घूमनी रहती है। रस्सीके दृष्टांतसे यह बात अच्छी तरह समझमें आ जायेगी।



आकृति १३

किसी पतली रस्सीका एक छोर खूंटो ख म बाँध दो (आ० १३) और दूसरे छोरका हाथमें पकड़ो जिसमें रस्सी तनी रहे। अब हाथ

हिलाकर रस्सीम उभार पदा कर ल। यह उभार ख तक जायेगी और वहाँसे परावर्तित हाकर उल्ट जायगा और खालके रूपम क की ओर जावगी। इस स्थूल प्रयोगसे तरंगरा परावर्तन या लोटना मालूम होता ह।



आकृति १४

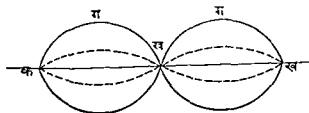
इस सूक्ष्म बनानके लिए रस्सीकी जगह रेशमका पतला धागा लो और हाथकी जगह द्विभुजका एक भुजा लगा दा जिसका कम्पन धागेके आडे हो। धागेका खिचाव और लम्बाई ऐसी रखा कि द्विभुजके एक कम्पनक समय म तरंग दूमरे छोरसे लोटकर द्विभुजके पास पहुच जाये। अब धागेमें बड़ी गौघ्रतासे तरंगका संचार हागा और धाड समयम ही धागेम आ० १४ की तरह कम्पन होने लगगा जिसका रूप ठीक ठीक आ० १ में दिये हुए तारक कम्पन मराखा ह। इसमें नीचे ऊपरकी खणित रखाएँ भिन्न भिन्न समय पर धागकी स्थिति बताता है।

इस तरंगको, जा आग बढ़ता हुई नही मालूम पडती, स्थावर-तरंग कहन ह। बबरन पहल-पहल रस्साक साथ प्रयोग करके स्थावर तरंगका अध्ययन किया था। पाछ मल्लाज्जन पतले रंगमा धागे और द्विभुजका उपयाग करके स्थावर तरंगके सम्बन्धम बड ही राचक प्रमाण किये। फिर टिण्डलन रंगमा धागकी जगह विजलीका धारासे गरम किये हुए प्लटिनमक तारसे मल्लाज्जक सार प्रयोगका किया। स्थावर तरंगक कारण जो माध्यममें क्रिया हाता ह उसको कई विगपताए ह। पहली तो यह कि इसमें माध्यमक कुछ बिन्दु या स्थान अचल हात ह जस क, और ख, (आ० १४)। इन स्थानाको श्रिय या गाँठ' कहत ह। इसी प्रकार कुछ बिन्दु ऐस हात ह जिनका विस्तार सभा स्थानासे अधिक हाता ह, जैसे ग बिन्दु।

इन स्थानांको 'प्रतिग्रथिय या फंदा' कहते हैं। दूसरी यह कि प्रतिग्रथियके गना आर हर बिन्दुका विस्तार नियमित रूपमें घटता जाता है जा ग्रथिय तक पहुँचते-पहुँचते गूँथ हा जाता है। तीसरी यह कि सभी बिन्दुओंकी आवृत्ति समान होती है।

अब यह समझना आसान है कि तार आदि जिन वस्तुजामें कम्पन होता है उसका कारण यह स्थावर तरंग ही है। जब हम तारको बीचमें छूँते हैं तो बीचके बिन्दुमें दाना आर तरंगें चलती हैं और ये दोनों तरंग दाना बंधे हुए छोरस उलट कर लौटते हैं। ये बीचमें एक-दूसरेको पार कर फिर अपनी अपनी गहपर चल दते हैं। इसीसे कम्पन पैदा होता है। बीचमें, जहाँ गना तरंगें आपसमें मिलती हैं वहाँ सबसे अधिक विस्तारवाली प्रतिग्रथिय बनती है। यह तरंग संयोगक नियमसे स्पष्ट है। (अनुच्छेद २०)।

ऊपरके द्विभुजकी से दूनी आवृत्तिवाले द्विभुजक द्वारा भा आ० १४ क धारणमें स्थावर-तरंग पैदा की जा सकती है। पर इस धार एक नयी बात पदा हो जायेगी।



आकृति १५

पहल बनाया जा चुका है कि जितने समयमें द्विभुज एक कम्पन पैदा करता है, उतने समयमें तरंग दूसरे छोरस लौटकर द्विभुज तक पहुँच जाता है। इस धार द्विभुजकी आवृत्ति दूनी है। इसलिए जितने समयमें द्विभुज एक कम्पन पूरा करता है उतने समयमें तरंग दूसरे छोर तक पहुँचती है,

क्याकि तरंगवग पल्ल-जमा ही ह । जिस समय पल्लो तरंग दूरके छारस लौटती ह उस समय द्विभुजस दूसरा तरंग निकलती ह । अब ये दोना तरंगे ठीक बीचमें एक दूसरसे मिलेंगे । किन्तु जस आ० १३ में बताया गया है, पहली तरंग खालकी दगाम होगी तो दूसरा उभारकी दगामें, क्याकि पहली तरंग दूसर छोरस उलट बर लौटी ह । इस प्रकार एककी खाल दूसरेका उभारस मिलकर सम हो जायेंगे क्याकि दोनाका विस्तार बराबर ह (अनुच्छेद २१) और बीचम दाना छारको तरह ही एक ओर ग्रिय बन जायगी । बीचकी ग्रियक कारण घागा न बराबर सणाम सम्पित हागा जसा कि आ० ११ म लिखाया गया ह । इन दाना सणामकी आवृत्ति अब दूना अयात इस दूसर द्विभुजके बराबर हा जायेंगे क्याकि बम्पवाल सण्डकी लम्बाय बाधा हा गया (अनुच्छेद १२) । इसी प्रकार तिगुनी आवृत्तिरा द्विभुज छवर घागेका तीन सण्डामें विभक्त किया जा सकता ह जिसम दा अन्तिम ग्रिययाको छाट, दा ग्रियया और वाचमें बन जायेंगी ।

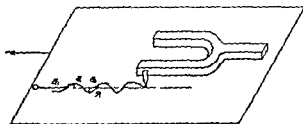
यहाँ यह जान लेना आवश्यक ह कि ग्रिय पूरी तरह अचल या निरपद नही हाती । उममें कुछ न-बुछ स्पन्द हाता ही ह । कवल इसका मान माध्यमक और विन्दुआकी श्रयणा बहुत ही कम होता ह ।

ऊपरका विवचनास यह बात मानूम होती ह कि एक आगे जाती हुई ओर दूसर परावर्तित हाकर लौटता हुई तरंगाक सयागस बना हुआ स्यावर तरंग बम्बुम बम्पन पन करता ह और इस प्रकार एक सीमित माध्यमकी स्यावर-तरंग दूसर निम्नत माध्यम जस वायु आन्निमें जगम तरंग पदा बर दती ह जा अगर हमारी ओर आव ता हमारे कानाके परदाको विचलित करता ह ।

५ ध्वनिवक्र और उनका विश्लेषण

०

२३ द्विभुजकी एक भुजाके छारपर एक हलका सूई ऐसा बिपकाजा कि यह भुजाके कम्पनका दिशा और भुजा दोनोंके साथ समकोण बनाती हो।



आकृति १६

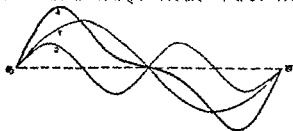
एक नाँचकी चौड़ी पटरीपर कालिब जमाआ और उसपर कापते हुए द्विभुज की नोकको इस प्रकार रखो कि सूई पटरीपर खड़ी पड़े। यह देख पड़ेगा कि नाँचकी घालके कारण कालिबपर एक आड़ी ग्वा खिच जाती है। अगर द्विभुजक कम्पन न होना ता पटरीपर सिर्फ बिन्दुका निगान पड़ता। जिस समय द्विभुज काँप रहा है उसी समय पटरीका भा आ० १६ में दिखायी हुई दिशामें बराबर बगसे सरकाआ। अब यह देख पड़ेगा कि पटरीका कालिबपर तरंगकी तरह एक निगान पड़ गया है। सूईकी नोकके द्वारा खिचे हुए इस चक्रपर ध्यान दो। मान लो कि ० रेखा नाँच हाकर उस समय खींची गयी है जब द्विभुज स्थिर था। चक्रका देखकर यह समझना आसान है कि क स क तकका चक्र सूईकी नोक या द्विभुजके एक पूर कम्पनस बना है, और रखासे घ की ऊँचाइका मान द्विभुजका कम्पनविस्तार है। अगर पटरीके सरकनेका वेग ठीक ठीक नाप सकें तो यह हिसाब

लगाया जा सकता है कि क स व' तक सरसवय कितना समय लगा । यही द्विभुजके कम्पनका काल होगा । काल मालम होनेसे द्विभुजकी आवृत्ति आसानाम निम्नान्ने जा सकती है (अनु०) ।

मूर्ईकी नाकका कम्पन द्विभुजक कम्पनक साथ बीर ठीक उसीकी तरह हाता है और यह नोक अपन कम्पनस वक्र बनाता है । इसीलिए द्विभुजके कम्पनके साथ बरफा इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि उसकी सारी विशेषणाएँ वक्रम जाती जा मरती हैं । अगर द्विभुजके कम्पनमें कोई "याघात" पड जाये, त्रिमा कारणम वाई जनर आ जाय ता वह ज्याका त्या वक्रम प्रकट हो जायगा । इसलिए यह वक्र द्विभुजके कम्पनका मच्छी रूपरता है ।

द्विभुजन वक्रकी तरह ही नाद पना करनेवाले सभी वस्तुओके जनक विधिभासे वक्र खीचे जा सकन है । हरक वस्तुका वक्र उसके कम्पनका रेखा चित्र है और हर वक्रमें वस्तुन कम्पनका विशेषना मौजूद रहता है । गाय-ही साथ एक वस्तुका वक्र दूसरा वस्तुक वक्रम भिन्न होता है ।

२४ य सार वक्र इतन सरस नहो गने जितना कि आ० १६ में त्रियाया गया है । यनीतक कि द्विभुजका भा मच्छा वक्र दिये हुए वक्रमे कुछ भिन्न होना है । इन वक्राके भेद और जटिलताका कारण तारके कम्पनपर ध्यान दनम समझमें आ सकता है । अगर तार एक लण्डम काँप रहा



आकृति १७

तो तो उसमें त्रिमा भा बिन्दुन कम्पनका वक्र आ० १७ के वक्र १ सरागा होगा । अगर वह आ० १५ का तरह दो लण्डमों काँपता है ता उस

बिंदुका कम्पन-वक्र ऊपर दिखाये हुए वक्र २ सरोखा होगा। पर जब तार में ये दोना कम्पन साथ साथ हो तो दोनाक संयोगस बना हुआ कम्पन (अनुच्छेद २०) वक्र ३ से मिलते-जुलते वक्रसे प्रकट किया जायेगा। अगर तार ३ खण्डामें भी काँपता हा तो संयोजित वक्र ३ का रूप और भी बदल जायेगा। इस प्रकार तारके एन खण्डवाले कम्पनके साथ अधिकसे अधिक खण्डवाल कम्पन जितने मिलत जायेंगे इसके कम्पन-वक्रका रूप उतना ही बदलता जायेगा।

यह अनुभव सिद्ध ह कि जब तारम कम्पन होता ह तो वह एक ही खण्डम नहीं होता। २ खण्ड, ३ खण्ड ४ खण्ड आदि कम्पनके जितने ढग ह तारम ये सारे साथ ही साथ चलते ह। परिणाम यह हाता ह कि तारका असल कम्पन एक-खण्डी कम्पनस बहुत बदल जाता ह। ऊपर केवल दो कम्पन लेकर परिणाम दिखाया गया ह। कम्पनक इस अंतिम रूपपर भिन्न भिन्न कम्पनके विस्तारका भी असर हाता ह। इतना ही नहीं। तरपमान, विस्तार आदि बराबर रहनपर भी अगर एक तरग दूसरेकी अपेगा घाडी खिसकी हुई हो अर्थात् थोडा आगे पोछे हा, तो भी रूप बदल जाता ह। आ० १७ म वक्र २ को सिफ बायी ओर थोडा खिसका दें इतनेम वक्र ३ का आकार बदल जायेगा। अभी ता वक्र १ और वक्र २ एक ही स्थानसे शुरू होते ह। अर्थात् दोना एक ही कलामे ह। एक वक्रका गिसका देनेस कलामें अतर जा जाता ह। इस कला भेदसे भी वक्र बदल जाता ह अर्थात् किमी तारके कम्पनके अनेक रूप हो सकते ह।

२५ यह बताया जा चुका ह कि जब तार दो खण्डामें काँपता है तो इसकी आवृत्ति एक खण्डी कम्पनकी आवृत्तिसे दूनी हो जाती ह। इसी प्रकार तीन खण्डी कम्पनकी आवृत्ति तिगुनी और चार खण्डी कम्पनकी चौगुनी होती ह। आ० १७ से यह मालूम होता ह कि वक्र ३ का काल वक्र १ के कालके बराबर ही ह। इसलिए इस संयोजित कम्पनकी आवृत्ति वही होगी जो एक-खण्डी कम्पनकी ह। पर इस वक्रका विश्लेषण

उपस्वर अनावर्तक होते हैं अर्थात् उनके उपस्वराकी आवृत्तियामें एसा सरल सम्बन्ध या अनुपात नहीं होता। तुलनाके लिए नीचे तीन नादोत्पादक वस्तुआवृत्ति आशिकाका आवृत्तियाँ दी जाती हैं।

सारिणी २

नादोत्पादक	मौलिक	उपस्वर			
		१	२	३	४
तार } वायु }	२५६	५१२	७६८	१०२४	१२८०
चमत्क परदा	२५६	४०९६	५३७६	५८८८	६९१२
द्विभुज	२५६	१६००	—	—	—

इस सारिणीसे यह पता चलता है कि तार और वायुके उपस्वर आवृत्तक ह क्योंकि इनका अनुपात १ २ ३ ४ ५ है। पर चमत्क परदेके उपस्वर अनावृत्तक ह क्योंकि इनका अनुपात १ १६ २१ २३ २७ है। इसी प्रकार द्विभुजका उपस्वर भी अनावृत्तक है।

उपर, ध्वनिवक्र सीधकर उनका गणित या विश्लेषक यंत्र-द्वारा विश्लेषण करके उपस्वराना पता लगानकी विधि बताया गया है। पर ऐम भी अनेक उपकरण ह जिनके द्वारा बिना ध्वनि-वक्र ही, सीधे ध्वनिस उपस्वर पकड़ जा सकते हैं। इनमें सबसे पहला उपकरण हेल्महोल्जका अनुनादक (अनुच्छेद ३८) है। इसकी उन्नति करके गरम तारका माइक्रोफोन बनाया गया है। अब बगल और मूरने विज्ञलोक बाल्वसे ऐमा उपकरण तयार किया है जिमसे सभी उपस्वर, आवृत्तक या अनावृत्तक, बड़ी आसानीसे पकड़े जा सकते हैं। पर ये सार उपकरण अनुनाद (अनुच्छेद ३७) के सिद्धान्तपर बने हैं इसलिए यों इनका विवरण नहीं किया जाता है। इनकी सगिप्त चर्चा अनुनादक अध्यायमें मिलगी।

६ तारता, तीव्रता और गुण

३० नादके तीन लक्षण होते हैं (१) तारता (२) तीव्रता और (३) गुण । इन्हीं तीनों लक्षणोंके 'यूनानियमस एव' नाद दूसरेसे भिन्न समझा जाता है ।

(१) तारता स्त्री और बच्चाकी बाली प्रायः महीन समझी जाती है और मर्दानकी मोटा । स्त्री चाहे घामे धीमे बाल, पर उसकी आवाजका महीनपन नहीं जाता, और पुंम्य चाहे लाख चिल्लाये, पर उसकी आवाज मोटीकी मोटी बनी रहती है । चिड़ियाके चहचहाने और घोड़ेके हिन हिनानमें भी यही भेद है । जिस आवाजको हम महीन कहते हैं उसे गवया ऊँचा स्वर कहता है और हम जिस माटी कहते हैं गवया उस नीचा स्वर कहता है । नादकी एक-दूसरेकी अपभ्रंश इस नीची ऊँची स्थितिकी ही 'तारता' कहने हैं । हार्मोनियममें बन्त-मो पटरिया होती है । बायींसे दाहिनी ओर पटरियाकी एक-के-बाद एक दवाते हुए चली । मालूम होगा कि आवाज महीन होती चली जाती है । वैसे ही दाहिनेसे बायें जानेमें आवाज मोटी होती जाती है । अर्थात् दाहिनी ओर बढ़नेमें स्वर ऊँचा होता चला जाता है और बायीं ओर बढ़नेमें नीचा । संगीतकी भाषामें स री ग म प ध नी नामक सात स्वर मान जाते हैं । हार्मोनियमकी बायें किनारेकी पहली पट्टी म है इसके बाद क्रमग और स्वर आते हैं । आठवीं सफेद पट्टीकी भी स ही नाम दिया जाता है और फिर बाक़ स्वर पहलकी ही तरह आगे बढ़ते जाते हैं । ऊपर जा बताया गया है उस हिसाबन रा स स ऊँचा होना है और ग रा स । मन्तव्य यह कि स स आगे हर एक स्वरका तारता बढ़ता जाती है ।

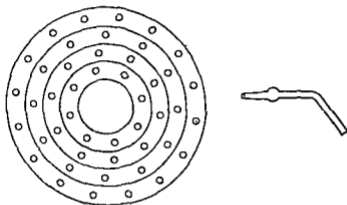
यह तारता केवल कानाका अनुभव ही नहीं है—यह, जिम वस्तुके

कम्पनसे स्वर निकलता है उसका भौतिक धर्म है। अनेक प्रयोगसे यह सिद्ध किया जा सकता है कि स्वरकी तारता स्वरोत्पादक वस्तुकी आवृत्तिपर निर्भर है। आवृत्ति जितनी अधिक होगी स्वर भी उतना ही ऊँचा होगा। नित्यकी घटनाओंपर थोड़ा ध्यान रखनसे ही इस बातकी सच्चाई प्रकट हो जायेगी। जब बिजलीका पला घूमता है तो उसमेंसे एक प्रकारकी ध्वनि निकलती है। यह ध्वनि पलकी आवृत्तिमें ही पदा होती है। अब बिजलीकी धारा बढ़ाकर पलकी गतिका तेज कर दो। तुरन्त यह मालूम होगा कि ध्वनि कुछ ऊँची हो गयी है। यह समझना आसान है कि ध्वनिकी तारतामें यह अन्तर आवृत्ति बढ़ जानसे ही हुआ। एग ही जब आरीस लोहे या लकड़ीका घीरत है ता ध्वनि सुनायी पडती है जा आरीस दाँता लकड़ीमें लगनेसे पैदा होती है। आरीकी गति बढा दनपर, यह ध्वनि भी ऊँचा हो जाती है। एक डण्डा या बेल अपने चारों ओर घुमाकर भी यह देखा जा सकता है कि मामूली गतिपर एक गम्भीर ध्वनि निकलती है। पर जस जस गति बढ़ात है, ध्वनि ऊँची जाती चली जाती है।

हार्मोनियमका री स्वर स से ऊँचा है, इसका कारण यह है कि री की पटरीके सायकी रीट या पत्तीक कम्पनकी आवृत्ति स के सायवाली पत्तीकी आवृत्तिसे अधिक है। हार्मोनियम खोलकर देखनसे पता चलेगा कि री की पत्ती ग की पत्तीसे छोटी है। और यह बनाया जा चुका है कि लम्बाई कम होनेसे आवृत्ति बढ़ जाती है। इसलिए री की आवृत्ति स की अपेक्षा बढ़ जाती है।

तारता और आवृत्तिका सम्बन्ध एक साधारण उपकरणसे दिखाया जाता है जो सक्न रूपसे आ० १८ में दिया गया है। इसमें, एक पीतलक बराबर धक्केपर चार छोटे-बड़े मृत्तमों मुरास बन हुए हैं। पहल बत्तमें ८ मुरास हैं दूसरेमें १० तीसरेमें १२ और चौथेमें १६। भाषीम लगी हुई रखरकी नयामें बाँधका एक पतले मुरासका मुगनल बटाया गया है। धक्केके विपरी मुरासके सामने इस मुगनलका रखकर भाषी चलाने

दूसरी ओरकी हवामें सघनता पैदा हो जाती है। यदि चक्का घूमना हो तो जब-जब चक्का सूरख मुखनलके सामने आयेगा तब-तब दूसरी ओर सघनता चलेगी। मान लिया जाये कि मुखनल पहले वृत्तके सूरखके सामने रखा गया है जिसमें ८ सूरख हैं। अब अगर चक्का एक सेकेण्डमें १० बार



आकृति १८

घूमना है तो एक सेकेण्डमें ८० सूरख मुखनलके सामने आयेंगे और इसलिए दूसरी ओर एक सेकेण्डमें ८० सघनताएँ बनेंगी। इन सघनतायाके कारण जो ध्वनि पैदा होगी उसकी आवृत्ति ८० होगी। चक्केकी इसी गतिक साथ अगर मुखनलकी दूसरे वृत्तके सूरखके सामने रखें तो इस ध्वनिकी आवृत्ति १०० होगी। इस प्रकार नली ऊपरके वृत्तके सामने उठाते जानेसे ध्वनिकी आवृत्ति बढ़ती जाती है। पर साथ-ही साथ यह भी मालूम होगा कि मुखनल जैसे जैसे ऊपर चढ़ता है स्वरकी तारता भी बढ़ती जाती है। सिर्फ इतना ही नहीं। अगर हार्मोनियमकी पट्टीसे मिलाकर देखें तो पता चलेगा कि जब पहले वृत्तका स्वर स हाता है तो दूसरे वृत्तका स्वर तीसरी पट्टीवाला 'ग', तीसरे वृत्तका स्वर पाचवी पट्टीवाला 'प'

और चौथे बक्तका स्वर आठवा पटरोवाला दूसरा स होता ह । अर्थात् जस-जस आवृत्ति बढ़ती ह वस ही वस स्वर भी तार हाता चला जाता ह ।

यहाँ यह बता देना आवश्यक ह कि सभी आवृत्तिका ध्वनिको कान ग्रहण नहीं कर पाता । जिन ध्वनिकी आवृत्ति १६ स कम या ३८,००० स अधिक हो उस कान मुन नहा सकता । कानाका उनके अस्तित्वका ही बाध नहीं हाता । कानाको क्षमताकी सीमा १६ स ३८,००० तककी आवृत्ति ह । पर जिन नादाका उपयोग संगीतमें होता ह, उनके लिए तो कानाकी क्षमता और भी सङ्कुचित ह । संगीतक स्वर कमसे-कम ४० और ज्यादासे ज्यादा ४००० आवृत्तिके हाने चाहिए, तभी कान उन्हें संगीतके रूपमें ग्रहण कर सकता ह ।

३१ (२) तीव्रता नादका दूमरा लक्षण तीव्रता' ह । तीव्रता' और तारताक अंतरको प्रायः लोग नहीं समझत । इसीसे देखा जाता ह कि कोई गवया किसी नये चलको जब म्बर ऊँचा करनको कहता ह तो वह जोरसे धोल्ने लगता है और जब वह जारम आवाज निकालनको कहता ह तो वह स्वर ऊँचा कर देता ह ।

तीव्रतास मतलब आवाजक जारस ह । किसी तारका आहिस्तस छडें तो धीमी आवाज निकल्गी और यदि उम जारसे छडें ता आवाज जारकी निकल्गी । उसी तरह हार्मोनियमको किसी पटरोपर अगुली रग्वर भाषी जितन जोरस चलायेंग स्वर भा उतन हा जोरका निकल्गा । इन सभी हालताम म्बरकी तारता या आवृत्तिम कोई अन्तर नहा पडता । एस हा, एन ही स्वरपर मुह पूरा म्वालकर फेंकडस पूरी हुवा निकालनस स्वरकी तीव्रता बढ़ जाता ह । स्वर जहाँम निकल्ता ह उस स्थानस दूर हटते जायें ता वह धीमा मालूम हाता ह पर उसको तारतामें कोई अंतर नहीं पडता ।

जैस तारता नागत्पादन वस्तुकी आवृत्तिपर निर्भर ह वस हा तीव्रता उसक कम्प विस्तारपर निर्भर ह । विस्तार जितना ही बडा हागा तीव्रता भी उसी हिसाबस बढ़गा । असल बात यह ह कि वस्तुका कम्प विस्तार

तारता, तीव्रता और गुण

जितना अधिक होता है वह वायुमें उतनी ही अधिक सघनता पदा कर देता है। ऐसी घनी सघनता जब कानाके परदपर पडती है तो कानका परदा अधिक दबावका अनुभव करता है। यही ध्वनिकी तीव्रताका अनुभव है। एक सेकेण्डमें जितनी सघनता परदपर पडती है उसीसे तारताका अनुभव होता है। यही दोनाका भेद है। सघनता जितनी घनी होती है परदेपर आघात करनेकी शक्ति भी उसमें उतनी ही अधिक होती है। असलमें यह शक्ति ही तीव्रताका आधार है। यह शक्ति विस्तारके बगकी अनुपाती होती है। अघात अगर विस्तार दूना बढ़ जाये तो शक्ति चौगुनी हो जायेगी। ध्वनिकी इस शक्तिका प्रत्यक्ष अनुभव वहाँ होता है जहाँ कोई भारी वम फूटता है या किसी विस्फोटके गादाममें आग लग जाती है। विस्फोटकी आवाज इतनी तेज होती है कि यह बीसा कोम तक सुनायी पडती और आस-पासके मकानाके ती काँचके जगले तक चूर-चूर हो जाते हैं। किमी काँपते हुए वस्तुसे ध्वनि-तरंग मण्डलाकार होकर चारा ओर फलता है। वस्तुसे दूरी बढ़नेपर मण्डल बढा होना चला जाता है। इसलिए वायुकी जो शक्ति वस्तुके बम्पनसे मिलती है वह बडसे बडे क्षेत्रपर फलता जाता है। नतीजा यह होता है कि किसी एक दिशामें दूर हटनेपर तरंगकी शक्ति कम होती जाती है। इसका नियम ऐसा है कि दूरी दूना हो जानेपर तरंगका विस्तार आधा रह जाता है और इसलिए शक्ति चौथाई रह जाती है पर यदि तरंग मण्डलाकार न फलकर एक ही दिशामें सीधे चले तो शक्तिका ह्रास बहुत ही कम होगा। इसीसे किसी नलीमें ध्वनि चले तो वह बहुत दूर तक सुनाया देती है। इसी नियमपर डाक्टरका स्टेथेस्कॉप (आकणन) बना हुआ है। जलके ऊपरी तलके कुछ नीचे ध्वनि बहुत दूर तक चल सकती है क्योंकि जलके भीतरका ध्वनि-तरंग ऊपरके तलसे बाहर नहीं जा सकता, इसलिए आधे मण्डलम ही फलता है। जहाँ बराबर विस्तार और बराबर आवृत्तिकी दो वस्तुएँ पास-पास काँपती हैं वह वायु-मण्डलमें कहीं-कहीं दानाके तरंग एक-दूसरेपर

अवश्य पड़ेंगे। अगर दानाकी उभार एक दूसरेपर पड़ी तो उस स्थानपर विस्तार दूना हो जायेगा (अनुच्छेद २०) अर्थात् शक्ति चौगुनी हो जायगी। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि दाना वस्तुआकी शक्ति मिलकर सिर्फ दूनी होनी चाहिए। बाकी शक्ति कहाँस पदा हुई? वास्तव यह है कि वायुमें जहाँ एक स्थानपर एक तरंगकी उभार दूसरेकी उभारपर पड़ती है वहाँ दूसरे स्थानपर एककी खाल दूसरेका उभारपर पड़ती है। इसलिये इस दूसरे स्थानपर विस्तार शून्य हो जाता है अर्थात् शक्ति विलीन हो जाती है। ऐम स्थानापर कान रखनेसे ये नीरव मालूम हानगे। इस प्रकार दोनों वस्तुआके चारा ओरके सार मण्डलकी शक्ति जोड़ी गये तो वह दूनी ही निकलेगी।

जैस तारताके लिए कानकी धमताकी एक सीमा हाती है वसे हा ताव्रताके लिए भी एक सीमा होती है। पर यह सीमा उतनी निश्चित नहीं होती। तीव्रताका माप भी उतना सरल नहीं है जितना तारताका। फिर भी वैज्ञानिकान इसकी जाँच की है और आज भी कर रहे हैं। तीव्रताके मापके लिए भी बिजलीके अनेक उपकरण बन हैं। यह बताया जा चुका है कि कानक परदपर सघनताक दबावस ही तीव्रताका माप होता है। इसलिए इस दबावम हा तीव्रताका अनुमान लगाया जा सक्ता है। कमस कम तीव्रता जिसस नीच शक्ति मुनायी नहीं देता, तारतापर भी निर्भर है। माधारणतः स्वर अधिक तार हो ता थाही तीव्रता हानपर भी कान इस गुण लता है। अनेक प्रयोगान यह अनुमान लगाया गया है कि यदि २७३४ आवृत्तिका स्वर हा ता कानक परदपर कमस-कम वायुमण्डलक दबावक १० भरबरा हिस्सक बराबर सघनताका दबाव होनास कान इस स्वरका सुन लता है। इसस कम दबाव हातक कान काम नहीं करता। वायु मण्डलका दबाव एक बगइचपर लगभग ७ सरक बराबर पडता है। इसस यह पता चलता है कि कानकी शक्ति कितनी सूक्ष्म है। कानाका मुनायी देनेवाली कमस-कम तीव्रताका 'धुनि दहली' कहत है। उपर दो हुई आवृत्तिये

तारता, तीव्रता और गुण

जितना नीचे उतरेंगे देहलीकी तीव्रता उतनी अधिक बढ़ जायेगी, साथ-ही साथ ऊपर चढ़नेमें भी मुननके लिए स्वरका अधिक तीव्र होनेकी आवश्यकता होगी।

किसा स्वरको तीव्रता कितनी बढ़ायी जाये कि कान इस अंतरको जान ल, यह स्वरकी पहला तीव्रतापर निर्भर है। साधारणतः किमी स्वरकी तीव्रताका सवाया बर देनेपर कानका इस अंतरका बोध हो जाता है। इसका ऊपर तारताका भी कुछ अमर अवश्य होता है।

जिम तरह 'धुनि देहली' नीचेकी सीमा है जिमसे नीचे ध्वनि सुनायी नहीं पडती, उसी तरह तीव्रताकी एक ऊपरली सीमा भी है जिसमें ऊपर तीव्रता बढ़नेमें कानका पीडा होने लगती है। इसे 'पीडा देहली' कहते हैं। समीतमें व्यवहार किये जानेवाले सार स्वरके लिए यह देहली लगभग बराबर तीव्रताकी होती है। १/१० छटाक प्रतिवग इचका दबाव इसके मानका अंदाज है। इससे अधिक दबाव देनेपर स्वरस कानको पीडा हाती है और कभी कभी हानि भी होती है। ऊपर दी हुई तीव्रतापर, जहा कानकी प्राक्ता सबसे अधिक सूक्ष्म है, 'पीडा-देहली' का दबाव और भी कम हाता है।

३२ (३) गुण नादका तीसरा लक्षण गुण है। हम देखते हैं कि एक आदमीकी आवाज दूसरेकी आवाजमें नहीं मिलती। एक यंत्रका स्वर दूसरे यंत्रके स्वरस नहीं मिलता। बाद बाजा बजता हो ता अनुभवो आदमी सिर्फ आवाज सुनकर कह सकता है कि सितार बज रहा है या हार्मोनियम। जहाँ दस तरहके बाजे बज रहे हैं, वहा समीके स्वरकी तारता एक होनेपर भी तबलेकी आवाज सितारके स्वर, हमराजके स्वर आदि सब अलग-अलग पहचाने जा सकते हैं। यहाँतक कि आदमीका भाव प्राम हम उसक स्वरस पहचान लेते हैं। स्वरकी इन विशेषताको ही स्वर का गुण कहते हैं। जब यह बहना जाता है कि तबला हार्मोनियमकी किसी पटरीसे मिला गया तो उसका मतलब इतना ही हाता है कि दोनोंकी आवृत्ति

या तारता एक ही गयी, यह नहीं कि दानाकी जलम अलग पहचान मिट गयी। तारता एक ही जानपर भी दानाके गुण अलग-अलग रहते हैं।

तारता और तीव्रताकी तरह ही गुणका भी भौतिक आधार है। यह केवल मानसिक अनुभूति नहीं है। पाँचवें अध्यायमें कम्पन-वक्र और ध्वनि-वक्रका चर्चा की गयी है। इसी वक्रके रूपसे नादके गुणका सम्बन्ध है। अगर सितारके तारका और तबलेके परदवा कम्पन-वक्र या ध्वनि-वक्र ठीक ठीक उत्तारे तो मालूम होगा कि जैसे इन दानाके नादके गुण अलग-अलग हैं वैसे ही इन दोनोंके वक्रके रूप भी दो तरहके हैं। यह बताया जा चुका है कि वक्रका आकार मौलिक आवृत्तिके साथ अनक आवृत्तिकाके मिलनसे बदलता है। य आवृत्तिके मौलिक आवृत्तिके क्रममें पूर्णाङ्क गुण होते हैं। जम अगर मौलिक आवृत्ति १०० हो तो इसके आवृत्तिके २००, ३००, ४०० आदि होंगे। जम वक्रके आकारके भेद आवृत्तिकाके कारण पटा होत है तो यह भी निश्चित है कि स्वराके गुण भी इसी कारणसे बदलते हैं। आवृत्तिके किस प्रकार गुण भेद पटा करते हैं यह सज्जत रूपमें नीचे दिया जाता है—

(१) दो स्वराके आवृत्तिकाका संख्या भिन्न भिन्न हो, जस एकमें १०० २०० ३०० ४०० और दूसरमें १००, २००, ३००, ४००, ५०० आवृत्तिके हैं।

(२) आवृत्तिकाका संख्या बराबर होनेपर भी भिन्न भिन्न आवृत्तिके हैं, जम एकमें १००, २००, ३००, ४०० और दूसरमें १०० ३००, ५००, ७०० आवृत्तिके हैं।

(३) आवृत्तिकाका तीव्रतामें अंतर है जस दाना स्वराके १००, २००, ३००, ४०० आदि बराबर संख्यामें रहनेपर भी अगर एकमें २००, ४०० आदिका तीव्रता घटी है तो दोनों स्वराके गुण भिन्न भिन्न होंगे। साधारण दानामें आवृत्तिकाका तीव्रता एक क्रमसे घटती है। यह आवृत्तिकाके क्रमके पर निर्भर है। अगर मौलिकसे स्वर आगे सभी आवृत्तिकाके पर १, २, ३, ४ आदि अंक बटा दें तो यह आवृत्तिकाके क्रमके होंगे। जस—

१	२	३	४	५
१००	२००	३००	४००	५००

यहां जस जस क्रमांक बढ़ता है वस-वस आवृत्तिका तीव्रता मौलिककी अपेक्षा कम होती जाती है। अगर मौलिककी तीव्रताको १ मानें तो २ क्रमांकवाले आवृत्तिकी तीव्रता मौलिककी तीव्रताका $\frac{1}{2}$ अंश होगी। इसी प्रकार तीसरे आवृत्तिकी $\frac{1}{3}$ और चौथेकी तीव्रता $\frac{1}{4}$ होगी।

पर यह नियम सभी जगह लागू नहीं होता। जस, अगर किसी वाजेके तारको जंगुलियास या मिजराफस छेड़ें तो आवृत्तिकी तीव्रता ऊपर दिये हुए नियमसे घटेगी और छठें सातवें आवृत्तिके बाद नहींके बराबर रह जायेगी। पर यदि तारपर किसी मोचीली और भारी चोखस मारें तो उसमें बहुत स आवृत्तिक निकलगे जा सबके सब बराबर तीव्रताके हाने। आवृत्तिकाकी तीव्रताके इस भेदके कारण ही इन दो तरीकासे उत्पन्न तारके स्वर दा भिन्न भिन्न गुणोंके हो जायेंगे। एकका आवाज चिकनी और कामल होगी, दूसरेकी आवाज खनकती हुई होगी।

जिस तरह तारका कम्पित करनके तरीकेसे स्वरका गुण बदल जाता है उसी तरह छेड़नेके स्थानको बदल दनस भी तारके स्वरका गुण बदल जाता है। थोमस यगका यह सिद्धांत है कि छेड़नेके स्थानपर जिन आवृत्तिकाकी ग्रन्थि (अनुच्छेद २२) पडती है व आवृत्तिक स्वरसे गायब हो जाते हैं। आ० १५ से यह स्पष्ट है कि दूसरे आवृत्तिकी ग्रन्थि तारके बीचोबीच पडती है। ४, ६, ८ आवृत्तिकी ग्रन्थि भी वही पडगी। इसलिए यदि तारको बीचमें छेड़ें तो दूसरा, चौथा, छठा, आठवाँ आदि आवृत्तिक गायब हो जायेंगे और स्वरमें पहला, तीसरा, पाँचवा, सातवाँ आदि आवृत्तिक रह जायेंगे। इसी प्रकार यदि तारका एक तिहाई दूरीपर छेड़ें तो ३, ६, ९ आदि आवृत्तिक गायब हो जायेंगे। इन आवृत्तिकाकी कमीके कारण स्वरका गुण बदल जायेगा।

यंगक ऊपर दिये हुए नियमका उपयोग करके कृत्रिम रूपायस भी जिन

आवृत्ताको चाहें ग्रायब कर सकते या उनको तीव्रता घटा-बढा सकते हैं ।

३३ पिछले अध्यायमें यह बताया गया है कि सामकालिक ध्वनिम आवृत्तन उपस्वर और वकालिक ध्वनिमें अनावृत्तक उपस्वर होते हैं । इसी भेदके कारण इन दोनों प्रकारकी ध्वनियोंके दो रूप हा जाते हैं । अनुच्छेद १२ में दी हुई वस्तुआकी आवृत्तिपर ध्यान देनेसे पता चलता है कि नाद पैदा करनेवाले इन सारी वस्तुआकी दो भागमें बाँटा जा सकता है । पहले भागमें तार वायु (वाँसुरी) आदि हैं । इनके आगिकाका पारस्परिक सम्बन्ध १ २ ३ ४ जमा है । इसलिए इनमें आवृत्तक उपस्वर होते हैं । दूसरे भागमें डण्डा, चदरा, परदा आदि हैं । इनके आगिकाका पारस्परिक सम्बन्ध साधारणतः १^२ २^३ ३^२ ४^३ जमा है । इसलिए इनमें अनावृत्तक उपस्वर ज्ञात हैं । चन्द्र या परदेमें तो उपस्वराका सम्बन्ध और भी जटिल हो जाता है, क्योंकि लम्बाई चौड़ाई दोनों ओर विस्तार होनेसे इनका कम्पन पचीला होता है । इनके उपस्वराका पता इनके सतहपर ग्रियि रखा मापकर करके लगाया जा सकता है । चदरे या परदेपर बालूक महीन कण फलाकर इनमें कम्पन पैदा करनेसे बालूक कण ग्रियि रखापर जमा हो जायेंगे क्योंकि यह निस्पन्द स्थान है । भिन्न भिन्न स्थानाको अँगुलास रखाकर ग्रियि रखाआके भिन्न भिन्न चित्र बनाये जा सकते हैं । इन्हें 'लैड नाक चित्र' कहते हैं । ग्रियि रखाआको देखकर ही चदर या परदेक भिन्न भिन्न उपस्वराका पता लग सकता है । उदाहरणके लिए कमडक परदेक उपस्वराका सम्बन्ध बताया जाता है । गाल परदेक मौलिक स्वरकी आवृत्ति अगर १ मानी जाये तो इसके अन्त उपस्वरोकी आवृत्ति क्रमशः १ ६ २ १, २ ३ २ ७ २ ९, ३ २, ३ ५ ३ ६, ३ ७, ४ ४ २ होगी । ये सार उपस्वर अनावृत्तक हैं । धोसन यह निश्चिताया है कि हिन्दुस्तानी सबलेकी ध्वनिम प्रायः आवृत्तक उपस्वर होते हैं । इसका कारण है गानका प्रयोग जिसकी माटाई बाचमें सबसे अधिक होती है और किनारकी आर नियमित रूपमें घटती जाती है ।

आवर्तक उपस्वरोंके कारण ही पूव, पश्चिम सभी देशमें संगीतके लिए मुख्यतः तार और वायुके वाजे ही उपयुक्त समझे जाते हैं। अनावर्तक उपस्वरवाले वाजे तो सिद्ध ताल देनेके कामके होते हैं। संगीतके प्राचीन शास्त्रकारान भी दो प्रकारके वाद्यको संगीतके लिए ग्रहण किया है, एक सन्त्री-वाद्य और दूसरा सुपिर-वाद्य जसे बांसुरी आदि। हिन्दुस्तानी गाय काने ता तालके लिए भी अनावर्तक उपस्वराको सहन नहीं किया और तबले और मँदरा बनाकर आवर्तक उपस्वराका मेल तयार करनेकी कोशिश की है।

संगीतन आवर्तक उपस्वरको ही पमद करते हैं—इसमें यह जरूर मालूम होना है कि जिस स्वरमें आवर्तक उपस्वराका मिश्रण होता है वह कामल और प्रिय होता है और जिसमें अनावर्तक उपस्वराका मिश्रण रहता वह कटु होता है। यह एक साधारण बात है कि आवर्तक उपस्वरावाला सामान्य नाद राव से बहुत भिन्न होता है और कालिक नाद और रावमें कुछ-न-कुछ समता अवश्य होती है। इसलिए अनावर्तक उपस्वरा वाले कालिक नादमें रावका कुछ अंश होना जरूरी है और इसलिए उनका अप्रिय होना भी स्वाभाविक ही है।

३३ स्वर प्रायः मिथ ही होते हैं चाहे वे प्रिय ही या अप्रिय। अगर मिश्रणके कारण स्वराम कटुता आ सकती है तो इसी कारणसे इसमें मधुरता और प्रसन्नता भी आती है। सरल स्वर, जिसमें मौलिक ही मौलिक ही, उपस्वराका नाम न रहे, जस ही ता विरल है वस ही नीरस है। द्विभुजका स्वर प्रायः सरल होता है क्योंकि उसका उपस्वर मौलिकका $\frac{1}{2}$ गुना होता है और इसके बहुत ऊँचा होनेसे तीव्रता बहुत कम होती है। फिर भी द्विभुज अगर भारी न हो और जारम ठाका जाये तो इसके उपस्वर प्रकट हो जाते हैं। अब द्विभुजमें बिजलाकी धरना फिरती (ए० सा०) धारासे कम्पन प्रेरित करके सरल स्वर पदा करते हैं। पर ये स्वर कानिकाके ही कामक है, जो इन्हें स्वराका तुलनाके लिए प्रमाणस्वरूप मानते हैं। गायकाको

३७ इस दूसरी अवस्थाके कम्पनको जब मुख्य कम्पन और प्रेरित कम्पनकी आवृत्ति एक ही जाती है अनुनाद' या गूँज कहते हैं। यह गूँज प्रेरक बल थोड़ा हानपर भी बचन तीव्र होता है। यह कैसे होता है यह एक साधारण दृष्टान्तस समझा जा सकता है। मान लीजिए कि एक भारी चूल्का हम चलाना चाहते हैं। या उस पूरे विस्तार तक हिलानमें काफी बल लगाना होगा। अगर हम थोड़ा बलस उस हिलाना चाहें तो उसमें एक रस्सा बाँधकर उस एक बार खींचेंगे। थोड़ा थोड़ा हिल जायगा। जिस समय वह एक दालन पूरा कर लगे ठीक उसी समय हम एक बार और उस खींच लेंगे। अब उसका विस्तार बढ जायेगा। इसी प्रकार जब जब वह दालन पूरा करता है तब-तब हम उस खींचते जाते हैं। हम देखेंगे कि हर दालनमें उसका विस्तार बढ़ता जाता है। इस तरह हम जितना चाहें उतना विस्तार बना सकते हैं। यही हम देखते हैं कि जितना समय चूल्का एक दालन या कम्पन पूरा करनेमें लगता है ठीक उतना ही समय एक विचाव और दूसरे विचावक बीचमें होना चाहिए। मतलब यह कि प्रेरक बल और कम्पमान वस्तुका मुक्त काल या मुक्त आवृत्ति एक ही होना विस्तार बहुत अधिक बढ़ाया जा सकता है।

ऊपरका इन सारी विचचनाआवा सार यह है कि जब वस्तुको मुक्त आवृत्ति और प्रेरक बलकी आवृत्तिमें अन्तर रहता है तो वस्तुमें उत्पन्न कम्पनका प्रेरित कम्पन कहते हैं और जब वस्तुको मुक्त आवृत्ति और प्रेरक बलका आवृत्ति एक ही जाती है तो वस्तुक कम्पनका अनुनाद' या गूँज कहते हैं। पर जहाँ ध्वनि ही प्रेरणा होती है वहाँ 'अनुनाद' का व्यवहार प्रायः दाना ही अर्थमें होता है।

प्रेरक बल कई प्रकारके होते हैं। ऊपर विजलीकी प्रेरणाका प्रयोग बनाया गया है। गारोरिक या यांत्रिक बलका प्रेरणाका भा दृष्टान्त दिया गया है। पर मुख्य बात यह है कि ध्वनि स्वयं दूसरी वस्तुओंमें कम्पनका प्रेरणा कर सकता है। इसका भी कई तरीके हैं। एक ही नागोत्पादक

वस्तुका कम्पन अग मयोगस दूसरो वस्तुम कम्पन पदा कर सकता ह दूमरे, अगर ध्वनि काफी जोरदार हो जो वायुको पूरी तरह विचलित कर सके, तो यह स्वयं वायु द्वारा चलकर दूसरी वस्तुआम कम्पन प्रेरित कर सकती ह । अगर तमूरे या सितारके दो ताराकी आवृत्ति एक कर द या मुर मिला दें तो एक्को छेडते ही दूमरेमें आपने आप कम्पन होने लगेगा । यह, दूमरे तारपर काणजका हल्का टुकडा रखकर प्रत्यक्ष देखा जा सकता ह जो पहले तारको छेत्त ही कापने लगेगा या गिर जायेगा । इसकी प्रक्रिया बडी सीधी ह । जब हम पहला तार छेडते है तो वह तमूर या सितारकी घोडी और लकडीमें अपनी आवृत्तिका ही कम्पन पत्ता करता ह यह प्रेरित कम्पन ह । क्योंकि लकडीका मुक्त कम्पन साधारणत तारके कम्पनम भिन्न होता ह । अब यह घाडी अपने कम्पनके द्वारा दूसरे तारमे गँज पत्ता करती ह । क्या कि इस वार दूसर तारका मुक्त कम्पन घोडीक कम्पन जसा ही ह ।

अगर तारका बाजा पास रखा हो जिसके तार खूब चढे हुए हा और कोई तीव्र स्वरसे गाता हा तो कभी कभी जब स्वर ऊँचा और तीव्र होता ह तो बाजेमें गूँज उठती ह । यहा ध्वनिका साथे वायुक द्वारा असर होता ह । गलेके स्वरसे बाजेके किसी तारका स्वर मिलनेस उसमें अनुनाद पदा होना ह और बाजा गूँजने लगता ह । ऐसी साधी प्रेरणाके लिए स्वर काफी तीव्र होना चाहिए ।

इमराज या सरसीमें बहुत स ऐसे तार होते ह जो कभी छेड नहीं जात । व अलग अलग स्वरामें मिले हुए होते ह । जब कोई स्वर बजता ह तो उसक मेलके तारमें गूँज पदा हान्ती ह । इन ताराका यही उपयोग ह ।

३८ अनुनादके सिद्धा तपर ही हेरमहोजने मिश्र स्वरके आशिकाकी पहचानक लिए अनुनादक बनाया । यह धातुका बना कलशके आकारका हाता (आ० २०) ह । इसम एक वार चौडा मुराख क होता जिसके द्वारा स्वर कलशके भीतर जाता ह । दूसरा टाटीकी तरह बाहर निकला हुआ पतला मुराख ख होता ह । क के द्वारा भीतर जानेवाले स्वरकी

आवृत्ति जब कर्णके भीतरका वायुकी मुक्त आवृत्तिके बराबर हो जाती है ता कर्णक भातर गूँज पदा हाती है। टाटी ख का वानम लगाकर इस गूँजका साफ सुन सकते हैं। हेमहाजन ऐम अनक अनुनाटक बनाय जिनकी मुक्त आवृत्तियाका अनुपात

१ २ ३ ४ आदि था। यह बनाया जा चुका है कि मिश्र स्वरके आगिकाकी आवृत्तियाका अनुपात प्राय १ २ ३ ४ होता है। अगर मिश्र स्वरके मौरिकस पहल अनुनादकम



ध्यामृति २०

गूँज उठता है ता इसक दूसर आशिकस दूसरे अनुनादकमें गूँज उठेगी जिनकी सहज आवृत्ति पहल अनुनादककी आवृत्तिकी दूनी है। इसी तरह तीसरा आगिक तीसरे अनुनादकमें गूँज पना करगा। मान लो कि दूसरा, चौथा छठा आगिक स्वरम नहीं है। ऐसा जानस दूसर चौथे, छठे अनुनादकमें गूँज न हागी। इस प्रकार अनुनादककी क्रमवद्ध श्रेणीस मिश्र स्वरका विलक्षण हा सकता है। इस आगिकाकी तीव्रताका भी अनुमान लगाया जा सकता है। हमहोजक इस प्रयागने हम बातकी भी सिद्ध कर लिया कि कितनी मिश्र स्वरके उपस्वर अपना स्वतंत्र अनुनाद पना करते है।

ऐस अनुनादकका एक तो आयतन बंधा हाता है जिस छोटा-बडा नहीं किया जा सकता। इसमें सभी स्वरका साथ इसका उपयोग नहीं हो सकता। जिस स्वरकी हम इसक साथ मिला सकें उसीका विश्लेषण हो सकता है। दूसर आगिकाकी तापनाका अलग अनुभवम ही लगाया जा सकता है। इन श्रुतियाका दूर करनर लिए हा गरम तारका माइक्राफोन बनाया गया है। यह अनुनादक हमहोजक अनुनादक-सरोता ही होना है। इसमें विशेषता यह हाती है कि इसकी आवृत्ति जितना चाहे बल सकता है। ध्वनि गुननर लिए टाटी ख इसमें नहीं होती। इसक बल अनुनादकके गलके भीतर तार बढाय जान ह जो बिजलीकी धारास गरम

प्रेरित कम्पन और अनुनाद

किये जाते हैं। इस तारके साथ एक यंत्र लगा होना है जिसका काँटा धाराके परिवर्तनको सूचिन करता है। अनुनादरूपके भीतर जब गूँज होती है तब कम्पनके कारण गलेके भीतरकी वायुम चाल आ जाती है। इसमें तार कुछ ठण्डा हो जाता और ठण्डकके कारण धाराके बल्लते ही यंत्र (गल्वेनोमीटर) का काँटा घूमता है। अब अगर किसी आगिकरु कारण अनुनाद पदा हुआ तो काँटेक घुमावसे ही उस आगिककी तीव्रताका अनुमान हा जायेगा।

अनुनादके सिद्धान्तपर हा स्वर विश्लेषणके लिए बेनेट जीर मूरने विजलीके उपकरण तयार किये हैं। विजलीके इस आशिक विश्लेषक यंत्र में ध्वनि माइक्रोफोनपर पडती है। माइक्रोफोनके तारमें ध्वनिसे उत्पन्न विजलीकी धारा, ध्वनि तरंगके अनुरूप ही घटती बढ़ती है। अर्थात् विजलीकी धाराका तरंग ठीक वैसा ही हाता है जैसा ध्वनिका। माइक्रोफोनकी सर्किटके साथ गुयो हुई वाल्व सर्किटके द्वारा माइक्रोफोनकी धाराको बढाया जाता है। इस बढी हुई विजलीकी धाराके तरंगका अनुनादक-सर्किटमें विश्लेषण करते हैं। अनुनादक सर्किटकी आवृत्ति ८० स ६००० तक छोटे छोटे अंशमें बढायी जा सकती है। भिन्न भिन्न आवृत्तिका साथ जब इस आवृत्तिकाके बिल्ल फोटोग्राफके प्लेटपर अंकित हा जाते हैं। इस विधिस सारे विश्लेषणमें पाँच मिनटस भी कम समय लगता है। यह विधि मित्रक फोनोग्राफसे वही अधिक सुविधाकी है। इसलिए ध्वनि विश्लेषणमें अब यही प्रचलित है।

इसी प्रकारका एक दूसरा उपकरण भी है जिनमें मिलीनिदम-सेल्फा उपयोग होता है।

हालमें ब्राउनने ध्वनि विश्लेषणके लिए प्रकाशकी एक विधि निकाली है। इसमें ध्वनिके फिल्मपर प्रकाश डालकर डि फ्रेक्शन चित्र बनाया जाता है जिसमें सभी आवृत्तिकाकी रवाएँ अंकित हा जाती हैं। पर

सुविधाकी दृष्टि यह विधि उत्तनी सफल नहीं है जितनी ऊपर बनायी हुई विधि ।

३६ अनुनाद मभा द्र याम एष सा नह्यं हाता । एक ही वाजम तार या पत्ती वायु और लक्ष्मीक परलाक अनुनादमें बहुत अंतर पड जाता है । इनलिए वागाका वनावट समपनेक लिए यह जानना आवश्यक है कि भिन्न भिन्न द्रव्याक अनुनादमें कम अंतर पडता है और द्रव्योंक इस प्रकृति भेदका क्या उपयोग किया जाता है ।

प्रत्येक द्रव्यमें एक जांतरिक अवराध होता है जिसके कारण वह अपने भीतर किंसा बाह्य वस्तुका या अपन ही अग और अणुआका गतिमें बाधा पहुंचाता है । गात्रक जब हवाम डालता है तो हवा उसका गतिमें रुकावट डालती है और इसीमें दोलक कुछ समय बाद रुक जाता है । अगर दालक जलमें डाले तो उसकी गति और जल्दा रुक जायगी क्योंकि जलका जांतरिक अवराध वायुम अधिक है । गात्रक तल गात्र दूध या ग्लिसरिनमें यह अवराध और भी अधिक है । यह अवराध द्रव्यामें अपन ही अग प्रत्येकको आपत्तिक गतिमें भी प्रकट होता है । हम देखते हैं कि कोई द्रव्य जमानपर गिरते ही बर जाता है जब जल और कोई घहनमें बहुत समय लता है जैसे अल्पतरा । इसका कारण यह है कि अल्पतरा भीतर हर नाचेका तल अपन ऊपरव तलकी गतिमें रुकावट डालता है । यह बात जलम अल्पतरकी जप ता बहुत कम है ।

अब यह समझना आसान है कि गात्र अवराध जम द्रव्यके भीतर दालक कम्पनमें रुकावट डालता है कम है यह द्रव्यके अपन अणुआक कम्पनमें भी रुकावट डालता है । इसीलिए किंसा वस्तुका अनुनाद उसके अवरोधपर निर्भर है क्योंकि अनुनाद उसके अणुआक कम्पनसे ही प्रकट होता है ।

अब प्रसंगम दा-नीन मध्य वार्ते गात्र रखनी है । हमने देखा है कि जब प्रेरक और प्रेरितकी आवृत्ति एक ही जाती है तो अनुनाद होता है । जिस वस्तुमें अवराध कम है उसमें इस अनुनादकी सीधता अधिक होती है ।

यहातक कि अगर वस्तुका अवरोध शून्य हा तो अनुनादकी तीव्रता अनन्त हो जायेगी । यह आदग दशा है ।

प्रेरित या प्रेरकमें-स किसी एककी तारता घटा या बढा देनेस अनुनाद की तीव्रता बहुत कम हो जाती है । शैनाकी तारताभ जिनना ही अधिक अन्तर होगा यह कमी भी उतनी ही अधिक होगी । पर बराबर अन्तर-के लिए जिस वस्तुका अवरोध अधिक हागा उसम अनुनादकी तीव्रता का गिरना उतना हा कम होगा । अवरोध वन्त कम हा ता प्रेरक और प्रेरितकी आवृत्ति एक हातपर अनुनादकी तीव्रता तो बहुत अधिक हागी पर दानोकी आवृत्तिमें थोडा अन्तर पडते हा तीव्रता बहुत अधिक गिर जायगी । ऐसे वस्तुके सम्बन्धमें कहगे कि इसका अनुनाद बहुत ही तीक्ष्ण ह । अर्थात् अवरोध जितना कम हागा अनुनादकी तीक्ष्णता उतनी ही अधिक हागी ।

ऊपरके सार नियम एक काल्पनिक उदाहरणमें साफ हो जायेंगे । हम काठका एक तार लेंते ह जिसके मुक्कन कम्पनकी आवृत्तिया ५०० ह और एक बढा हुआ तार लेंते ह जिसकी आवृत्तिया भी ५०० ह । काठमें अवरोध अधिक ह और तारमें बहुत ही कम । अब अगर ५०० आवृत्तियावाले द्विभुज स काटम कम्पन पदा करें तो उसमें तीव्र अनुनाद हागा । बसे ही इस द्विभुजस तारम भी अनुनाद होगा । पर हम देखेंगे कि काठक अनुनादसे तारका अनुनाद वन्त ही अधिक तीव्र ह क्योंकि तारका अवरोध कम ह । अगर किसी तरह द्विभुजकी आवृत्ति ५ घटा या बढा द तो देखेंगे कि तारका अनुनाद अब बहुत ही कम हा गया ह । पर काठका अनुनाद क़रीब-क़रीब पहले-जमा ही ह ।

साराग यह कि जिस वस्तुमें अवरोध अधिक ह उसमें अनुनाद ता कम हाता ह पर सभी आवृत्तियापर कुछ-न कुछ ज़रूर हाता ह । पर जिसमें अवरोध कम ह उसमें बराबर आवृत्तिपर बहुत अधिक अनुनाद होता ह पर आवृत्तिमें थोडा अन्तर होते ही यह बन्द हो जाता ह । इसीलिए इसराज जस बाजामें बगलक सभी तार अलग अलग स्वरमें मिल हाते ह जा अपने

स्वरके ही साथ गूँजत है। पर काठका परदा तो सभी स्वराक साथ गूँजता है। हाँ इनका जरूर है कि संयोगवश जब काठकी आवृत्ति और स्वरको आवृत्ति एक ही जायगी तो यह गूँज अधिक बढ़ जायगी। यह अवस्था बलामें आती है जब वह एकाएक गूँज उठता है। इस अश्रयमें 'उल्फ नाट' गृह्यत है जिसका अर्थ है 'भेड़ियेका स्वर'।

४० आवृत्ति एक हीानपर जब प्ररकके कम्पनस प्रेरितमें अनुनाद होता है तब प्रेरित अपने कम्पनक लिए प्रेरकस ही गतिन सीचता है। इसमें प्रेरक बहुत ही धात्र गान्त हा जाता है और प्रेरितमें कम्पन होने लगता है। अब अगर ये दाना परस्पर सम्बद्ध हा, ता प्रेरितके कम्पनका असर प्रेरकपर होने लगा और अगर दानाका भार बराबर हा ता प्रेरकम भी अब उमी तरह अनुनाद होगा जना पहले प्रेरितमें हुआ था। अथान् जो पहले प्रेरित था वह अब प्रेरक हो गया। इस प्रकार बार-बार एक दूसरमें गतिनया आगन प्रदान होता रहेगा। काठकी एक सीधीपर दो बराबर भार और आवृत्तिवाले द्विभुजको जड़ दें और उनमें स एकको रजन लगी हुई कमागास बजा दें, तो दूसरमें अनुनाद पना होगा। हम दगेंगे कि पहला द्विभुज धीर धीर गान्त होता जाता है और दूसरा जोरस बजन लगता है। फिर इसकी आवाज घटने लगती है और इसकी प्रेरणास पहला द्विभुज बजन लगता है। इस प्रकार एक-बाद दूसरा द्विभुज बार-बार बजना रहता है। इसमें यह मिथ्य हाता है कि जहाँ दो कम्पमान वस्तुओं परस्पर जुटी हुई हानी है वहाँ एकक कम्पनका प्रभाव दूसरके कम्पनपर पटना है। इसमें प्रेरित और प्रेरकना भेद नहीं बिधा जा सकता। इस दो वस्तुआदा अनुपात कहत हैं।

जहाँ अलग अलग आवृत्तिवाला दो वस्तुए परस्पर बंधी हा, वहाँ अगर अनुपात दोला है तो गाना अपनी-अपनी स्वतंत्र आवृत्तिम बगिन होंगी और अगर अनुपात दृढ़ हा तो दानाकी आवृत्ति एक ही जायगा, जो दानाके बीचकी क्षात्रुति हागी। दृढ़ अनुपातक साथ अगर

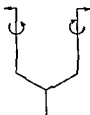
एक वस्तु बहुत ही भारी और अधिक शक्तिवाली है तो यानी दरके बाद दूसरी हल्की वस्तु भी इसीकी आवृत्ति ग्रहण कर लगी। अगर दूसरीमें भी कुछ शक्ति हो तो वह भारी वस्तुकी आवृत्तिपर भी कुछ न कुछ असर जरूर डालेगा और उस थोड़ा विचलित करेगा। यह बात वासुरी जस सुपिर वाद्यमें देखनेमें आती है। फूँककी हवा जब वासुरीके मुखकी जिह्वामें लगती है तो उसमें कम्पन होना है जिसका आवृत्ति वायुके वेगपर निर्भर है। इस कम्पनमें वासुरीके भीतरकी वायुमें प्रेरित कम्पन पना होता है जिसका आवृत्ति वासुरीके भीतर बन्द वायुको मुखसे लेकर खुले सूरख तककी लम्बाईपर निर्भर है। इस वायुके स्तम्भकी शक्ति अधिक होनेसे यह फूँककी वायुको आवृत्तिका दबा देता है और इसीकी आवृत्तिसे वासुरी बजती है। इसीलिए इस स्तम्भकी लम्बाई घटाने-बढ़ानेसे ही स्वर बदलता है। पर जोरसे फूँककर वासुरीकी वायुके कम्पनपर प्रभाव डालना संभव है और इस प्रकार स्तम्भकी लम्बाई बिना घटाये ही स्वरको थोड़ा ऊँचा किया जा सकता है।

४१ ऊपर ११ कम्पमान वस्तुआके अनुयागका चर्चा की गयी है जो दो प्रकारका होता है—एक 'निश्चित अनुयाग दूसरा 'दृग् अनुयाग'। वाद्य-यंत्रके सम्बन्धमें इस अनुयागका बड़ा महत्त्व है। वाजोंमें कई अनुनादक होते हैं—जैसे, तूबा तूबेके भीतरकी वायु काठका परदा, खोलली हाडी लोहेका चन्द्रा, काठ या हड्डीकी घाडिया आदि। इन सभीकी मुक्त आवृत्ति अलग अलग होती है, अवरोध भी अलग अलग होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि किसी स्वरका म् सारे समुदायपर क्या असर होता है इसकी कुछ धारणा हो। इसके लिए यह देखना जरूरी है कि अनुयाग अनुनादकाकी मुक्त आवृत्ति क्या हानी है। जब भिन्न भिन्न आवृत्तिवाले दो अनुनादकाका निश्चित अनुयाग होना है तो अनुयाग अनुनादकाकी दो मुक्त आवृत्तियाँ हानी है जो अलग-अलग दाना अनुनादकाकी आवृत्तियाँ बराबर होती है। 'दृग् अनुयाग' होनेसे भी इसकी दो आवृत्तियाँ होती हैं, पर

उनमें-स एक छोटी आवृत्तिवाले अनुनादककी आवृत्ति भी छोटी और दूसरी बड़ी आवृत्तिवाले अनुनादककी आवृत्ति भी बड़ी होती है। दाना अनुनादककी आवृत्ति बराबर नीचेपर भी दबे अनुयुक्त अनुनादककी दो आवृत्तियाँ होती हैं जिनमें-स एक बराबर आवृत्ति बड़ी और दूसरी छोटी होती है।

दास अधिक अनुनादक अनुयागकी भी इसी प्रकारकी व्यवस्था होगी।

४२ वाजामें काठमा परदा, तूबा आदि अनुनादकका रहना आवश्यक है क्योंकि इनके बिना आवाज ही सुनायी न पटगी। जब हम किसी कापत हुए द्विभुजका अंगुलियाम पकड़कर ऊपर हवाम रखते हैं तो आवाज कुछ भी सुनायी नहीं पटती। पर जब उसका मेजपर लटका करत है तो तेज आवाज निकलने लगती है। इसी तरह अगर तार किसी काठक परदपर न बटाया हो तो उसकी आवाज भी सुनायी न पटती। इसका कारण यह है कि द्विभुज या तार स्वयं वायुके बहुत घाड़कणाको चालित करता है जो द्विभुजकी भुजाआ



आकृति २१

क (आ० २१) या फले तारके चारा ओर घूमते रहते हैं। जब द्विभुजकी भुजा बायी ओरके कणाका दयाती है तो दाहिनी ओर छात्री पड जाता है इसमें बाया ओरके कण बड़ी तेजीसे दाहिनी ओरकी छात्री जगत्का घेर लेते हैं। इस तरह भुजाके कम्पनमें उभय चारा ओरकी वायुक कण बायें दाहिने और दाहिनेसे बायें घूमने रहते हैं। इसीलिए भुजाके पासके कणाका आन्तलन तरंगके रूपमें आगे नहीं बढ़ पाता। तरंग तो अभी आगे बढ़ सकता है जब वायुक कण चक्कर न काटकर अपने आगे कणाको साधे ठोकर मारें। जब द्विभुजका मेजपर रखते हैं तो मेजके सतहमें प्रेरित कम्पन पट्टा जाता है और वह तन्त्रा वायुक काफ़ी लम्बे चौड़े तलका आन्तलित कर देता है। इस आन्तलित तलके वायुक-कण अपने आगे कणाका हाँककर मारते हैं क्योंकि चक्कर काटनेकी गुजाइश अब न रही। इस प्रकार जो

ध्वनि हम सुनते ह वह अमलमें अनुनादकी ही होती है । इससे यह सिद्ध ह कि बाजाकी बनावटमें अनुनादक बडे आवश्यक अग है ।

बाजाके लिए यह भी आवश्यक ह कि उनसे निकलनेवाले सभी स्वराको या कुछ चुने हुए स्वरा और उपस्वराका उनका अनुनादक बराबर ही पुष्ट करे । पर यदि अनुनादकका मुक्त आवृत्ति नादकसे निकले हुए बीचके किसी एक स्वरपर पडे ता वह स्वर बहुत ही तीव्र हा उठेगा । इससे बचनेके लिए यह आवश्यक ह कि अनुनादककी मुक्त आवृत्ति बाजे या नादकके स्वरके विस्तारके बाहर पडे । हमने देखा ह कि दो अनुनादकाके अनुयागस मुक्त आवृत्ति एक जोर तो नीचे उतर आती है और दूसरी जोर ऊँचे चढ जाती ह । इससे दानाके बीचका अन्तर बढ जाता ह जिनके बीच बाजेके स्वराका सारा क्षेत्र समा सकता ह । ऐसा होनेसे बाजेके किसी भी स्वरके साथ अनुयुक्त अनुनादकी मुक्त आवृत्तिका मल न होगा और सभी स्वराको अनुनादकस लगभग बराबर पष्ट मिलेगी ।

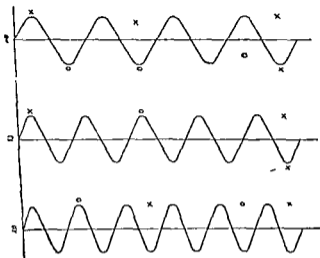


८ डोल और परिणामो स्वर

४३ जब दो स्वराकी आवृत्तियामें बहुत अधिक अन्तर होता है तो ऐसे स्वराको साम ताय सुननपर भी कानाको इनके अलग अलग अस्तित्व का बोध होना है। जब इनकी आवृत्तिया एक हो जाती है तो दोनों स्वर एक-दूसरेसे ऐसे मिल जाते हैं कि इनके अलग-अलग अस्तित्वको धारणा नहीं होती। पर जब दानाकी आवृत्तियामें बहुत थोड़ा अंतर रहता है तो दाना स्वर मिले हुए-से तो मालूम होते हैं पर यह संयुक्त स्वर कभी जाह का जान पड़ता है और कभी धीमा हो जाता है अर्थात् स्वर ठठ-उठकर गिरता हुआ-सा जान पड़ता है। इस प्रकार तीव्रताके घटने-बढ़नेसे एसा आभास हाता है जैसे स्वर हिल रहा हो। इस हिलनेका ही 'डोल कहते हैं। यदि एक स्वर किसी दूसरे स्वरसे धीरे धीरे मिलाया जाये तो पहले इस डोलकी गति तीव्र होगी फिर कमजोर होगी और अन्तमें डोल बिल्कुल गायब हो जायेंगे। इस दशामें दाना स्वर पूरा तरह मिला हुआ समझा जायेगा।

दो स्वराके मेलम डाल कस पना होना है यह आगे बताया जाता है।

अनुच्छेद २० में तरंग-संयोगकी विधि बताया गया है और अनुच्छेद ३१ में यह बताया गया है कि अगर दो तरंगें बराबर मान और विस्तारक हाता उनके संयोगसे एक ऐसी तरंग बनती है जिसका विस्तार दूना और तीव्रता धीगुनी हाती है। अब यह विचार करना है कि अगर दो तरंगोंकी आवृत्तियामें बहुत ही थोड़ा अंतर है और विस्तार लगभग बराबर हा तो क्या परिणाम होगा। आवृत्तिमें थोड़ा अन्तर होनेका मतलब है कि तरंगमानमें भी थोड़ा ही अन्तर है।



आकृति २२

मान लो कि तीन ढिभुज ह जिनमेंसे ँककी आवृत्ति ४, दूसरेकी ५ और तीसरेकी ६ प्रतिसेकण्ड ह । यह ठीक ह कि इतनी घुडी आवृत्तिसे स्वर पदा नही हुता । पर यहाँ मोटे तौरसे समस्याको समझनके लिए ँसा मान लिया गया ह । पहला ढिभुज ँक सेकण्डमे ४ तरंगें पदा करेगा जो आ० २२ (१) म दिखाया गया ह । उतनी ही दूरीमें दूसरे ढिभुजके ५ तरंगें (२) और तीसरे ढिभुजके ६ तरंगें (३) आ जायेंगी क्वाकि तीना ही ढिभुजक स्वर वायुम बराबर ही वेगसे चलते ह । अब जब पहला और दूसरा ढिभुज साथ साथ वजते हैं ता दोनोकी ध्वनि तरंगें वायुम ँक दूसरपर पडती हैं । इन दोना तरंगके सयोगका परिणाम तरग (२) को तरग (१) पर डालनस जाना जा सकता ह । तरग (२) को तरग (१) पर डालनसे (२) का पहला उभार (१) का पहली उभारपर और (२) की आखिरा खाल (१) की आखिरी खालपर पडती ह । ये

स्थान चौरों (x) में विहित किये गये हैं । पर बीचमें ० विहित स्थान पर (२) की उभार (१) की छालपर पड़ती है । इसलिए गुरु और आश्रितमें ता ध्वनिकी तीव्रता बहुत बढ़ जायेगी और बीचमें प्रायः गूँथ हो जायेगी । इसलिए स्वर एक सेकेण्डमें एक बार घामा होकर तेज हो जायेगा । अपान कानोंको एक सेकेण्डमें एक डाल का अनुभव होगा । इसी प्रकार अगर तरंग (३) का तरंग (१) पर डालें तो गुरु और आश्रितमें तो क्रमशः उभार उभारपर और खाल खालपर पड़गी ही पर बीचमें भी खाल खालपर पड़गी । इसका अतिरिक्त बोचक दाना और ० विहित दो स्थानोंपर क्रमशः उभार खालपर और खाल उभारपर पड़गी । इसलिए ध्वनिका तीव्रता एक सेकेण्डमें दो बार गिरगी और दो बार उठगी जयान्त १ सेकेण्डमें दो डाल सुनायी देंगे ।

इस दृष्टान्तसे डालकी उत्पत्तिकी प्रक्रिया समझमें आ जाता है । साथ ही-साथ यह भी मालूम होना है कि दो स्वराका आवृत्तियामें जिनका अन्तर होगा एक सेकेण्डमें उतने ही डाल सुन पड़ेगें ।

डाल स्पष्ट सुनायी दे इसके लिए यह आवश्यक है कि दाना स्वराकी तीव्रता लगभग बराबर हो क्योंकि सभी तीव्रता पूरी तरह गिर और उठ सकती है ।

यह मध्य लेना चाहिए कि डाल कानका अनुभव मात्र या विकार नहीं है । यह क्रिया निश्चित रूपसे माध्यममें होती है । इसलिए वास्तविक है । इसकी वास्तविकता यहाँतक सिद्ध है कि अगर दो डिम्बुजाको जिनकी आवृत्तियामें दो-द्वारका अन्तर ही एक चौथापर बँटाकर बजावें और चौकीपर अगुली रखें तो वह भी डालका अनुभव करगी ।

गद्यमें इस डालका जच्छी तरह जानते हैं क्योंकि इसे ही पकड़कर वे स्वराका पूरी तरह मिलान कर सकते हैं । दो तारोंके स्वराका मिलानमें जब डाल सुनायी पड़ने लगता है तो समझा जाता है कि दोनों स्वर एक दूसरेके बहुत निकट आ गये हैं । जब यह डाल घीमा जाने-हीन शायद

हो जाता है ता दोना स्वर बिलकुल मिल जाने हैं । इस मिलानकी जगहसे किसी एक तारक स्वरका चाहे नीचे गिमकायें या ऊपर दानों ही हालतामें डोल पत्ता ही जायेंगे । इसलिए डोलका पकड़कर स्वराका बडा ही मत्वा मिलान हाता है ।

पर स्वराके मिलानका साधन हानमें ही डाटका मूल्य नहीं है । हेल्महाजने डोलके आधारपर ही स्वराके सवाद और विवादको समझाया है इसीलिए यह सगीतकी दृष्टिसे बने महत्त्वकी बात हा गयी है ।

४४ जब दो स्वराकी आवृत्तियामें अधिक अंतर हाता है तो प्रति सेकेण्ड डाटकी गिनती इतना बढ जाती है कि बान इन्हें नहीं पकड़ पाते । पर अगर दाना स्वर काफ़ी तीव्र हा तो एक तीसरा स्वर सुनाया पत्ता है जिमकी आवृत्ति दोना स्वराके अंतरके बराबर होता है । जैसे अगर एक स्वरकी आवृत्ति ३०० हा और दूसरेकी २०० तो एक तीसरा स्वर सुनायी पड़ेगा जिमकी आवृत्ति १०० होगी इन्हें 'शपिक स्वर' कहते हैं । ऐसे स्वराका पता पहले डीसोर्जन और पोछे टार्टिनीन लगाया था । डाटकी तरह ही शपिक स्वर भी दो स्वराके अन्तरपर निर्भर है । इसलिए पहल बचानिकाकी यह धारणा भी कि जब डोलकी गिनती बहुत बढ जाती है ता वही स्वरका रूप ले लेता है । पर बादको हेल्महाजने ऐसे स्वराका भी पता लगाया जिमकी आवृत्ति दाना स्वराके जाडक बराबर हाती है । इसे 'योगिक स्वर' कहते हैं । जैसे ऊपरके उदाहरणमें योगिक स्वर ५०० आवृत्तियाका होगा । ऐमा स्वर कठिनाईसे सुन पडता है । शपिक और योगिक इन दोनों ही प्रकारके स्वराके लिए 'परिणामी स्वर' का व्यवहार हाता है । जब परिणामी स्वर दोना ही प्रकारका होना है ता डाल इसका कारण नहीं हा सकता । इसीलिए हेल्महाजने एक नये गिड्यातस इन स्वराके अस्तित्वकी सिद्ध किया । उसने यह बताया कि जब दो तारक स्वर एक साथ माध्यमक अणुआपर पडते हैं ता उनक कम्पनक ढगम विपमता आ जाती है । इस विपमताको गणितका कसौटीपर कसकर उसने यह परि-

णाम निकाला कि इन दोना स्वराक अलावा शपिक और यौगिक स्वर माध्यममें आपस आप पदा हो जाते ह । अनुनादके द्वारा उसने यह भी सिद्ध कर दिया कि य दोना ही स्वर डोल्की तरह ही वास्तविक ह, कानके विकार नहीं ।

ह महाजक सिद्धांतके अनुसार शपिक और यौगिक स्वराकी उत्पत्ति के लिए स्वराका तीव्र होना आवश्यक ह । पर बादका यह पता चला कि सामान्य तीव्रतापर भा परिणामी स्वर सुनायी पडते ह । पूरी जांचपर यह पाया गया कि सामान्य तीव्रतासे उत्पन्न परिणामी स्वर कानामें ही पदा होत ह बाहर माध्यममें इनका अस्तित्व नहीं होता । ऐस परिणामी स्वर स्वसवेद्य ह ।

वास्तविक और स्वसवेद्य, इन दोना ही प्रकारके परिणामी स्वराके व्याख्या वाइजमानन एक व्यापक कल्पनाम की । उसने यह बताया कि अगर किसी वस्तुका कम्पन आग और पीछ, दोना ही दिशाआमें, एक-सा न हा, जमे मान लो कि एक ओर विस्तार अधिक हो और दूसरी ओर कम ता दोना ही प्रकारके परिणामी स्वर आपस आप पदा हा जायेंगे उसन चमडके परदेके साथ प्रयोग करके भी इस बातका सिद्ध किया । कानके परकी घनावट इसी तरहकी ह क्योंकि इसक एक आर तो हवा रहती ह और दूसरी आर हड्डियाँ । हालम वैज्ञानिकाने यह बताया ह कि कानके भीतरी हिस्सामें भी इसी प्रकारकी विषम गति होता ह । इस विषमताके कारण ही थोड़ी तीव्रतापर भी कान परिणामी स्वराका पदा कर देत है पर वायुके अनुजक कम्पनम यह विषमता अधिक तीव्रतापर ही आती ह इसलिए मामूली तीव्रतापर वायुम परिणामी स्वर नहीं पदा होत जमा कि हे महाजन बताया ह ।

य परिणामी स्वरकेवल मौलिक स्वरासे ही नहीं बल्कि उनके आगिक भी पदा हाते ह । जस ऊपरके उदाहरणमें दूसरे स्वरका दूसरा आगिक ४०० और पहले स्वरका दूसरा आगिक ६००, २०० आवतियाका शपिक

और १००० आवृत्तियाँ योगिक स्वर पदा करेंगे। ये दोनों क्रमशः मौलिक शक्ति और योगिक दूसरे आदि ह। इसमें सन्देह नहीं कि आधुनिक उत्पन्न परिणामी स्वर सदा कानों ही पदा ह।

शक्ति स्वरों का उपयोग टेलीफोन लाउडस्पीकर, सीटी आदि अनेक उपकरणों तयार करने में किया जाता ह। पर संगीत में इनका विशेष महत्त्व ह क्योंकि स्वरों के सवाद विवाद पर इनका बहुत बड़ा असर पड़ता ह।



६ स्वर और ग्राम

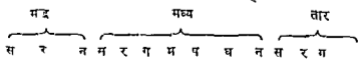
४५ हम देखते हैं कि सगीतम नाद एक ही स्थानपर स्थिर नहीं रहता वह कभी ऊपर चढ़ता है कभी नीचे उतरता है। यहाँ तक कि मामूली बोल चालमें भी गम्भीरकी तारतामें कुछ न-कुछ अंतर होता ही है। पर मुख्य बात यह है कि नादका इस प्रकार ऊपर चढ़ना या नीचे उतरना लगातार नहीं होता। वह एक एक सीढ़ी ऊपर चढ़ता और एक एक सीढ़ी नीचे उतरता है। अगर नादका पहला स्थान २४० आवृत्तियाँ हों तो दूसरा स्थान २७० आवृत्तियाँ होगा। इन दानाके बीच नादक अनन्त विराम हो सकता है। पर सगीत या मामूली बोल चाल में इन अनन्त विरामोंका उपयोग नहीं होता। नादके इस चढ़ाव उतारमें वह जिन जिन नोटोंका या तारताओंपर ठहरता है उन्हें ही सगीतक स्वर कहते हैं।

सगीतकी पुरानी और नयी सभी पद्धतियोंमें नादके दो सीमा न विराम माने गये हैं। यह सभी जगह एक स है। निचली सीमाका जो स्वर माना जाता है ऊपरली सीमाका स्वर उससे दूना आवृत्तिका होता है। अगर निचली सीमाका स्वर २०० आवृत्तियाँ हों तो ऊपरली सीमाका स्वर ४०० आवृत्तियाँ होगा और अगर निचली सीमा ३०० की हो तो ऊपरली सीमा ६०० की होगी अर्थात् ऊपरली सीमाका स्वर निचली सीमाका स्वर का आवृत्तिका होता है (अनुच्छेद २५) इसीलिए सभी पद्धतियोंमें इस दाना 'षड्ज' या संस्कृत रूपमें 'स' और दूसरे स्वरका तार पडज या स कहते हैं। पहले स्वरका साधारण बोल चालकी भाषामें 'सुर' कहते हैं। चाहे जिस किसी आवृत्तिका ध्वनिपर 'सुर' बाँध, उस पडज कहेंगे। फिर इसी 'सुर'से और और स्वरोंको ऊँचाई-नीचाई नापी जायगी, जिस तरह समतल जमीनसे

ऊँचाई नीचाई नापकर कहत ह कि यह मकान इतना ऊँचा ह या यह कूआ इतना गहरा ह । शास्त्रीय परिभाषाम 'सुर'को स्वरित कहा जायेगा । दूसर मभी स्वराका मान इम स्वरितपर ही निर्भर है । अय स्वराकी तारता चाहे न बन्ले पर 'स्वरित' बदलनम उनको प्रकृति ही बदल जाती ह ।

स और स-क बीच प्राय सभी जगह स्वराकी छह सोडिया कायम की गयी है । बाचके इन छह स्वराक साथ पहला स्वर मिला दनस सात स्वरा का एक सप्तक हाता ह । पश्चिमी पद्धतिमें इन साताके साथ आखिरका स्वर मिलाकर एक अष्टक मानते है । सप्तक या अष्टकक मात स्वराक भिन्न भिन्न नाम दिये गये है । हिन्दुस्तानी पद्धतिमें इन्हें क्रमश पडज ऋषभ, गाघार, मध्यम, पञ्चम धवन निषाद ओर तार पञ्ज या मकेनरूपम म, र, ग म प घ, न सकहते ह । विलायती पद्धतिमें इन्हें C D E F, G, A B c कहत ह या साल्फा पद्धतिमें do ri mi fa sol, la, si, do (डो, री ली, फा साल् ला सी डा) कहत है ।

ऊपर कहे हुए सीमा व घनस यह न ममझना चाहिए कि मनुष्यक स्वरका विस्तार इमो एक सप्तक तक सामित ह या सगोतकाम चार डस सीमाके भीतर ही हाता ह । मनुष्यका स्वर और सगोत इन दाना सामाझाको लंबिकर एक ओर बहुत ऊँच तक और दूसरी ओर बहुत नाचे तक जाता ह । इसीलिए हिन्दुस्तानी पद्धतिमें मन्, मध्य और तार नामक तीन सप्तक मान गये ह । भिन्न भिन्न सप्तकामें एक हा स्वर दोहराय जाते है । सकेतमें तीना सप्तकाका विस्तार नाचे दिया जाता ह ।



तार सप्तकके स, र, ग आदिकी आवृत्ति क्रमश मध्य सप्तकक म, र, ग आदिकी आवृत्तिस दूनी हाती ह । इसी प्रकार मद्र सप्तकके म, र, ग

गु आदिका आवृत्ति क्रमशः मध्य सप्तकक स, र ग आदिकी आवृत्तिसे जाधी हाता ह । मनुष्यक गलवा खयाल करके ही ये तीन सप्तक मान गय ह नही तो तारसे भी ऊपर अतितार जोर मद्रस भी नीचे अतिम द्र सप्तक हा मक्त ह । विनायती वाता प्यानाम सात सात सप्तकके स्वर बढाय हात ह ।

४६ स्वराक समूहका ग्राम कहत ह । ग्रामम सातसे जविक स्वर भी रट सरत ह । ग्रामका भेद, अघलम स्वराकी स्थितिपर निर्भर ह । अगर एक ग्रामका र किसा दूसर ग्रामक र' स कुछ नीच उतरा हुआ हा ता दाना दो ग्राम समझ जायगे । उत्तर भारतम प्रचलित हिन्दुस्तानी ग्राम जोर पश्चिमके जावुनिक ग्रामका मिलान करनस यह भेद समझम आ जायगा । नीचे प्रत्येक स्वरकी जावृत्तिके साथ दाना ग्राम दिये गय ह ।

स र ग म प ध न स

हिन्दुस्तानी ग्राम—२४० २७०, ३००, ३२०, ३६० ४०५ ४१०, ४८०

विलायता ग्राम—२४० २७०, ३०० ३२०, ३६० ४०० ४५० ४८०

इन दो ग्रामम ध का छाड वाकी स्वर एक स हा ह । ध हिन्दुस्तानी ग्राममें कुछ चला हुआ ह । इन्हीसे ये दाना ग्राम दा समथ जात ह ।

भारतवपम, बहुत हा प्राचान कालम शायद तीन ग्रामका प्रचार था । ये 'पडज ग्राम मध्यम ग्राम जोर गाधार ग्राम क नामस पुकार जाते थ । भरत कालम ग-ग्रामका लाप हो गया और दो ग्राम रह गय । बादका म-ग्राम भी गायन हा गया और कवल पडज ग्रामका प्रचार रहा । इन तीना ग्रामका भेद भी स्वराका आपेक्षिक तारताक कारण ही था । ऊपर जा हिन्दुस्तानी ग्राम लिया गया ह, वह भागलखण्ड आदि मगोल शास्त्रिया द्वारा स्वाकृत ग्राम ह ।

४७ यह दखा जाता ह कि एक हा गाना चाह काइ नाच स्वरस शुरू कर या ऊच स्वरस, उसके रूपम काई भेद नही पटना । यही तक कि जय एक लडना और युवक साथ-साथ गात ह तो दानाके स्वराकी तारताम

अंतर रहना ह पर दोनाके गममें निकले हुए गानके स्वरोका पारस्परिक सम्बन्ध गऊ सा ही रहता ह । इसमें यह जान पडता ह कि ग्रामने स्वरादा मध्य सीधे आवृत्तिपर निर्भर नहीं ह । मध्य सप्तकमें म के वाद र कहें तो वह ठीक वसा ही मालूम हीगा जसा तार सप्तकम म के वाद र कहने पर । इसलिए स और र के बीचका अवकाश चाहे जैसे भा नापा जाय दाना ही सप्तकाम बराबर आना चाहिए । अब अगर मध्य सप्तकम म की आवृत्तियाँ २४० ह और र की २७० तो तार सप्तकम म की आवृत्तिया ४८० हागी और र की ५४० क्योंकि तार सप्तकके सभी स्वराकी आवृत्तियाँ मध्य सप्तकके स्वराकी आवृत्तियोंसे दूना हो जाती ह । यहाँ अगर आवृत्तिके अ नरसे इन दोना स्वराके अवकाशको नापें ता मध्य सप्तकका अवकाश ३० और तार सप्तकका ६० हो जाता ह । इसलिए इस तरीकर अवकाशका कोई निश्चित माप नहीं हो सकता । पर अगर स और र की आवृत्तियाका अनुपात लें ता एन निश्चित माप निकल आता ह । मध्य सप्तकमें यह अनुपात $\frac{270}{240} = \frac{9}{8}$ ह । तार सप्तकम भी यह अनुपात $\frac{540}{480} = \frac{9}{8}$ ही होगा । इसलिए दो स्वरोके बीचका अवकाश इनकी आवृत्तियाके अनुपातस बराबर ऊच स्वरकी आवृत्तिका नीच स्वरकी आवृत्तिसे भाग देकर निकाला जाता ह । स्वराके बीचके अवकाशको 'अंतराल' कहत ह । ऊपरके हिमावस अगर स की आवृत्तिया २०० हा तो र की आवृत्ति २२५ हागा । क्योंकि दानाहा अंतराल $\frac{9}{8}$ ही होना चाहिए । कोई गरया चाहे किसी भी आवृत्तिपर म बाधे उसके र की आवृत्ति स का आवृत्तिकी $\frac{9}{8}$ गनी जानी चाहिए । क्योंकि स और र का यन अंतराल सप्त बराबर होना चाहिए । इसमें थोडा भी अंतर जानसे गरया बेगुरा समया जायेगा ।

ऊपरके हिमावस मध्य स और तार स का अंतराल २ होता ह । यह एक सप्तकका अंतराल ह जा मभा जगह, सभी ग्राममें इनना ही होना ह । ऊपर स्वराका आवृत्तियाँ ली गयी ह । इनसे हिमाव लगाकर सप्तकके सभी स्वराका स अंतराल निकाला जा सकता ह । नीचे दोना ग्रामने

लिए स से भिन्न भिन्न स्वराके अंतराल दिय गये हैं—

	स	र	ग	म	प	ध	न	स
हिन्दुस्तानी ग्राम—?	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{4}$	$\frac{1}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{2}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$	२
विलायती ग्राम—?	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{4}$	$\frac{1}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{2}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$	२

य सारे अंतराल स स निकाल गये हैं जिस स्वरित कहत ह और इस ही ग्रामका आधार मानते ह । जस, स और ग का अंतराल ग की आवृत्ति ३०० म स की आवृत्ति २४० का भाग दकर $\frac{300}{240} = \frac{5}{4}$ निकलता ह । इसी रीतिम र और ग का अंतराल भी निकाला जा सकता ह जस, ग की आवृत्ति ३०० में र की आवृत्ति २७० का भाग दनेस $\frac{300}{270} = \frac{10}{9}$ निकलता ह जा र और ग व बीचका अंतराल ह । इस प्रकार सभी स्वराक पारस्परिक अंतराल निकाल जा सकत ह । नीच पाम पामके हर दा स्वराक अन्तराल दिये जाते हैं—

	स	र	ग	म	प	ध	न	म
हिन्दुस्तानी ग्राम—	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{4}$	$\frac{1}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{2}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$
विलायती ग्राम—	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{4}$	$\frac{1}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{2}{3}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{2}$

इस सारिणाको दखनेसे पता चलता ह कि दोना ही पद्धतिपाके ग्राम तीन प्रकारके अंतरालास बन है—पहला $\frac{1}{2}$, दूसरा $\frac{1}{4}$ और तीसरा $\frac{1}{3}$ । इनमें पहला सबसे बड़ा और तीसरा सबसे छोटा ह । इसीलिए पहलेको 'गुह स्वर' दूसरेको लघु स्वर और तीसरेको अथ स्वर बतत ह । यहाँ 'अथ स्वर' का यज्ञ अर्थ नही कि वह गुह या लघुका ठीक आधा ह । अथ विनोपण सिर्फ उसकी छोटाईको बताना ह । प्राचीन पद्धतिमें भी भरतके मतानुसार तीन प्रकारके स्वर मान गये हैं—एक चतुश्रुतिक दूसरा त्रिश्रुतिक और तीसरा द्विश्रुतिक । ये क्रमग गुह लघु और अथ स्वरके ना पयाय ह ।

ऊपरका सारिणीपर ध्यान दनेस यह भी पता चगा कि हिन्दुस्तानी

और विलायती ग्रामाका भेद केवल स्वरके क्रममें ह । जहा हिन्दुस्तानी पद्धतिम ध गुरु स्वर और न लघु स्वर ह वहा विलायती पद्धतिम ध लघु स्वर और न गुरु स्वर ह ।

यहा यह बताना आवश्यक ह कि 'स्वर शब्दका व्यवहार दो अर्थमें होना ह । एक ता विशेष आवृत्ति या तारताके नादका स्वर कन्ते है दूसरे, ऐम दा नादके अन्तरालको भी स्वर कहते है । जब हम गुरु या लघु स्वर कहते है तो हमारा मतलब गुरु और लघु अन्तरालसे ही होता है । प्राचीन भारतीय पद्धतिम ता स्वरका व्यवहार अन्तरालके ही अर्थमें होना था ।

४८ जैसे अन्तरालके मापमे विनियोगना ह वसे ही अन्तरालके जोड़ घटाने मे भी विशेषता ह । जब दो अन्तरालको जोड़ना जाता ह तो उन्हें एक दूसरेस गुणा करते ह और अब किसी बड़ अन्तरालसे किसी छोटे अन्तरालको घटाना होना ह तो बड़ेमें छोटेका भाग दत ह । यह बात उदाहरणसे स्पष्ट हो जायेगी । यह बताया जा चुका ह र ग अन्तराल $\frac{1}{2}$ ह और ग म अन्तराल $\frac{3}{4}$ ह । अब र ग म ग म जोड़नेसे र म अन्तराल निकल आना चाहिए । पर यह $\frac{1}{2}$ और $\frac{3}{4}$ को जोड़कर नही बल्कि दोनाका गुणा करके निकल गा । इस हिसाबसे र म अन्तराल $\frac{1}{2} \times \frac{3}{4} = \frac{3}{8}$ हुआ । अब पहली सारिणीस र और म का आवृत्ति लेकर अन्तराल निकालो । र की आवृत्ति २७० और म की २२० ह । इस हिसाबसे र म का अन्तराल $\frac{270}{220} = \frac{27}{22}$ हुआ जो र ग और ग म अन्तरालका गुणा करनेपर निकला था । इस र-म अन्तरालमें म प अन्तराल और जाडो । म प अन्तराल $\frac{1}{2}$ ह इसलिए र प अन्तराल $\frac{27}{22} \times \frac{1}{2} = \frac{27}{44}$ हुआ । प की आवृत्ति ३६० और र की २७० ह । इसलिए इस हिसाबसे भी र-प अन्तराल $\frac{360}{270} = \frac{4}{3}$ ही हागा । एक सप्तक के सभी अन्तरालको जोड़नेसे स और स का अन्तराल निकल आना चाहिए जा २ ह । सामरा सारिणीक सभी अन्तरालको गुणा करनेसे भी २ ही निकलता ह । इन उदाहरणामे यह सिद्ध होता ह कि अन्तरालको जोड़ना ही ता उन्हें गुणा करना चाहिए । वसे ही, स ग अन्तरालसे स र अन्तराल

घटानेम र ग अंतराल निकलना चाहिए जो $\frac{1}{4}$ है। म ग अंतराल $\frac{1}{4}$ है और स र $\frac{1}{4}$ । यहाँ $\frac{1}{4}$ में $\frac{1}{4}$ का भाग देनेसे इष्ट अंतराल $\frac{1}{8}$ निकल आता है।

४६ अत्र अंतराल नापनका दो विधियाँ और बतायी जाती हैं। ऊपरका विधिमें दो गणवड बाने हैं। एक तो यह कि अंतरालका जाडने घटानम $\frac{1}{8}$ गुणा भाग करना हाता है। दूसरी यह कि भिन्नवाला मस्याम अंतरालको छोटाई-बडाईका पना सत्याको देखते ही नष्टा करना। यहातक कि $\frac{1}{8}$ बडा है या $\frac{1}{8}$ यह भा तरकाल बनाना कठिन है। पर गणितम एक विधि बतायी गयी है जिमम गुणा करना होता है ता घानाका जोडकर गुणनफल निकालने है। इस लॉगरिद्म कहते हैं। इस विधिमें गुणाकी क्रियाके बन्ले आरकी क्रिया करनी गनी है। यह अंतरालके जोडन घटानक लिए बनी उपयुक्त विधि है।

लॉगरिद्म यहाँ ममनाया नही जा सकता। पर एक प्रयागकी विधि बतायी जाती है जो उसके सिद्धांतके बिना गमये भा करती जा सकती है। चाञ्चरम लॉगकी एक सारिणी मिलती है जिसमें प्रत्यक अंकका लॉग दिया होता है। अब अगर म-ग अंतराल निकालना है जो ऊपरक विभावस $\frac{1}{4}$ है ता सारिणास $\frac{1}{4}$ का लॉग लें ला। यह ५ क लॉगम ८ का लॉग घटानस निकालेगा। जहाँ भी भिन्नका लाग निकालना हाता है वहाँ अगक लॉगमें स हरका लॉग घटाया जाता है। इस प्रकार भिन्न अंतरालका लॉग निकाल कर उममें १००० का गुणा कर दनस अंतरालका नया माप निकल आना है। इस एक प्रामासा बतानिकक नामपर 'सबट' कहत है। अगर सब अंतराल सबम ही नापे गय है ता दा अन्तगताका जानक लिए इहें अब गुणा नही करना पडना सीध जाणा हाता है।

भिन्नक पमानपर ए- अष्टकका अंतराल है अथवा २ है। लॉगकी सारिणामें २ का लॉग ३०१० मिलेगा। इस १००० में गना करनपर सेबटके पमानमें एक गप्तकका अंतराल ३०१ सेबट निकलता है। दूसर अंतराल भी लॉगकी सारिणीकी मत्यानास बनी आसानीसे निकाले जा सकत है।

नीचे मुख्य अंतरालके माप दिये जाते ह ।

पूरे सप्तकका अंतराल (२)	३०१	सेवट
गुरु स्वर ($\frac{5}{4}$)	५११	,
लघु स्वर ($\frac{9}{8}$)	४५८	,
अध स्वर ($\frac{9}{8}$)	२८	,

इस मापमें स्वरकी बड़ा छोटाइ साफ मालूम हाती ह । यह भी प्रबट हाता ह कि अध स्वर गुरु और लघु दाना स्वराक आधेस वण ह । इस विधिसे अगर स ग अंतराल निकालना हा तो वह स र गुरु स्वर और र ग लघु स्वर, इन दानाका जाडनस निकलगा अथात् स-ग अंतराल $५११ + ४५८ = ९६९$ सेवट होगा ।

एलिमका सेण्टका माप सेवटके मापस कुछ भिन्न ह । यह खास तीरस १२ सम स्वरावाल साधारण ग्रामके लिए उपयुक्त ह (अनुच्छेद ६८) । जहा भिन्न अंतरालका लाग लेकर उस १००० से गुणा करनेपर सवट निकलता है, वही भिन्न अंतरालके लागम २ के लागमे भाग देकर उस १२०० स गुणा करनेपर एलिमका सण्ट निकलता ह । पूरे सप्तकका भिन्न अन्तगल २ ह । इसका लाग ३०१० हुआ । इसम २ का लाग ३०१० से भाग देनेपर १ हुआ । इसम १२०० का गुणा करनेस १२०० सण्ट निकलता अथात् एलिमका विधिस पूरे सप्तकका अंतराल १२०० सेण्ट हाता ह । इसी तरह गुरु स्वरका भी अंतराल निकाला जा सकता ह । लागको सारिणीस पता चनेगा $\frac{5}{4}$ का लाग ०५११ ह । इसमें लाग २ अथात् ३०१० का भाग देकर १२०० स गुणा करनेपर २०३७ सेण्ट निकलता ह । इस मापमें नाच मुख्य अंतराल दिये जात ह ।

सप्तक	१२००	सेण्ट
गुरु स्वर	२०३७	,
लघु स्वर	१८२६	"
अध स्वर	१११६	"

इसका जाड घटाव भी सवटकी तरह ही सीधा हाता ह ।

सवटके मापम $\frac{1}{2}$ या $\frac{3}{4}$ का गुणा करनेस सण्टका माप निकल

आता ह अर्थात् मेष्टका माप सवटस लगभग चौगुना हाता है ।

साधारण ग्रामक १२ बराबर स्वर होत ह, जिनका व्यवहार हामों नियम, प्याना आदिमें होता ह । सवटक हिसाबसे इस ग्रामके प्रत्येक स्वरका मान $\frac{200}{12}$ अर्थात् लगभग १६.६६ सेवट हागा । एलिसव हिसाबसे प्रत्येक स्वरका मान पूरा १०० सष्ट होगा ।

५० नीचे हिन्दुस्तानी और बिलायती शुद्ध ग्रामकी सारिणियां दी जाती ह जिनमें अनंतराल तीना माप मूलभावे लिख अगुन बगल दज किये गय ह ।

हिन्दुस्तानी शुद्ध ग्राम—

सारिणी ३

स्वर	अंतराल (भिन्न)		अंतराल (सेवट)		अंतराल (सष्ट)	
	स	से	स	से	स	से
स	१	$\frac{2}{3}$	०	५११	०	२०४
र	$\frac{२}{३}$	$\frac{१}{३}$	५११	४५८	२०४	१८०
ग	$\frac{४}{३}$	$\frac{१}{३}$	०६०	२८१	३८६	११२
म	$\frac{५}{३}$	२०	१२५०	५११	४९८	२०४
प	$\frac{८}{३}$	$\frac{२}{३}$	१७६१	५११	७०२	२०४
ध	$\frac{१०}{३}$	$\frac{१}{३}$	२२७२	४५८	००६	१८२
न	$\frac{११}{३}$	$\frac{२}{३}$	२७८२	२८०	१०८८	११२
मं	२		३०१०		१२००	

१० विकृत स्वर और साधारण ग्राम

५१ ऊपर दिये हुए हिंदुस्तानी और बिलायती ग्रामक स्वराका गुद्ध स्वर कहते हैं। इन स्वराकी तारताको थोड़ा घटा या बढ़ाकर इन्हें विकृत किया जा सकता है। जब तारता घटायी जाती है तो ऐसे विकृत स्वरको 'कामल' कहते हैं और जब तारता बढ़ायी जाती है तो इन्हें तीव्र कहते हैं। भातखण्डकी हिंदुस्तानी पद्धतिमें स्वरक नाच एक पड़ी रखा खीचकर कामल का और स्वरक सिरपर एक लड़ी रखा खीचकर तीव्रका प्रकट करते हैं। जस कोमल गांधारका सकेत ग और तीव्र मध्यमका सकेत म है। पर इस पुस्तकमें कामलको हलतस और तीव्रको स्वर मकतक ऊपर गहिनी ओर झुकती हुई रखा खीचकर चिह्नित करेंगे जस ग और म।

बिलायती पद्धतिमें ऊपर दिये हुए स्वरावाल ग्रामक अठारवा एक और ग्रामका प्रचार है जिसमें कामल गांधार (ग) का प्रयोग होता है। इस ग्रामका अंतराल नीचे दिया जाता है—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१	$\frac{१}{८}$	$\frac{६}{८}$	$\frac{६}{८}$	$\frac{३}{२}$	$\frac{५}{३}$	$\frac{१५}{८}$	२
}		}		}		}	
$\frac{१}{८}$		$\frac{१६}{१६}$		$\frac{१०}{१०}$		$\frac{१६}{१६}$	

इन दोनों ग्रामोंमें गुरु स्वरा और लघु स्वराकी गिनती बराबर ही है। सिर्फ उनके क्रम अंतर है। इन दोनोंका भेद अमलम गुद्ध गांधार और कोमल गांधारके कारण है जिन्हें बिलायती पद्धतिमें गुरु गांधार और लघु गांधार कहते हैं। इसीलिए पहले ग्रामका 'गुरु ग्राम' और दूसरेको लघु ग्राम कहा जाता है।

लघु ग्रामका एक और भेद है जिसमें कोमल गांधारक अतिरिक्त

कोमल धवन और कामल निषादका भी व्यवहार हाता ह। इसका अंतराल इस प्रकार ह—

स	र	ग	म	प	ध्	न	स
१	$\frac{१}{८}$	$\frac{६}{६५}$	$\frac{४}{८०}$	$\frac{३}{३२}$	$\frac{८}{८०}$	$\frac{६}{६५}$	२
}		}		}		}	
$\frac{१}{८}$		$\frac{१}{१६}$		$\frac{१}{१६}$		$\frac{१}{१६}$	

कभी कभी न $\frac{६}{६५}$ के बदल न $\frac{१}{१६}$ का भी प्रयोग होता ह जो पहलसे कुछ उतरा हुआ ह। इसक पारस्परिक अंतराल य ह—

ध्	न	न
$\frac{८}{८०}$	$\frac{१}{१६}$	२
}		}
$\frac{१}{१६}$		$\frac{१}{८}$

इस दूमरे प्रकारक लघु ग्रामका उपयोग स्वराक उतारक ममय ही अथवा अवरोहीमें ही हाता ह। आरोही (चढाव) में केवल ग वाले लघु ग्रामका व्यवहार हाता ह। जस—म र ग् म प ध न स। स न ध् प म ग र स।

कमान्कभी अवरोहीमें र $\frac{८}{८०}$ क बदल कामल ऋषम र $\frac{१}{१६}$ भी कामम लाया जाता ह।

इम तरह विलायती पद्धतिमें गुप्त ग्रामन सात स्वराके अलावा चार कोमल स्वराका प्रयोग हाता ह जा लघु ग्रामक लिए आवश्यक हैं। दाना ग्रामके स्वर मिश्रक ११ हुए।

पर हिन्दुस्तानी पद्धतिमें एक हा ग्राम माना जाता ह जिममें १२ स्वर हात ह—७ शुद्ध और ५ विकृत। विकृत स्वरामें ४ कोमल हात हैं

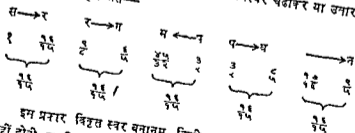
और १ तोत्र हाता ह। जस, र ग, घ न कामल ह और म' तोत्र ह। मध्य युगक थ्रोनिवास आदि शास्त्रकारान इन बारहा स्वराको तारता तारकी लम्बाईसे निर्धारित की ह।

उस हिसाबस इस पद्धतिक र ग म प, न तो इहा नामाक विला यती स्वरास मिलत ह पर र ग म, घ, ध न नही मिलत। आधुनिक शास्त्र कारान मध्ययुगाय और विलायती दाना पद्धतियामें मिलनवाल पाँच स्वराके अलावा घ प्राचीन पद्धतिस और र ग म, घ न विलायती पद्धतिम ल लिये ह। ग, न और घ क अतराल गुढ हिन्दुस्ताना ग्राममें बताये जा चुके ह। यहाँ ५ विकृत स्वरोक अतराल अलग करक दिय जात ह—

स	र	ग	म'	घ	न
१	$\frac{3}{2}$	$\frac{4}{3}$	$\frac{5}{2}$	$\frac{6}{5}$	-

इनम-मे म' विलायती पद्धतिमें कभी कभी काममें आता ह। इम पद्धति क रागोंमें इसका स्थान नही ह। पर हिन्दुस्तानी पद्धतिमें म का महत्व का स्थान दिया गया ह।

५२ य विकृत स्वर गुढ स्वराको एक अधस्वर चढाकर या उतार कर बनाय गय ह। जस—



इम प्रकार विकृत स्वर बनानम किमी नय अतरालका आवश्यकता नहीं होती, कयाकि गुढ ग्रामक ग म के अतरालम जो अध स्वर ह, सभी परिचित ह। पर हरेक गुढ स्वरको भिन्न भिन्न अतरालामें घटा-बढाकर

एक स्वरके अनक विकृत रूप बनाये जा सकते ह । ऐसे तीन अंतरालका विवरण नीचे दिया जाता ह—

१ पूरक अर्ध स्वर—

$$\text{गुरु स्वर—अर्ध स्वर} = \frac{1}{2} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{8} = 23 \text{ सेवट ।}$$

२ लघु-अध स्वर—

$$\text{लघु स्वर—अध स्वर} = \frac{1}{4} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{16} = 17 \text{ सेवट ।}$$

३ कोमा—

$$\text{गुरु स्वर—लघु स्वर} = \frac{1}{2} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{8} = 5 \text{ सेवट ।}$$

उदाहरण—

म गुरु म से एक पूरक अर्ध स्वर ऊंचा ह

$$\text{क्योंकि, म—म} = \frac{1}{2} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{8} \text{ ।}$$

गुरु ग कामल ग से एक लघु अध स्वर ऊंचा ह

$$\text{क्योंकि ग—ग} = \frac{1}{4} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{16} \text{ ।}$$

हिन्दुस्तानी गुरु ध विलायती गुरु ध से एक कोमा ऊंचा है, क्योंकि

$$\text{ध—ध} = \frac{1}{4} \times \frac{1}{4} = \frac{1}{16} \text{ ।}$$

इन अंतरालके प्रयोगसे नये विकृत स्वर भी बन सकते हैं । जैसे, न के एक कामा उतार देनेसे एक नया अतिकोमल न बनता ह । इसका अन्तराल $\frac{1}{2} \times \frac{1}{16} = \frac{1}{32}$ ह, जिमकी चर्चा ऊपर आ चुकी ह ।

जागेकी सारिणामें हिन्दुस्तानी पद्धतिके १२ स्वरका अंतराल दिया जाता ह, जिनमें पहले दो हुई सारिणीके सात गुरु-स्वर भी ले लिये गये ह ।

सारिणी ५

स्वर	अतराल (भिन्न)		अतराल (सेवट)		अतराल (सष्ट)	
	स	स' स पारस्परिक	स	स' पारस्परिक	स	स' पारस्परिक
स	१		०		०	
र	$\frac{2}{3}$	$\frac{2}{3}$	२८०	२८०	११२	११२
र	$\frac{4}{3}$	$\frac{4}{3}$	५११	२३१	२०४	९२
ग	$\frac{5}{3}$	$\frac{5}{3}$	७९१	२८०	३१६	११२
ग	$\frac{8}{3}$	$\frac{8}{3}$	९६९	१७८	३८६	७०
म	$\frac{10}{3}$	$\frac{10}{3}$	१२५०	२८१	४९८	११२
म	$\frac{14}{3}$	$\frac{14}{3}$	१४८१	२३१	५९०	९२
प	$\frac{16}{3}$	$\frac{16}{3}$	१७६१	२८०	७०२	११२
ध	$\frac{17}{3}$	$\frac{17}{3}$	२०४१	२८०	८१४	११२
ध	$\frac{20}{3}$	$\frac{20}{3}$	२२७२	२३१	९०६	९२
न	$\frac{22}{3}$	$\frac{22}{3}$	२५५२	२८०	१०१८	११२
न	$\frac{24}{3}$	$\frac{24}{3}$	२७३०	१७८	१०८८	७०
स	$\frac{25}{3}$	$\frac{25}{3}$	३०१०	२८०	१२००	११२

दाक्षिणात्य या कर्णाटकी पद्धतिमें भी यही बारह अंतराल होते हैं पर उसमें स्वराक नाममें कुछ भेद होता है और शुद्ध स्वर भी दूसरे ही माने जाते हैं । जैसे—

सारिणी ६

हि प क स्वर	कर्णाटकी प क स्वर
स	स
र	र शुद्ध
र	ग शुद्ध या चतु श्रुतिकर
ग	ग साधारण या पटश्रुतिकर
ग	ग अंतर
म	म शुद्ध
म	म प्रति
प	प शुद्ध
घ	घ शुद्ध
ध	न शुद्ध या चतु श्रुतिक घ
न	न कर्णिक या पटश्रुतिक घ
न	न कावली

५३ इन बारह स्वराकी सारिणीस यह न समझना चाहिए कि बारह के-बारह स्वर रागके त्रिए आवश्यक ह । इनमें स मिक सात स्वराकी घुन कर ग्राम बनाया जाता ह, जिस 'ठाठ' कहते हैं । इस चुनावके लिए यह नियम ह कि किसी भी ठाठमें 'स' और 'प' नही छोड़ा जा सकता और एक स्वरके, शुद्ध या विवृत आदि अनेक रूपाम में एक ही लिया जा सकता ह । जमे किसी भी ठाठमें रू र या ग ग, दाना साथ साथ नही रह सकते । इस नियमके अनुसार, १२ स्वरामें-से सात स्वराक अनेक मल हा सकते है, पर हिन्दुस्तानी पद्धतिमें दस ही ठाठ मान गये हं । इस प्रकार जहाँ विलायती पद्धतिमें रागाकी उत्पत्ति दो ही ग्रामा या ठाठासे हाती ह वहाँ हिन्दुस्तानी पद्धतिमें दस ग्रामों या ठाठासे राग निकलत है । इसलिए हिन्दुस्तानी पद्धतिम रागाक जितने भन् हो सकते ह, विलायती पद्धतिमें उतने नहा हो सकते ।

नाच दसा ठाठक सप्तक, स्वराके पारस्परिक अंतरालक साथ दिये जाते हैं । इनक स्वराका पडजस अंतराल ऊपरका सारिणाम जाना जा सकता ह ।

१—विलायत—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
२	१०	१४	२	२	१०	१४	

यही गूढ ग्राम है जो ऊपर दिया जा चुका ह ।

२—लम्माव—

स	र	ग	म	प	ध	नू	स
२	१०	१४	२	२	१४	१०	

३—कापी—

म	र	ग	म	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१		१६		१		१६	
२		२		२		२	

प्राचीन पद्धतिका यह शुद्ध ग्राम ह ।

४—आसावरी—

स	र	ग	म	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१		१६		१		१६	
२		२		२		२	

यह विलायती पद्धतिके लघु ग्रामका अवरोही ह ।

५—भैरवी—

स	र	ग	म	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१६		१		१६		१	
२		२		२		२	

६—भैरव—

स	र	ग	म	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१६		१६		१६		१६	
२		२		२		२	

७—कल्याण—

स	र	ग	म'	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१		१०		१		१०	
२		२		२		२	

८—मारवा—

स	र	ग	म'	प	घ	न	स
}		}		}		}	
१६		१६		१		१०	
२		२		२		२	

९—पूर्वी—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१६ १५		७५ ६४		३	१६ १५		१६ १५

१०—टाड़ी—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१६ १५		१	७५ ६४		१६ १५		१६ १५

इन दस ठाठके स्वर प्रबंधपर ध्यान देनेस पता चलता ह कि बिलावल साम्राज काफी आसावरी भरवी और कल्याण इन ६ ठाठोंमें सप्रत्यकम ३ गुरु स्वर, २ लघु स्वर और २ अध स्वरका प्रयोग हुआ ह। सिफ इनके क्रमम अन्तर है। बाकी चार ठाठाम एक नया स्वर $\frac{७५}{६४}$ अन्तरालका दोलन पटना ह जो गुरु स्वरस एक लघु अध स्वर बडा ह। क्योंकि $\frac{७५}{६४} \times ६ = \frac{३६५}{६४}$ । फिर इन चाराम भी भरव पूर्वी और टाड़ीमें भिन्न भिन्न क्रमस २ अति गुरु स्वर, १ गुरु स्वर और ४ अध स्वर आय ह। सिफ भारवामें १ अति गुरु स्वर, २ गुरु स्वर, १ लघु स्वर और ३ अध स्वरका प्रयोग हुआ ह। इन प्रबंधाका विचार आग किया जायेगा।

५५ अब एक ऐसे ग्रामकी चर्चा की जाती ह जो पूरी तरह बैसुरा (अनुच्छ ६८) हानेपर भा, सबसे अधिक प्रचलित ह। इसे 'समसाधत ग्राम' कहत ह।

मान लिया जाय कि कोई गवया बिलावल ठाठका राग गा रहा ह। उसे किसो बाजको संगति चाहिए। अगर सरंगी या बला जमा बिना सुन्दरीवाला साज हा तो साजिका संगतिम कोई कटिनाइ न हागा। वह पडजके तारको गवयक सुरमें मिला देगा और अगुलियाक अदाजस बिलावल ठाठक स्वर निकालेगा। सिनार इसराज जस सुन्दरीवाले बाजेमें भी रग्याण झगट नही ह। क्योंकि इनमें भा तारको बढ़ा-उतारकर गवयके

सुरमें मिलाया जा सकता है। जरूरत पड़ने पर, सुदुरी विसकाकर भी विलावल ठाठके स्वर बाधे जा सकते हैं। पर हार्मोनियम या प्याना जैसे पटरीवाले बाजामें कठिनाई आ जाती है, जिनकी पटरियाके स्वरको घटाया बढ़ाया नहीं जा सकता। मान लो कि एक हार्मोनियमके एक सप्तकम सारिणी ५ के १२ स्वर बैठे हुए हैं। अगर गवयेका सुर पहली पञ्चकी पटरीम मिल जाता है तो कोई कठिनाई नहीं है। फिर तो गवया चाहे किसी भी ठाठका गाना गावे, हार्मोनियम उसकी सगति करेगा। पञ्चममे सुर मिले तो भी आसानी है। पर यदि गवया मध्यमके स्वरसे गाना चाहे तो हार्मोनियमकी मध्यमकी पटरीको षड्ज मानकर आगे चलना होगा। ऐसा होनेसे, प की पटरीसे र और घ की पटरीसे ग का काम लेना होगा। सारिणी ५ के हिसाबसे घ प से $\frac{1}{2}$ के अन्तरालपर है, पर ग र से $\frac{1}{4}$ पर होना चाहिए। इसलिए इस नये घ के लिए एक नयी पटरी होनी चाहिए। नहीं तो घ की पटरीमे निकलनेवाला ग एक कोमा चढ़ा हुआ बोलेगा। इसी तरह न को भी उतारना होगा। अगर ग को षड्ज मानकर चले तो न तो ध गधारका काम देगा और न 'घ' मध्यमका। इस प्रकार और और स्वरको षड्ज बाधकर चलनेसे भी यही कठिनाई पदा हो जाती है। मतलब यह कि हार्मोनियमके स्वर अगर सारिणी ५ के हिमाबस वधे हैं तो वह भिन्न भिन्न स्वरवाले गवयेकी सगति नहीं कर सकता। हार्मोनियमके स्वर ऐसे हाने चाहिए कि इसमें किसी भी पटरीको स मानकर चले, सप्तक सदा एक सा ही तयार हो। यह तभी सम्भव है जब बारहा स्वरके पारस्परिक अंतराल बराबर हों। सम अंतराल हानेसे ही यह एक नया ग्राम तयार हो गया, जिसके सभी स्वर विचलित हैं। इसीलिए इन्हें समसाधत ग्राम कहते हैं। इस ग्राममें बारहमें से हरेक स्वरके अंतरालको अध स्वर कहते हैं जा शुद्ध ग्रामके अध स्वरमे भिन्न है। यह बताया जा चुका है (अनुच्छेद ४९) कि इस ग्राममें अधस्वर १०० सप्ट या २५ सेवटका होता है। इस ग्रामका विवरण नीचेकी सारिणीमें दिया जाता है।

सारिणी ७

स्वर	साधत ग्राम सण्ट	हि ग्राम सण्ट	वि ग्राम सेण्ट	साधत ग्राम सण्ट	हि शुद्ध ग्राम सेण्ट	वि शुद्ध ग्राम सेण्ट
स	०	०		०	०	०
र	१००			२५ १		
र	२००	२०४	२०४	५० २	५१ १	५१ १
ग	३००			७५ २		
ग	४००	३८६	३८६	१०० ३	९६ ९	९६ ९
म	५००	४९८	४९८	१२५ ४	१२५ ०	१२५ ०
म	६००			१५० ५		
प	७००	७०२	७०२	१७५ ६	१७६ १	१७६ १
प	८००			२०० ६		
ध	९००	९०६	८८४	२२५ ७	२२७ २	२२१ ९
न	१०००			२५० ८		
न	११००	१०८८	१०८८	२७५ ९	२७३ ०	२७३ ०
स	१२००	१२००	१२००	३०१ ०	३०१ ०	३०१ ०

इस सारिणीय पता चलता है कि इस ग्रामम स का छाठ, बाकी सभी स्वर विवृत ह। फिर भी यह ग्राम विलायत और हिन्दुस्तानम एक-सा प्रचलित ह। इस ग्रामका पूरा विचार आगे किया जायेगा। यहाँपर इतना ही बना देना काफी ह कि सगतिके सुभीतके लिए और वह भा पटरावाले या बध एए स्वरक साजाक लिए ही इस ग्रामका प्रचार ह। विलायत और हिन्दुस्तानक सगीतन सबसाधारणक लिए उपयोगी होनेपर भी, सगीतकी दृष्टिम इस ग्रामका हीन काटिका समझत ह।

११ स्वर-सवाद और स्वर-सघात

५५ • यदि तमूरक दो तार एक ही स्वरमें मिले हा ता दानाकी साथ-साथ छेड़नेस उनका मिला हुआ स्वर बहुत ही प्रिय मालूम होता ह । ऐसा ही प्रिय भेल पडज (स) और तार पडज (स) का भी हाता ह । इससे कुछ ही कम स न और स म का सामञ्जस्य है । पर यदि एक तारको स में और दूसरेको र या न में बाँधकर छेड़ें तो इनकी सगति बगै हा कणकट्टु मालूम होगी । जिन दो स्वरोकी सगति प्रिय होती है उन्हें 'सवादी' और जिनकी सगति बट्टु होती ह उन्हें 'विवादी' कहते ह । इस सवाद या विवादका अनुभव सिफ़ दो स्वरोके साथ-साथ उच्चारणमें ही नहीं होता, बल्कि एक स्वरके बाद तुरत दूसरे स्वरक उच्चारणमें भी हाता है । इसीलिए सवाद और विवादका अनुभव जितना यापक ह उतना ही प्राचीन है । पाइयागारसने इसका विचार किया ह । भारतीय सगीतके आदि आचार्य भरतने स-प, स-म सवादकी चचा की ह । प्राय सभी देशा और सभी जातियोंके स्वाभाविक ग्राममें सच्चे प और सच्चे म का अस्तित्व मिलता ह ।

अब देखना यह ह कि सवमाय स-प और स-म सवादक अलावा और भी स्वर-सवाद हो सकते हैं या नहीं । इसकी जाँच एक सामाय प्रयोगसे हो सकती ह । तमूरे या और किसी साजके सा ताराका एक सुरमें मिला लो । फिर इन मिले हुए ताराभ-मे एकको लगातार चन्ते जाओ और दानाका साथ-साथ छेड़ने जाओ । एक तारका जरा चन्ते ही मालूम होगा कि दानाकी सगति बेसुरी हा गया । जब दाना स्वराका अन्तराल एक अर्धस्वर होता ह तो बेसुरापन सबसे अधिक हो जाता ह । आगे बढ़ते जानेपर बेसुरापन धीरे धीरे घटता जाता ह और ग ($\frac{1}{2}$) पर

प्रायः लुप्त हो जाता है। ग ($\frac{5}{4}$) पर पहुँचकर संगति सुरीली हो जाती है। आगे फिर बिसुरापन बढ़ता है और म ($\frac{3}{2}$) पर फिर संगति सुरीली हो जाती है। इस प्रकार दोना ताराक स्वराकी संगति बसुरी हो हाकर प ($\frac{3}{2}$) ध ($\frac{4}{3}$) पर सुरीली हो जाती है। अतमे न पर बसुरी होकर स पर पूरी तरह सुरीला हो जाती है। इससे यह स्पष्ट है कि स प, स म क अलावा और सवाद भी ग्राममें मौजूद है। जिन स्वराका स स सवाद है उनको हम 'इष्ट' स्वर कहेंगे जोर जिनका विवाद है उनको 'अनिष्ट' स्वर।

विलायती गुरु ग्रामकी सारिणी देखनेसे पता चलता है कि जिन स्वराका स स अन्तराल सरल है अर्थात् छोटी सख्याआसे प्रकट किया गया है वे ता इष्ट स्वर है और जिनका अन्तराल बड़ी सख्याआसे प्रकट किया गया है वे अनिष्ट हैं। इष्ट और अनिष्ट स्वराके बीचकी सीमाका अंक ८ है। अन्के छोटेपनपर ही इष्टताकी मात्रा भी निर्भर है। इसका उदाहरण नीचे दिया जाता है —

अति इष्ट — प ($\frac{3}{2}$) म ($\frac{5}{3}$)

इष्ट — ध ($\frac{4}{3}$), ग ($\frac{5}{4}$)

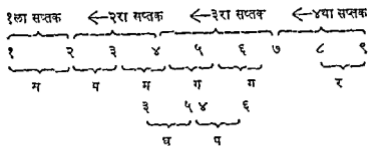
अल्प इष्ट — ग ($\frac{1}{1}$) ध ($\frac{4}{3}$)

अनिष्ट — र ($\frac{2}{1}$) लघु स्वर ($\frac{1}{2}$)

अति अनिष्ट — र ($\frac{3}{1}$)

ऊपरके विचारसे यह मानना पडता है कि हिन्दुस्तानी गुरु ग्रामका ध ($\frac{3}{2}$) अति अनिष्ट स्वरामें है।

विचार करनेमें जान पडगा कि इन इष्ट और अनिष्ट स्वराका सीधा सम्बन्ध आवृत्तकसे है। किमी स्वरके आवृत्तकमें ये स्वर स्वभावतः मौजूद हैं। यह बात नीचे लिखायी गयी है, जहाँ मौलिक स्वरकी आवृत्ति १ मान ली गयी है।



इस साकेतिक विवरणको देखनेमें पता चलता है कि जा स्वर निकटके आवत्तकाक मेलसे बने है वे ता इष्ट ह और जा दूरके या अधिक ऊँचे आवत्तकाके मेलसे बने है वे अनिष्ट ह । इस तरह स्वरके बनानेवाले आवत्तक जितने ऊँचे होते जायेंगे अनिष्टता उतनी ही बढ़ती जायेगी । इसीलिए पन्द्रहवें और सालहवें आवत्तकासे बना हुआ अधस्वरका अंतराल या र बहुत ही अधिक अनिष्ट हाता है ।

ऊपरके सकेतसे यह बात भी प्रकट होती है कि ग्रामकि बनानेमें सातवें आवत्तकसे काम नहीं लिया गया है । इटलीके वैज्ञानिक, ब्लेसेर्नाके मतमें ८ स्वरमें, जो ७ म है, इष्टताका काफी अंश है और इसका कभी कभी सफलताके साथ उपयोग किया जा सकता है । ऐलिसने अपने बनाये हुए साज हार्मोनियममें ९ स्वर अर्थात् ७ न को भी पटरी दी है । बलेमेण्टने इस बातकी बड़ी प्रशंसा की है कि हिन्दुस्तानी गायक प्रायः इस सप्तम आवत्तकके अंतरालका प्रयोग करते हैं । फिर भी यह मानना पता है कि सप्तम आवत्तक स्वरको किसी भी ग्राममें ध्यान नहीं मिला है । इसका कारण स्पष्ट है । एक तो सप्तम आवत्तक इतना ऊँचा है कि वह स्वतंत्र रूपसे इष्ट स्वर नहीं पदा कर सकता जसा कि तीसरे या पाचवें आवत्तक करते हैं । दूसरे, ७ ऐसा गुण अक है कि इसे पूरे पूरे अकामें नहीं बाँटा जा सकता । इससे इसका नापके अथ आवत्तकास भी कोई सम्बन्ध नहीं है । आठवें और नवें आवत्तक यद्यपि सातवेंसे भी ऊँचे हैं पर

आठवाँ दूसरेका चौगुना और नवा तीसरेका तिगुना है। इसलिए $\frac{2}{3}$ स्वर का स के साथ तो विवाद है पर $\frac{3}{4}$ के साथ सवाद है। मतलब यह कि उन्नी आवत्तवास बने स्वर ग्राममें आ सकते हैं जो या ता स्वयं नीचे हा या जिहें पूरा पूरा बाटनेसे नीचेके आवत्तक निकल सकें। सप्तम आवत्तकमें ये दाना ही बातें नहीं हैं। इसलिए सप्तम आवत्तक सिफ इष्ट और अनिष्ट स्वराक बीचवा सीमा माना जा सकता है।

जिस ग्रामके मुख्य स्वर एकस छह तकके इष्ट आवत्तकासे बन हाते हैं उस 'आवत्तक ग्राम' या 'प्राकृतिक ग्राम' कहते हैं। इस हिसाबसे विलायता गुद्ध या गुरु ग्राम ही पूरी तरह आवत्तक ग्राम है।

५६ जिन स्वराका सम्बन्ध छोटे अकाक अनुपातस प्रकट किया जाता है वे सवादी होत हैं। ऐसा क्या हाता है, इस समस्याको हल करनेमें पाय-यागोरसस लेकर कितन ही प्राचीन और नवीन शास्त्रज्ञाके विचार लडत रहे। पर इसका सच्चा निणय हेल्महोजने किया जिसे आज तक सभी मानने चल आ रहे हैं।

हेल्महाजके मतानुसार जब दो स्वराके बीच डोल (अनुच्छेद ४३) पदा होता है ता कानाको उसस कष्ट पहुचता है और ऐसे स्वराकी संगति अनिष्ट मालूम हाती है बस ही, जम हिलती हुई रोशना देखनस या जिम रोशनाकी तजी धार-बार घटती बढती हो उसे देखनेस आखीको कष्ट पहुचना है।

यह बताया जा चुका है कि दो स्वराकी आवत्तियाम जितना अन्तर हाता है प्रति सकेण्ड उतन ही डोल सुन पडत है (अनुच्छेद ४३)। आवत्तियाम अन्तर जब बहुत अधिक बढ जाता है तो डोल तज हा जाता है और तब इसका कानापर उतना अप्रिय प्रभाव नहीं पडता। बस ही, जब अन्तर बहुत ही थाना हाता है तो डोल घीमा हो जाता है और यह भी उतना अप्रिय नहीं जैचता। इनके बीच डोलाका एक पास सख्या है जिसपर यह सबस अधिक कष्ट मालूम हाता है। हेल्महोजन यह

निष्पन्न किया है कि जब साधारण आवृत्तिके दो स्वराकी सगतिमें ३३ डोल प्रति सेकण्ड होते हैं तो वह सगति सबसे अधिक अनिष्ट होती है । अब सबसे अधिक अनिष्ट सगतिके डोलकी संख्या २३ मानी जाती है । यदि एक स्वरकी आवृत्ति २४० मानें तो २३ डोलाके लिए दूसरे स्वरकी आवृत्तिको २६३ या २१७ मानना पड़ेगा । इन दोनों स्वराका अन्तराल लगभग एक अर्ध स्वरके निकलता है । इसीसे अर्ध स्वरका अन्तराल सबसे अधिक विवादी होता है । भरतादि प्राचीन शास्त्रकारोंने भी दो ध्रुतिके अन्तर-वाले स्वराको विवादी माना है जैसे र ग म, घ न आदि परस्पर-विवादी हैं । इसमें संदेह नहीं कि प्राचीन दो ध्रुतियाका अन्तराल आधुनिक अर्ध स्वरका सातक है ।

यदि दो स्वराके अन्तरालका अर्ध स्वरसे आगे बढ़ावें तो स्पष्ट है कि डालाकी गिनती बढ़ती जायेगी और सगतिकी अनिष्टता कम होती जायेगी । यह सामान्य अनुभवकी बात है कि पूरे १ स्वरके अन्तरालपर अनिष्टता अर्ध स्वरकी अपेक्षा बहुत कुछ कम हो जाती है । ग पर डोल सुनायी नहीं पड़ता और अनिष्टता प्रायः लुप्त हो जाती है । इससे यह कहा जा सकता है कि जब दो स्वराका अन्तराल $g \left(\frac{1}{2} \right)$ से छोटा होता है तो वे स्वर परस्पर विवादी होते हैं । यह विवाद अर्ध स्वरके अन्तरालपर सबसे अधिक होता है ।

पर यह साधारण आवृत्तिके लिए ही ठीक है । दोनोंकी आवृत्ति बहुत अधिक होनेपर सम्भव है कि एक गुरु स्वरके अन्तरालपर ही डोल सुनायी न दें । इसलिए ऐसा न समझना चाहिए कि हर आवृत्तिपर एक अर्ध स्वरका अन्तराल सबसे अधिक अनिष्ट होता है या g के अन्तरालपर अनिष्टता लुप्त हो जाती है । यह धनाया गया है कि २४० और २६३के बीच सगतिमें अधिक विवाद है जिनका अन्तराल लगभग अर्ध स्वर है । अगर दोनों स्वराका दूना करके तार सप्तकमें ले जायें तो दोनोंका अन्तराल तो वही अर्ध स्वर रहेगा, पर डालाकी संख्या अब ४६ प्रति सेकण्ड हो जायेगी । गिनती बढ़

जानने कारण डोलन तबो आ जानसे यह अधस्वरका अन्तराल अब उनना अनिष्ट नहीं बच्गा । पर इसका यह मतलब भी नहीं कि तार सप्तकमें भी, मध्य सप्तककी तरफ ही २३ डालपर ही सबसे अधिक विवाह प्रकट होगा । सबसे अधिक विवाहके लिए डालकी संख्या २३ और ४६ के बीच नहीं पडगी । सारास यह कि जब जस दाना स्वराकी आवृत्ति बन्ती है वैस वस मध्य अधिक विवाह पदा करनवाला अन्तराल ता अप स्वरस छोटा होता है पर डोलाकी संख्या बढी जाती जाती है । ठीक इसस उल्टा परिणाम स्वराकी आवृत्ति घटनमें होता है ।

कितनी आवृत्तिपर कितना डाल सबसे अधिक अनिष्ट हाता है इसकी जांचम अनेक बगानिकान बहुततर प्रयोग किये हं । उनमें स मयर और स्मृत्क प्रयोगका परिणाम नीचका सारिणीमें लिया जाता है जिससे ऊपरकी सारी बातें स्पष्ट हा जायेंगी ।

सारिणी ८

स्वराकी आवृत्ति	सबसे अधिक अनिष्ट डोलकी संख्या	जिस अन्तरालपर डाल मुनायो नहीं पडत
९६	१६ प्रति सेकेण्ड	६ अधस्वर
२५६	२३	४
५७५	४३	३
१७०७	८४	२
२८००	१००	१

५७ हल्महाजक इस निणयकी मान लेनपर भी कि दो स्वराके विवादका कारण उन स्वराके समीपस उत्पन्न डाल है स्वर-सवाकी समस्या हल नहीं होती । क्याकि कानोंकी मुनायी दनवाला डोल तो तभी पना होता है जब दोना स्वराकी आवृत्तिया पास-पास होती है । इसलिए

सिर्फ डोलक आधारपर यह नहीं बताया जा सकता कि स और न में विवाद क्यों है, जो एक-दूसरेसे बहुत दूर है फिर लगातार आवृत्तियाँ अंतर बढ़ाते जानपर भी सवादके बाद विवाद और विवादके बाद सवाद क्या होता है।

इस समस्याको हेलमहोजने एक और धारणासे हल किया है। उन्होंने बतलाया है कि डोल जिस तरह स्वरक मौलिकाक संयोगसे पैदा होता है उसी तरह उनक उपस्वराके संयोगसे भी पैदा होता है। इतना ही नहीं। दो स्वरोंके परिणामी (शपिक और यौगिक) स्वर (अनुच्छेद ४४) भी डालके कारण होते हैं। मतलब यह कि स्वरकी इष्टता या अनिष्टताम मौलिक, उपस्वर और परिणामी स्वर तीनोंका ही सहयोग रहता है।

इस सिद्धांतको दृष्टिसे नीचे स्वरोंके सवाद और विवादका विवरण दिया जाता है जिससे यह मालम होगा कि साधारण अनुभवकी बातको यह सिद्धांत पूरा तरह पुष्ट करता है।

नीचेके विवरणमें स की आवृत्तिको १ मान लिया गया है। आशिका का क्रमांक गिनतासे जाना जा सकता है। सभी सवादमें स्वरके छह आशिकाका ही विचार किया गया है, क्योंकि स्वरमें प्राय छठ आशिक तक ही प्रबल होते हैं—ऊँचे आशिक दुबल होते चल जाते हैं।

१—स—न।

स—१	२	३	४	५	६
सं—	२		४		६

स का पहला दूसरा, तीसरा आशिक स के दूसरे चौथे, छठे आदि आशिकास पूरी तरह मिल जाता है इसलिए डोलकी ऋही सम्भावना नहीं है। इन दोनोंका शपिक १ होता है जो स क मौलिकसे पूरी तरह मिल जाता है।

इसलिए स-सका सवाद आदश है। स, स में स किसी एक्को छोड़ा भी चढ़ान उतारनेस डोल पैदा हो जायेंगे। इसलिए स सका मिलान बड़ा

ही सच्चा होना चाहिए, और यह डोलका दूर करके आसानीसे किया जा सकता है।

२—स—प।

स—१	२	३	४	५	६
प—	३	३	३	३	६
		⏟	⏟		⏟
		मेल	डोल		मेल

दृष्टता—प वा दूसरा, चौथा आशिक स के तीसरे, छठेमें मिलता है।

अनिष्टता—प ३ और स ४ म डोल हाता है।

गणिक—३, स क एक सप्तक नीचे (म) है।

इसमें अनिष्टता बहुत ही अल्प है क्योंकि एक तो चौथा आशिक दुबल हाता है। दूसरे इससे पहलेका तीसरा प्रबल आशिक प २ से मिलकर चौथे आशिकका प्रभाव कम कर देता है। तीसरे, स ४ प ३ का अन्तराल १ गुण स्वर है जो छास तौरसे ऊंचा आवसिपर उतना अनिष्ट नहीं हाता। फिर गणिक मोजिककी पुष्ट करगता है।

इसोलिए स-स सवादक बाल स-प सवादका ही स्यात है।

३—स—म।

स—१	२	३	४	५	६
म—	४	५	४	३	३
		⏟	⏟	⏟	⏟
		डोल	मेल	डोल	डोल

दृष्टता—स ४ और म ३ का मेल।

अनिष्टता—(१)स ३-म २ (अन्तराल $\frac{१}{२}$)

(२)स ५-म ४ (अन्तराल $\frac{१}{३}$)

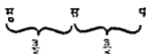
(३)म ६-म ५ (अन्तराल $\frac{१}{६}$)

गणिक — ३।

इसमें मल तो ४ ३ आशिकमें है जो ऊंचे और दुबल है पर डोल

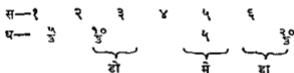
३ २ में है जो नीचे और प्रबल है। इसका शैपिक भी स को पुष्ट नहीं करता, वह म का अतिमन्द्र है।

इसलिए स म सवाद स-प की अपग्ना बहुत ही दुबल है। इसमें अनिष्टनाका अंश बहुत अधिक होनेमें ही इस बातकी बहुत दिना तक बहस रही कि म का इष्ट स्वर मानना चाहिए या अनिष्ट। अन्तमें यह इष्ट ही माना जाने लगा, खास तौरसे इसलिए कि यह प का उलटा है। जस,



अथात् स स $\frac{3}{2}$ ऊपर प और $\frac{3}{2}$ नीचे म होता है।

४—म—घ।



इष्टता—स ५ और घ ३ का मेल।

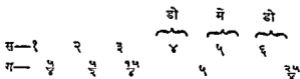
अनिष्टता—(१) स ३—घ २ (अन्तराल $\frac{1}{2}$)

(२) स ६—घ ४ (अन्तराल $\frac{1}{2}$)

शैपिक— $\frac{3}{2}$

इसमें भी मेल तो ऊँचे आशिकोंमें है और डोल नीचेमें। फिर इसका शैपिक दोमें-से किसी भी स्वरका पुष्ट नहीं करता। वह एक नया स्वर म है।

५—स—ग।



दृष्टता—स ५ और ग ४ का मेल ।

अनिष्टता—(१) स ४—ग ३ ($\frac{३३}{३३}$) (२) म ६—ग ५ ($\frac{३५}{३५}$)

शपिक— $\frac{३}{३}$ ।

स ग सवात् प्रायः स घ सवात् जैसा ही है । इसमें अनिष्ट डालक आगिर स घ क अनिष्ट डालके आगिरास ऊच है पर स घ क डालका अन्तराल एक लघु स्वर और स-ग क डालका अन्तराल एक मधु स्वर है । इसलिये एक कारणसे अनिष्टता घटता है ता दूसरे कारणसे बढ़ती है । इसका शपिक म का पुष्ट करता है पर अतिमन्द्र ($\frac{३}{३}$) हानिमें दुबल है ।

६—स—ग ।

स— ^१	२	३	४	५	६
ग—	$\frac{३}{३}$	$\frac{३३}{३३}$	$\frac{३६}{३६}$	$\frac{३५}{३५}$	६
		⏟		⏟	
		हो		हो	
				⏟	
				म	

दृष्टता—स ६—ग ५ का मेल

अनिष्टता—(१) स ४—ग ३ (अन्तराल $\frac{३०}{३०}$)

(२) स ५—ग ४ (अन्तराल $\frac{३५}{३५}$)

शपिक— $\frac{३}{३}$ ।

७—स—घ ।

ग— ^१	२	३	४	५	६
घ—	६	$\frac{३६}{३६}$	$\frac{३५}{३५}$	$\frac{३५}{३५}$	$\frac{३२}{३२}$
		⏟		⏟	
		हा		हा	
				⏟	
				हा	

दृष्टता—ग ८—घ ५ ।

अनिष्टता—(१) स २—घ २ (२) स ५—घ ३

(३) स ६—घ ४ ।

शपिक— $\frac{३}{३}$ ।

इन दाना ही सवाशमें अनिष्टताका अंग बढ़ गया और दृष्टता ठेक

आशिकपर चला गया है। यहाँ तक कि म घृ सवा ८वें आशिकपर निर्भर है जो प्रायः स्वरमें नहीं पाया जाता। इनके शपिक भी किसी स्वरको पुष्ट नहीं करते।

(८) स-न।

स—१	२	३	४	५	६	७	८	९
न—	$\frac{०}{५}$	$\frac{१८}{५}$		$\frac{३७}{५}$		$\frac{५६}{५}$		०
	~~~~~		~~~~~		~~~~~		~~~~~	
	डो	डो	टा	डा	टा	डा		

इष्टता—म ०—न ५

अनिष्टता—(१) म २—न १ (२) स ४—न २ (३) स ५, ६—न ३ (४) स ७, ८—न ५।

शपिक—५

इसकी इष्टता नवें आशिकपर निर्भर है जा बहुत ऊँचा है और अनिष्टता तो मौलिकक डाल तकस पदा होती है। इसका शपिक भी किसी स्वरको पुष्ट नहीं करता। इसलिए स-न अतराल विवादी है। पर विवा दियामें इसकी अनिष्टता बहुत ही अल्प है क्योंकि नीचेके प्रबल आशिकामें कहीं भी अथ स्वर या इससे छोटे अतरालका डोल नहीं पैदा होता। म-घ में न ३ और घृ २ के बीच अथ स्वरका डोल होता है और ३, २ आशिकामें प्रवृत्ता भी पूरी होती है। इसलिए स-न विवादी होनेपर भी स-घ स अधिक प्रिय होता है।

(९) म-र।

म—१	२	३	४	५	६	७	८	९
र—	$\frac{३}{४}$	$\frac{४}{४}$	$\frac{५}{४}$	$\frac{६}{४}$	$\frac{७}{४}$	$\frac{८}{४}$	$\frac{९}{४}$	०
	~~~~~			~~~~~				
	डा	डो	डो	डो	डा	डो	डो	मे

इष्टता—म ९—र ८।

अनिष्टता—९ से नीचे सभी आशिकाम ।

शपिक—१

यह बतानेकी आवश्यकता नहीं कि यह स-र अन्तराल पूरी तरह विवादी है । इसका शपिक भी स से नीचे चौथे सप्तकमें पड़ता है जिससे इसमें स को पुष्ट करनेकी क्षमता नहीं रहता ।

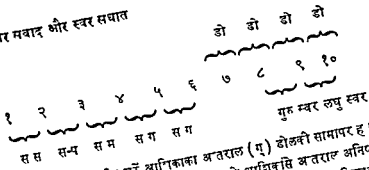
अब यह दिखानेका जरूरत नहीं कि स-र या स-न, स-र से भी अभिन्न विवादी होगा क्योंकि इसमें सभी आशिकाम अर्ध स्वरका डोल पदा होगा, जो स-र क डालस अधिक अनिष्ट है ।

ऊपरके विवरणमें यह स्पष्ट हो जाता है कि जिन स्वरोंका अन्तराल छोटी सप्तकाओंके भिन्नसं प्रकट किया जाता है व नया सवाद ही है । छोटी सप्तकाओंके अनुपातका मतलब यह है कि उन स्वरोंके नीचेके आशिकाम आपसमें मिलकर एक ही जाने हैं और एक दूसरेका षट् करत हैं । जैसे स २ ५ = ३का मतलब है कि स का तीसरा और ५ का दूसरा आशिकाम एक ही आवृत्तिका है इसलिए ये दोनों आशिकाम एक दूसरेका पुष्ट करत हैं ।

सारण यह कि दो आशिकामोंका मेल तो इष्ट होता है और दो आशिकामोंका डोल अनिष्ट होता है । किन्हीं दो स्वरोंका संगतिमें मेलकी मात्रा अधिक है या डालकी, या बौन किनारा प्रबल है इसी तौलपर उम संगति का सवाद और विवाद निर्भर है ।

५८ मवान और विवादका विचार दो स्वरोंके आशिकामोंमें उत्पन्न डालके आधारपर किया गया है । इससे यह न समझना चाहिए कि दो भिन्न भिन्न स्वरोंके आशिकामोंमें ही डाल हो सकता है । किसी एक स्वरके अन्तर्गत ही आशिकामोंमें भी परस्पर वैसा ही डोल होता है जसा दो स्वरोंके आशिकामोंमें । किसी स्वरके आशिकामोंमें श्रेणीमें आशिकामों जितना ऊँचा चढ़ता जाता है, पासके आशिकामोंसे उसका अन्तराल उतना ही छोटा होता जाता है । जैसे,

स्वर मवाद और स्वर सघात



यहाँ पाँच और छठे आंगिकाका अतराल (ग) डोलकी सामान्य है। इससे आगेके आंगिकाका, अपने अगल बगलके आंगिकसे अतराल अनिष्ट डोलका सीमाके भीतर आता-जाता है। जैसे, आठवें और नवें आंगिकाका अतराल एक गुरु स्वर और नवें और दसवेंका अतराल एक लघु स्वर हो जाता है। इस प्रकार आगे अन्तराल घटता जाता है और अनिष्ट डाल बढ़ता जाता है। इसलिए जिस मिश्र नादमें छठे आंगिकतक ही प्रबल हों वह, डालके अभावके कारण, कोमल और इष्ट होता है, और जिसमें छठे से आगेके आंगिक भी प्रबल हों वह, डालके कारण, कटु और अनिष्ट होता है।

ऊँचे आंगिकमें अगर ७, ९, ११ आदि विषम आंगिक न हों, तो सम आंगिक ८, १०, १२ आदि सिर्फ नीचेके आंगिकाको पुष्ट करेंगे। इससे नादमें अनिष्टता न रहेगी। पर यदि विषम आंगिक प्रबल हों तो बहुत ही अनिष्ट मालूम होगा।

जिन साजाके नादमें घातुकी तरह खनक मालूम होती है, या जिन मनुष्याका स्वर कणकटु मालूम होता है उनका नाद या स्वरमें ऊँचे आंगिक, खास तौर से छठेमें ऊपर विषम आंगिक, काफी प्रबल होते हैं। यगके नियम (अनुच्छेद ३२) का उपयोग करके, अगर किसी तरह बाजेक नादस विषम आंगिकाको दूर कर सकें तो वह मधुर हो जायगा। वैसे ही अगर मनुष्य बराबर अभ्यासमें गलपर बावू करके विषम आंगिकाको दबा सके तो उसका स्वर भी मधुर हो सकता है। प्यानों, बैला आदि तारके बाजाओं

छटनकी जगह तारकी लम्बाईके लगभग सातवें हिस्सेपर रखते ह । यहाँ सातवें आशिककी ग्रा य ह, इसलिए यह आशिक नामसे गायब हो जाता ह । पर और विषम आशिकाक खयालसे, प्राय छेडनकी ऐसी जगह चुनी जाती ह जिसमें ७ ९ ११ आदि सभी दुबल हा जायें ।

५९ जब दा स्वराका सवाद जोर विवाद उनक आशिकाके डोलपर निभर ह तो स्वभावत यह प्रश्न उठता ह कि सरल स्वराकी संगतिमें, जिनमें मौलिकको छोड और कोई भी आशिक नही हाता इष्टता और अनिष्टताका भेद न होना चाहिए । अर्थात् र के सिवा, जिनकी अनिष्टता मौलिकके ही डोलक कारण ह, और सभी स्वर बराबर ही स्पष्ट होना चाहिए । पर तीव्र सरल स्वराके साथ प्रयाग करनपर यह पाया जाता ह कि सप्त सवाद स्पष्ट होता ह और सप्त सवादकी स्पष्टता इससे कुछ ही कम होती ह । वैसे ही सप्त विवाद भी स्पष्ट हाता ह । बाकी स्वरोंका सवाद स्पष्ट नही होता ।

तीव्र सरल स्वराके सवाद विवादका कारण परिणामी स्वर हाता ह । परिणामामें भी शपिक होता ह क्योंकि शैणिककी तीव्रता बहुत ही कम होती ह । शपिक भी कई श्रेणियाके होते ह । मौलिक मौलिकसे उत्पन्न शपिक पहली श्रेणीका ह । फिर इस शपिक और दोना अलग-अलग मौलिकसे उत्पन्न दो शपिक दूसरी श्रेणीके हैं । इसी तरह दूसरी श्रेणीक शपिका और पहली श्रेणीक शपिक और दोना मौलिकसे उत्पन्न शपिक तीसरी श्रेणीके ह । इस रीतिसे इनको शृंखला आगे भी बढ़ायी जा सकती ह । पर एक तो पहली श्रेणीका ही शपिक दुबल हाता ह जा काफ़ी तीव्र मौलिकक साथ ही सुना जा सकता ह, उसपर उंची श्रेणियाक शपिकाही तीव्रता तो और भी कम होती चली जाती ह ।

ऊपरकी सारी बानें उदाहरणसे स्पष्ट हो जायेंगी ।

नाचे स की आवृत्ति २४० मान कर सरल स्वराका सवाद विवाद दिसाया जाता ह—

(१) स-म ।

	स स
मौलिक—	२४० ४८०

	}
पहलो श्रेणीका शपिक—	२८०

यह शपिक स को पुष्ट करता ह । स को ५ आवृत्ति चढा देनेपर—

	स स
मौलिक—	१४० ४८५

	}
पहला श्रेणीका शपिक—	२४५

अब शपिक और मौलिकके बीच ५ डाल प्रति मेकेण्ड हागे । य परिणाम नामे-से किमी एक स्वरको उतारनेसे भी हागा ।

अथात् स, म में से किसी भी स्वरको विचलित करनेस अनिष्ट हो होन लगता ह, इसलिए स-स का सच्चा सवाद ह ।

(२) स-प ।

	स प
मौलिक—	२४० ३६०

	}
पहली श्रेणीका शपिक	१२०

यह मन्द्र स ह इसलिए स को पुष्ट करता ह ।

प का ५ आवृत्ति चढा देनेपर —

	स प
मौलिक—	२४० ३६५

	}
प्रथम शपिक—	१२५

	}
द्वितीय शपिक—	११५ २४०

अब प्रथम गणिक और द्वितीय गणिकमें १० डाल प्रति सक्ण्ड हाता ह । अर्थात् स या प को थोडा विचलित करनेस अनिष्ट डाल हान लगता है । इसलिए स-प सवाद भी सच्चा ह ।

(३) स-३२० वा ५ आवर्ति चत्ता दनपर—

मौलिक—

स म
२४० ३२५

प्रथम गणिक—

—

८५

द्वितीय ,, —

१५५ ↓ २४०

तृतीय ,, —

८५ ७० १७०

द्वितीय और तृतीय श्रेणियोंके गणिकामें १५ डोल होगा । तृतीय गणिकके बहुत ही दुबल होनेस म को विचलित करनेपर भी अनिष्टताका अनुभव न होगी । इसलिए सरल स्वराका स-म सवाद नहींके बराबर ह ।

यहो बात दूसर स्वरोकी संगतिमें भी निकलगे जा न ता मवाणी और न विवादी जान पड़ेगी । पर स-न का विचार करनेपर यह साङ्ग विवादी सिद्ध हागा । जम—

(४) स-न

मौलिक—

स न
२४० ४५०

प्रथम गणिक—

२१०

यही मौलिक जोर प्रथम गणिकक बाच ३० डाल मुन पडगा । यह स २४० और र २७० क अनिष्ट डालक बराबर ही ह, इसलिए स-न संगति स-र संगतिक जसा ही विवादा ह ।

एन विवचनाआमे यह सिद्ध होना ह कि विना आगिवावाले सरल नागामें सिङ्ग स-स और स-प सवाद हाता ह और स-स और प क

नीचे ऊपर, दाना जोर, षीडो दूर तक अनिष्टना प्रकट होती ह। यह बात मिश्र नादास भिन्न ह जहा स-ग, स-म आदि कितने ही सवाद हाते ह।

६० ऊपरके विचारोंसे यह परिणाम भी निकलता ह कि सवाद विवाद बहुत कुछ नादकी गुण जातिपर निभर ह। मिश्र नाद और सरल नादका इस सम्बन्धम भेद तो ऊपरके विचारसे स्पष्ट ही ह। यदि मिश्र नादाको ही लें तो भी गुण भेदसे सवाद विवादमे भेद पड जाता ह। असे, मान लो कि दो स्वरामें-से एकम सम आशिक न हा—१,३,५ आदि विपम आशिक ही हों। अब यदि यह विपम आशिकावाला स्वर मध्यम हा तो स-म सवादकी इष्टता बहुत बढ जायेगी, क्याकि स के तीसरे आशिकके साथ बहुत ही अनिष्ट डोल पदा करनवाला म का दूसरा आशिक इस स्वरमें नही ह (अनुच्छेद ५७)। पर यदि इस स्वरको प बना दें तो स-प सवाद दुबल हो जायेगा, क्याकि स के तीसरे आशिकके साथ मिलनेवाला प का दूसरा आशिक स्वरमे गायब ह। इसलिए ऐसे स्वरके साथ स-म सवाद स-प सवादसे अधिक इष्ट हागा। जगर इही दा स्वरामें से विपम आशिक वालका म और सम आशिकवालेको म बावे तो स-म सवाद फिर दुबल हो जायेगा क्याकि स म डोलवाला आशिक ३ ता मौजूद होगा और मेल वाला ४ गायब हागा। इसी तरह सम आशिकावाल स्वरको प बाधनेसे स-प सवाद बहुत ही प्रबल हा जायेगा। इस बातका माननेमे सगीतज्ञ प्राय हिचकते ह क्याकि यह सामान्य अनुभवकी बात नही ह। पर बजा निकाण इस अनेक प्रयोगासे सिद्ध कर दिया ह।

६१ इस सवाद विवादके प्रसंगमें ही सगीतकी दो भिन्न भिन्न पद्धतियापर कुछ प्रकाश डालना उचित जान पडता ह। सगीतके लिए दो बातोंकी आवश्यकता सभी पद्धतियामें मानी जाती ह—एक ता, एकके बाद एक स्वराका ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए जा रसा और भावाको उद्दीप्त करके चित्तका प्रसन्न कर। दूसर, एक अच्छे गुणवाले स्वरके साथ भी भिन्न-

भिन्न नागा मउ होना चाहिए जिसमें स्वरका प्रभाव बडे । जस, अगर गवैया अवेला गाव तो उसका गाना हल्का जवता ह और अगर गानेके साथ साथ हार्मोनियम, तमूरा सरगी आदि उसक सुरम मिला हुआ बज ता उस गानपा असर बहुत बढ जाता ह । एक्के बाद एक स्वराक उच्चारणको बोलचालकी भाषाम 'धुन कहत ह जिसका उन्नत और नियमित रूप 'राग' ह । यापक अथमें स्वराके क्रमबद्ध उतार चढावके लिए पारिभाषिक सङ्गम वा प्रयोग किया जायगा जो अग्रेजी मल्लोडी'का पयाय ह । कई स्वराक एक ही साथ उच्चारणको 'सगति' कहते है । इसके लिए दूसरा राग 'सहति' है जो अधिक उपयुक्त जान पडता ह । पर सगति, प्राय इसी अथमें, अधिक प्रचलित ह । इसीलिए आगे सामान्य अथम सगति और पारिभाषिक अथम 'सहति'का प्रयोग किया जायगा जो अग्रेजी 'हार्मोनी का पर्याय है ।

भारतीय सगात-कलाका विकास मुख्यतः रागको दिगाम हुआ ह । समयकी गतिक साथ-साथ रागको अनेक नये नये नियमाम बाधा गया । अनेक नये रागों और गुनाका निर्माण हुआ । रागकी अभिव्यक्तिके लिए क्रमशः ध्रुपद, नमाल, ठुमरो आदि अनेक शैलियाका विकास हुआ । इहें पूरकी तरह खिलानेक लिए कितन हा गमकाका उपयोग किया गया । पर 'सहति'का भार भारतीय कला अधिक न बढ सका । गवैयाके साथ कुछ वाजे बजत ह पर इस सगति भी नहीं, 'अनुगति' कहना चाहिए । क्याकि हम सगतिम चाहे तो साज गवयक पीछ-पाछ चलता ह या गवया साजक पाछ-पाछ चलता ह । जहाँ दो चार व्यक्ति साथ साथ गात है वहाँ, बहुत ही पुरानी रीतिस, सुरम सुर मिला कर स-स की या न-न की गगति न-न-न की एक युवक और एक महीन स्वरवाले लडकेके स्वराकी सगति हाता ह । यदि सच्च अथमें 'सहति'का कुछ आभाम मिलता ह ता तमूरक नादमें जहाँ स स प या स स म स्वर प्राय साथ साथ बजत ह ।

पाश्चात्य संगीत-कलाका विकास 'सहति'की दिगाम हुआ ह । इस

सहतिम एकसे अधिक स्वराका मल होता है । य स्वर भिन्न भिन्न होते हैं । जैसे स, ग और प की सहति । एकसे अधिक स्वराके गुच्छका 'संघात' कहते हैं । तमूरम चार ताराक रहते हुए भा केवल दो स्वराका संघात है । पाश्चात्य पद्धतिम तीन स्वराका संघात होता है जिस तिसंघात या केवल संघात कहते हैं । एक संघातक सार स्वर एक साथ ही अलग अलग बाजा स निकलत है और एकम मिलकर विलक्षण नादकी सृष्टि करते हैं । यह मिथुनाद इष्ट है, या अनिष्ट, मधुर है या कटु कोमल है या कठोर—ये सारा बातें संघातके स्वरावर निर्भर है । इस प्रकार जैसे भिन्न भिन्न स्वराके क्रमस और भिन्न भिन्न ममकामे अनेक भावा और रसाक तैयार होता है वस ही भिन्न भिन्न स्वराक संघाताम भी भिन्न भिन्न भावा और रसाक उद्दीप्त करनकी क्षमता हाती है । 'संक्रम' और सहति दाना, समीतक उद्देश्यकी पूर्ति अपन अपने ढंगसे करते हैं ।

६२ मुख्य संघात स ग प का होता है जिसमें स भी मिला दते हैं इसे गुरु संघात कहते हैं । दूसरा संघात स ग प का हाता है जिस लघु संघात कहते हैं । संघातका आधार अन्तराल है निरपेक्ष स्वर नहीं । जैसे गुरु संघातके तीन स्वर चाहे किसी भी नामके हों, चाहे किसी भी तारतावे हों, इनमें पारस्परिक अंतराल स-ग-प क जसा होना चाहिए, जैसे (स ५ ग) $\frac{५}{४}$ और (ग ५ प) $\frac{५}{४}$ है । अगर म का संघातका पहला स्वर मान जाये तो गुरु संघातके लिए दूसरा स्वर ध ($\frac{५}{४}$) और तीसरा स (२ हागा । क्याकि—

$$\begin{array}{c} \text{म } \frac{५}{४} - \text{ध } \frac{५}{४} - \text{स } २ \\ \underbrace{\hspace{1.5cm}} \quad \underbrace{\hspace{1.5cm}} \\ \frac{५}{४} \quad \frac{५}{४} \end{array}$$

गुरु और लघु दोनों संघातास, उलट पलटकर दो-दो संघात और बनत हैं जिनके अंतराल भिन्न होते हैं । उलटनेका नियम सीधा है—नीच स्वरका एक सप्तक ऊपर चढ़ा दिया जाता है । जैसे—

(१) गुरु सघात—

(क) स ग प

(ख) ग प स

(ग) प स ग ६

(ख) और (ग) में पहले स्वरको स माननेपर (ख) स ग ध जोर
(ग) स म ध हा जायगा ।

(२) लघु सघात—

(क) स ग् प

(ख) ग प स

(ग) प स गं

(ख), (ग) में पहल स्वरका 'स' माननस—(ख) स ग ध (ग) स म
ध होता ह ।

ऊपर दिय हुए नियमस अब और सघात नही बन सकत । क्याकि गुरु
सघात (१) और लघु सघात (२) क (ग) में अगर प को एक सप्तक ऊपर
ठठावें तो फिर (क) सघात बन जाता ह ।

इस तरह कुल ६ सघात हुए, जैसे—

(१) गुरु-सघात—[क] स ग प स

[ख] स ग ध स

[ग] स म ध म

(२) लघु सघात—[क] स ग प स

[ख] स ग ध स

[ग] स म ध स ।

इन दाना प्रकारके सघाताक उपयोगका नियम यह ह कि गुरु ग्रामक रागाम गुरु-सघाताका प्रवहार हाता है और लघु ग्रामक रागाम लघु सघाताका ।

ऊपरके सभी सघात इष्ट सघात माने जाते ह, क्योंकि इनक सभी स्वरका स से सवाद ह और वे आपसमें भी सवादी ह । इनम कोई अन्तराल ऐसा नही ह जिसमें अनिष्ट डोल हो । अगर स म प स सघात बनाया जाये ता सभी स्वरोंका स से तो सवात् होगा पर म और प परस्पर विवादी हा जायगे । इसलिए ऐसा सघात इष्ट नहीं माना जाता ।

६३ गुरु-सघात और लघु सघात दाना ही इष्ट माने जात ह ।

(१) क और (२) क का दखनसे पता चलता ह कि दाना अन्तराल भी एक ही है—सिफ क्रममें अन्तर ह । फिर भी दोना क रूप गुणमें बहुत अंतर पड जाता ह । गुरु-सघात खुला हुआ, प्रसन्न और दृढ माना जाता ह । लघु सघातका प्रभाव कर्ण, त्विन और विचलित हाता ह । सिफ अन्तरालके क्रममें अन्तर होनेसे दानाके गुणम इतना अंतर क्यों हो, यह पहले लागाकी समझमें नहा आना था । हेल्महाजने इस गुत्थीको परिणामी स्वराकी धारणासे सुलथाया । इन दोना सघाताक अन्तराल एक होते हुए भी दोनाके शपिक स्वरामें बहुत अन्तर ह । यह नीचेक विवरणसे स्पष्ट होगा ।

१—गुर-सघात—

(क) स ग प स

१ २ ३ २

गणिक—१, २, १, २, ३, ३

या १, २, ३, ३

इमम १ २, २ क्रमग स, मू, सु० ह जो स को पुष्ट करते ह और ३ पु० ह जो प को पुष्ट करता ह, कोई नया स्वर पदा नही हाता ।

(ख) स ग घ स

१ २ ३ २

गणिक—१, ३, १, ३, ३, ३

या १, ३, ३, १, ३

इनम १ स का पुष्ट करता ह ३, गु० ह जो ग् का पुष्ट करता ह, ३, ३, ३ क्रमग घ घ०, घ०० ह जा घ को पुष्ट करत ह इनमें कोई नया स्वर नही ह ।

(ग) स म घ म

१ ३ ३ २

गणिक—३, ३, १, ३, ३, ३

या ३, ३, १

इमम १ स को पुष्ट करता ह ३, ३ क्रमग मू, मू० ह जो म को पुष्ट करते ह । इमम भी कोई नया स्वर नही ह । अर्थात् गुर सघातके तीना हो भेदामें गणिकके कारण कोई भी नया स्वर नहीं पदा होता ।

२—लघु सघात—

(क) स ग प स

१ २ ३ २

गणिक—१, २, १, ३, ३, ३

या १, ३, ३, १, २

स्वर-सवाद और स्वर सघात

इनमें १ स और $\frac{3}{4}$ —ग ह जो स और ग को पुष्ट करते हैं। पर $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{4}$ क्रमशः घ $\frac{1}{2}$ ह जो नये स्वर ह।

(ख)	स	ग	घ	स
	१	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{4}$	२
गणिक—	$\frac{1}{2}$,	$\frac{3}{4}$,	१,	$\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$, $\frac{1}{2}$
या	$\frac{1}{2}$,	१,	$\frac{1}{2}$,	$\frac{1}{4}$, $\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$

इनमें एक और $\frac{1}{2}$ क्रमशः स, $\frac{1}{2}$ है और $\frac{1}{4}$ घ ह, जो स और घ का पुष्ट करते हैं। $\frac{3}{4}$, $\frac{1}{2}$ क्रमशः म म ह और $\frac{1}{4}$ प है। ये दोनों ही नये स्वर हैं।

—(ग)	स	म	घ	स
	१	$\frac{3}{4}$	$\frac{1}{2}$	२
गणिक—	$\frac{1}{2}$,	$\frac{1}{4}$	१	$\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$, $\frac{1}{2}$
या	१,	$\frac{3}{4}$,	$\frac{1}{2}$,	$\frac{1}{4}$, $\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$

इसमें १ स ह $\frac{3}{4}$, $\frac{1}{2}$ क्रमशः म, $\frac{1}{2}$ है और $\frac{1}{4}$ घ ह। ये स म घ को पुष्ट करते हैं। पर $\frac{3}{4}$ ग, और $\frac{1}{4}$ र ह जो नये स्वर हैं।

अर्थात् लघु सघातक तीना ही भेदात्मक गणिक कारण नये स्वर पदा हो जाते हैं।

इन नये स्वराक कारण ही लघु सघात गुरु सघातस भिन्न हा जाता ह और दोनों सघातास भिन्न भिन्न भावाका उदय होता ह।

पर बराबर इष्ट सघाताका ही उपयोग होनसे संगीत अरुचिकर हो जाता ह। फिर भावा और रसाके भेद अनेक हैं जो सिर्फ इष्ट सघातासे ही नहा व्यक्त किये जा सकते। इसलिए अनेक अनिष्ट सघाताका भी व्यवहार होता ह जा सघाताम अनिष्ट स्वराक समावेश बनाये जात ह। पर इनका व्यवहार धार्मिक हाता ह, जो तुरत इष्ट सघातमें बदल गिये जाते ह। यह ठीक वसा ही ह जसा भारतीय संगीत कलाक रागामें विवादी

स्वराका या रागक अलापमें तिरोभाव और आविर्भावका प्रयोग^१। पर 'सहति' में अनिष्ट सघात और रागमें विवादी या तिरोभाव-आविर्भावका प्रयोग कहां कब और कितना दूर तक होना चाहिए, यह मिथ्य कलाकार को जानना है। क्योंकि इनका समुचित प्रयोग न होना सहति नष्ट हो जाती है, राग भ्रष्ट हो जाता है और रसक बुरा रसाभास पना होता है।

सहति क मागस पाश्चात्य देशों सामूहिक संगीतका विकास हुआ। राग क मागस हिन्दुस्तानमें व्यक्तिगत संगीत आगे बढ़ा। पर पाश्चात्य संगीतमें जिस प्रगति और विकासका उत्साह दोस्त पढ़ता है वह भारतीय संगीतमें नहीं। इसका मुख्य कारण यह है कि पाश्चात्य पद्धतिकी सहति का विनाशका आधार है पर हिन्दुस्तानी पद्धति अभा भी मिथ्य कलापर निर्भर है। यदि भारतीय संगीतन अपना पद्धतिक वैज्ञानिक आधार और सम्भावनाओंका समर्थ और पाश्चात्य पद्धतिक सिद्धान्तोंका भा निष्पन्न भावस जाननकी चेष्टा करें तो भारतीय संगीतमें नया भावना नयी प्रगति आ सकती है।



१ यमन-कल्याणमें 'म', गौण सारग, छायानट आदिमें नू, भैरवा में म' छान्दिका प्रयोग विषादा रूपमें कमा-कमी होना है। कैम हा भैरवक अलापमें इमम मिल्लत तुल्लत राग रामकगीका मुँह शिवाकर भैरवका 'तिरोभाव' करत है पर मुरन्त ही भैरवका मुँह शिवाकर इमका आविर्भाव करत है।

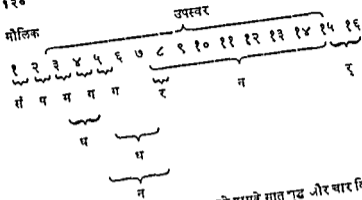
१२ ग्राम-रचना-विधि

६४ पिछले परिच्छेदोंमें ग्रामका विवरण दिया गया है और उनके स्वराकी इष्टता अनिष्टताका विचार भी किया गया है। पर जिन ग्रामोंका प्रसंग पाछे आया है उनका अतिरिक्त अनेक ऐसे ग्राम होते हैं जिनका स्वर प्रबन्ध एक दूसरेमें भिन्न होता है। देश दशम आज भी ऐसे अनेक ग्रामोंका प्रचार है जिनका रूप एक-दूसरेसे भिन्न है। यह रूप भेद उनकी रचना विधिपर निर्भर है।

मुख्यतः ग्राम रचनाकी प्रक्रियाएँ तीन प्रकारकी हैं, जम—(१) प्राकृतिक (२) चक्रिक और (३) मक्रमिक। शायद ऐतिहासिक दृष्टिमें यह क्रम उल्टा जाना चाहिए। पर वर्णनकी सुविधाके लिए इसी क्रमका अनुसरण किया जायेगा।

६५ (१) प्राकृतिक प्रक्रिया—इस प्रक्रियाका सिद्धांत स्वर सवादक प्रसंग में बताया जा चुका है। यहाँ उसे और भी स्पष्ट किया जाता है। इस प्रक्रियाका साधारण यह बान्धनिक तथ्य है कि प्रत्येक ध्वनिमें मौलिकक भाव अनेक उपस्वर हाते हैं जो सगातोपयोगी ध्वनियोंमें मौलिकके आवृत्तक हैं (अनुच्छेद २९)। सगातका ग्राम किमी एक ध्वनिके इन आवृत्त उपस्वरासे ही निकलता है।

सामान्यतः किमी ध्वनिमें पन्द्रहवें सोलहवें आशिक तक बली होने है। आगेक आशिक उत्तरात्तर दुबल ही होते चले जाते हैं। इसलिए यदि सोलहवें आशिक तक ही विचार किया जाये तो किसी भी नादक मौलिक और उपस्वरोंका क्रमबद्ध रूप उद्भूत स्वराके साथ इस प्रकार होगा—



इही उपस्वराक पारस्परिक अनुपातसे ग्रामके सात गुण जोर चार विकृत स्वर निकल आते ह । ऊपर बताये हुए स्वराको क्रमबद्ध करनपर ग्रामका सस्थान ऐसा निकलता ह—

स र र ग ग म प ध ध न न स
 १ ३५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २०

इसमें तीन तरहके अंतराल पाये जाते ह—एक गुरु स्वर २ दूसरा लघु स्वर ३ और तीसरा अध स्वर ४ ।

यह प्राकृतिक ग्राम ह जिसका विचार पहल किया जा चुका ह (अनुच्छेद ५५) । इसी ग्रामके स्वर मनुष्य और पशु-पक्षियोंके कण्ठसे अनायास निकलते हैं क्योंकि इसका आधार प्राकृतिक अभिव्यक्ति ह । इसीलिए यथानिक इस ग्रामको शुद्ध प्रामाणिक और आदिम मानते ह । इस ग्रामके प्रत्येक स्वरका पडजेसे आवत्तक सम्बन्ध होता ह ।

इस ग्रामके र और न का निगम अनुमानसे ही किया गया है क्योंकि यदि इनके उच्च आवत्तक किन्नी नादमें मौजूद न तो वह बटु और अनिष्ट हो जायगा । इसलिए ग्रामको पूरी तरह आवर्तक रखनके लिए यदि इन स्वराको निबाल दें तो ग्राममें घाटसे स्वर रह जात ह जिनसे संगीत पूरी

तरह सम्पन्न नहीं हो सकता। यह इस प्रक्रियाकी एक त्रुटि है। इसके अनिश्चित बहुतेरे आवृत्तिकाका ग्राम रचनामें उपयोग ही नहीं होता। सप्तम आशिकका उपयोग सम्भवतः भारतीय सगीतमें कभी कभी होता है, पर बहुत ही अल्प।

६६ (२) चक्रिक प्रक्रिया—इस प्रक्रियाका आधार पञ्चम सवाद या स प सवाद है। स से जैसे प निकलता है उस ही प का आधार मानकर इसका पञ्चम रें ता दूसरे सप्तकका र निकलेगा और उसी तरह र स घ निकलेगा। इस प्रकार यह शृंखला आगे बढ़ती जायेगी, जैसे—

स → प → रं → घ → ग → ग° →

इस शृंखलामें प्रत्येक स्वरका मान निकालनेकी विधि नीचे दी जाती है—

प्रत्येक कठी चढानेके लिए पूर्व स्वरके मानको $\frac{3}{2}$ स गुणा किया जाता है। जब स्वर ऊपरले सप्तकमें चला जाये ता उस एक सप्तक उतारनेके लिए दा स, ऐम ही दा सप्तक उतारनेके लिए चारसे भाग दिया जाता है। जस—

स १ → प ($\frac{3}{2}$) → र ($\frac{9}{4}$) → घ ($\frac{27}{8}$) → ग ($\frac{81}{16}$) →

मध्य सप्तकका र = $\frac{r}{2} = \frac{9}{8} \times \frac{1}{2} = \frac{9}{16}$

और ग = $\frac{g}{4} = \frac{81}{16} \times \frac{1}{4} = \frac{81}{64}$ ।

सेवटकी विविध एक पञ्चम चढानेके लिए पूर्व स्वरक सप्तमानमें प का १७६ में जोड़ना और एक सप्तक उतारनेके लिए ३०१ स घटाना होगा। यदि दो सप्तक उतारना हो ता ६०२ घटाना होगा। जैसे—

स० → प (१७६म) → र (३५२) → घ (५२८) → ग° (७०४) →

मध्य सप्तकका र = रं — ३०१ = ५१ से

और ग = ग° — ६०२ = १०२ स।

इस प्रक्रियाम स से जसे पञ्चमके आराही चक्रके क्रमसे स्वर निकलने ह वसे ही पञ्चमक अवराही चक्रके क्रमसे भी स्वर निकलते हैं । जस स स एक पञ्चम उतरनेपर म, रे और म स एक पञ्चम उतरनेपर न ई मिलते ह जिहें त्रयस एक सप्तक और दो सप्तक ऊपर घटानपर म ई और न ई का निष्पत्ति हाती ह ।

किसी स्वरसे एक पञ्चम चढ़कर एक सप्तक उतरनेका अर्थ ह उस स्वरसे एक मध्यम उतरना । उसी प्रकार एक पञ्चम उतरकर एक सप्तक चढ़नेका अर्थ ह एक मध्यम चढ़ना । एक मध्यम चढ़ने या उतरनेके लिए पूरक स्वरके भिन्नाक्रमें ई स क्रमग गुणा या भाग करना हाणा और संघटम उस स्वरम १२५ स जोड़ना या घटाना हाणा । इस रीतिस ऊपर का गणना, सन्धिपन करके, एक सप्तक तक सीमित रखी जा सकता ह, जस—

१—आरोही पञ्चम चक्र—

स → प^३ → र ($\frac{३}{३} - \frac{५}{५} =$) $\frac{१}{१}$ → घ^३ → ग ($\frac{३}{३} - \frac{५}{५} =$) $\frac{६}{६}$
या संघटम—

म^० → प १७६ → र (१७६-१२५ =) ५१ → घ २२७ → ग
(२२७-१२५ =) १०२ ।

२—अवराही पञ्चम चक्र—

स १ → म^५ → न^१ → ग ($\frac{१}{१} - \frac{३}{३} =$) $\frac{३}{३}$ → घ^३
या संघटम—

स^० → म २५ → न २५० → ग (२५०-१७६ =) ७४ → घ १९९
उपरकी गणनासे चक्रिक प्रक्रियामें नीचे दिया हुआ ग्राम बनता ह—

स	र	ग	प	घ	न	स
१	$\frac{१}{१}$	$\frac{६}{६}$	$\frac{३}{३}$	$\frac{३}{३}$	$\frac{३}{३}$	२

इस ग्रामम शुद्ध म^५ का अभाव ह । पर इस अभावकी पूर्ति इस श्रृंखलाको स स एक पञ्चम नीचेसे शुद्ध करनेपर या एक स्वर स से

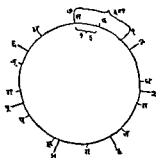
अत्रोही क्रमस लनेपर हो जाती ह । स म एक पञ्चम नीचे म ऊँ होगा जिसे एक सप्तक ऊपर चानेपर म ऊँ की निष्पत्ति हो जायेगी । अब पूरा ग्राम इस प्रकार होगा—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१	२	३ ४	५	६	७ ८	९ १० ११	१२
१		२		३ ४ ५		६	

इस ग्रामम दा ही प्रकारके अन्तराल ह—एक गुरु स्वर २ दूसरा पायथागारसका 'हेमीटोन' या लीमा जा अध स्वरमे एक कोमा छोटा है ।

इस श्रृंखलाको और भी आगे बढ़ाया जा सकता ह । जैसे न का पञ्चम तीव्र म (म') और म' का पञ्चम तीव्र स (स') होगा । इसी प्रकार आगे बढ़ाते जानस १२ कडियामें चक्र पूरा हा जायेगा अथात ग्रामके १२ स्वर मिल जायेंगे । इसी बातका चक्रके द्वारा बताया गया ह ।

इम चक्रका अधिक सूक्ष्म विचार करनेपर पता चलेगा कि यथाथमें यह चक्र वत्तकी तरह पूरा नही होता बल्कि सपकी कुण्डलीकी तरह घूमना ही जाता ह । यह चक्र पूरा तभी हा सकता ह जब तेरहवाँ स्वर ठीक आरम्भिक स पर आन कर पड, जहासे चक्र आरम्भ हुआ या । पर ऐसा नही होता । यह गणितकी सामाय क्रियासे ही विदिन हा आयेगा । चक्रमें सप्तकाके अक (१, २, ३) बढाये हुए ह जिनमें पञ्चम-सवादो स्वर फैल हुए ह । यह प्रत्यक्ष ह कि इन १२ स्वराका विस्तार ७ सप्तकाक बराबर ह । सेवटमें स-प का मान १७६ और एक सप्तकका मान ३०१ ह । इम चक्रको पूरा होनेक लिए



आ० २३

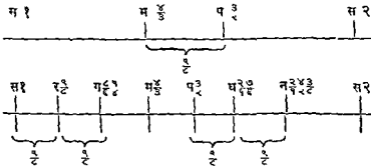
१२ X ५ को ७ X ५ के बराबर होना चाहिए। पर एमा नहीं है। हिसाब से दानाका अंतर १ सेवक बराबर है। अर्थात् तेरहवाँ स्वर स पर न पड़कर इमम एक कोमा उंचा पड़ता है। इसलिए वक्त पूरा न होकर आगे नया चक्र घुंरु हाता है जो सर्पिल हाकर घूमता ही जाता है। ऊपर निकले हुए अन्तरका पायथागारमका कामा' कहते हैं जो अगर यह गणना अधिक शुद्धतासे की जाय तो ५ ८८ सेवक बराबर हागा। 'कामा टायमिम इसम कुछ छाटा हाता है जा गुर स्वर $\frac{2}{3}$ और लघु स्वर $\frac{1}{4}$ का अन्तर $\frac{2}{3}$ या ५ ४ सेवक है।

ग्रोम दशमें पायथागारसन इस प्रक्रियाका उपयोग किया था। चीन शंग स्वर् ग्रामणी रचना भा इसी प्रक्रियासे हुई है। वहा यह चक्र ६० स्वरा तक ल जाया जाता है और इसलिए वहाँ एक सप्तकम ६० स्वर होत है। एक सप्तकमें इन ६० स्वराके प्रमाण स्वरूप प्राचान कालस ही घातुकी ऐसी नलिया बनानेका प्रथा है जिनका मात बडा ही सच्चा होता है और जा निश्चित तारनाकी ध्वनिया पदा करती है जिह लिय कहते हैं। यह चानी संगीतका अनिवाय आधार है।"

भारतीय संगीतक इतिहासमें दामिणात्य पण्डित रामामात्यन जीर उनके अनुयायी सोमनाथने इस प्रक्रियाका उपयोग वाणाक स्वरनिधारणमें किया है। इस प्रक्रियासे प्राप्त स्वराको ही उन्होंने 'स्वयभूस्वरा' कहा है। उन्होंने म-प क साध-ही-साध स म सवादका भी उपयोग किया है जा स प का ही अवरोही है।

६७ (३) सक्रमिक प्रक्रिया—इस प्रक्रियामें एक सप्तकके विस्तार को कृत्रिम रूपसे छोटे-छोटे अन्तरालामें बाँट लिया जाता है। पर इस विभाजनका एकाक या प्रमाण प्राकृतिक स्वरासे ही प्राप्त हाता है। चक्रिक प्रक्रियामें जग स्वराकी श्रृंखला चक्रम घूमता है वस ही सक्रमिक प्रक्रियामें सप्तकके विस्तारका एक सरल रखा मानकर उस टुकडामें बाँटा जाता है। आगे उदाहरणम यह प्रक्रिया स्पष्ट हा जायेगी।

म और प, य दो स्वर प्रायः उतने ही प्राकृतिक ह जितना स-स । इसलिए स्वभावतः म और प स-स के बीच सरलतासे बढाये जा सकते हैं ।



इन दो स्वराका अंतराल भी स से $\frac{४}{३}$ और $\frac{३}{२}$ निर्दिष्ट है । इन दो स्वराको म स के बीच बढानेसे इनके बीचका अंतराल $\frac{१}{२}$ निकलता है । अब दया जाता है कि स और म तथा प और स के बीचका अंतराल बहुत बड़ा है जिसे छोटे अंतरालमें बाटना आवश्यक है । इस क्रियाके लिए म-प अंतराल $\frac{१}{२}$ का ही प्रमाण माना जा सकता है । अतः म म म म $\frac{१}{२}$ का टुकड़ा काट लें जो र होगा और फिर एक टुकड़ा और $\frac{१}{२}$ का काट लें जा गेगा । इसी प्रकार प-स अंतरालमें-स भा ध और न का टुकड़ा काट लें । इस क्रियाके बाद दखेंगे कि ७ स्वराका ग्राम तयार हो जाता है । यह ग्राम वहा है जो चक्रिय प्रक्रियासे प्राप्त हुआ था ।

पर इस प्रक्रियाका अधिकार यही तक समाप्त नहीं होना । पूरा ग्राम तयार होनेपर ग और म के बीचका एक नया अंतराल मिल जाता है जिसका उपयोग नये स्वराका उत्पत्तिमें किया जा सकता है । यह अंतराल $\frac{३}{२} \times \frac{४}{३}$ का है जिसे 'लीमा' कहते हैं । अब किसी स्वरमें म एक लीमा काटकर या उसमें एक लीमा जाड़कर उसे कामल या तीव्र किया जा सकता है । यदि एक स्वर अर्थात् $\frac{३}{२}$ में-से एक लीमा काटें तो गप अंतरालका मान

$$\frac{३}{२} \times \frac{३}{२} \times \frac{४}{३} = \frac{३}{२} \times \frac{६}{४} = \frac{९}{४}$$

होता है जिस एंपाटोम कहते हैं। यह अथ स्वर $\frac{3}{4}$ के लगभग बराबर है। अथ स्वरका मान सपटम २८ होता है और एंपोटोम का २८६। दोनाका अंतर गिफ ६ सेबट है। पर अब यह एक नया अंतराल मिल गया जिसका उपयोग स्वराव उतार चढावमें किया जा सकता है। जरा मस सीमाक बदल एक एंपोटोम या अथ स्वर नीचे उतरनम अब पामपागोरस का गांधार ($\frac{4}{3}$) नहीं बल्कि प्रकृत गांधार ($\frac{5}{4}$) मिलेगा। प्रकृत गांधार प्राप्त होनेपर लघु स्वर $\frac{1}{2}$ और लघु स्वर और गुरु स्वरके अन्तरस कोमा $\frac{1}{4}$ आपस आप निकल आते हैं। फिर उधु स्वर $\frac{1}{2}$ और अथ स्वर $\frac{3}{4}$ के अन्तरसे लघु अथ स्वर $\frac{3}{8}$ की निष्पत्ति होती है। सक्रमिक प्रक्रियाम इन सार अन्तरालाका उपयोग स्वराव उतार चढावमें किया जाता है। इन्हें एक साथ नीचे किया जाता है —

कोमा	$\frac{1}{4} = 4$ सेबट (लगभग) ।
लघु अथ स्वर	$\frac{3}{8} = 12$ '
सीमा	$\frac{3}{4} = 24$ '
अथ स्वर	$\frac{3}{4} = 28$

अथ स्वर और लघु स्वरकी निष्पत्ति भीचे तरीकेसे भी होती है। क्या कि यह अनुभव गिद्ध और नियमित है कि यदि मक्रमक मागसे पडजसे ऋषभ लेकर गांधारपर जायें तो चढा गांधार $\frac{4}{3}$ मिलेगा और यदि सवाव मागसे ऋषभका रूपन करके पडजसे एक बार ही गांधारपर जायें तो प्रकृत गांधार $\frac{5}{4}$ मिलेगा। एक बार प्रकृत गांधार मिल जानेपर लघु स्वर और अथ स्वरकी निष्पत्ति अनायास होती है।

ऊपरके विचाराम यह परिणाम निकलता है कि सक्रमिक प्रक्रियाका अधिकार धन सबसे अधिक व्यापक और साधक है क्योंकि इसमें प्राकृतिक और चक्रिक प्रक्रियाआक सभी अन्तरालाका उपयोग होता है।

६८ प्राचीन यूनानी पद्धतिमें इसी प्रक्रियासे ग्रामकी रचना होती

थी। इसमें नारे सप्तकका एक साथ विचार नहा होता था। एक चतु-सधान (स र ग म) के आवेष्टनका अचल मान बीचके दो स्वरोंको विचलित करके भिन्न भिन्न ग्रामाकी रचनाकी जाता थी। एक चतु सघातमें स और म अचल स्वर हैं जा इसके आवेष्टनको अचल बनाये रखते हैं। बीचके दा स्वर र और ग चल हैं जा कोई भी स्थान ग्रहण कर सकते हैं और चतु सघातमें इनकी व्यापक स्थिति हा पर ग्रामका रूप निभर है। पूव चतु सघातमें स और म और उत्तर चतु सघातमें प और स अचल हैं जो दोनों चतु सघातकी आवेष्टनको भी अचल रखते हैं। इसीलिए अरिस्टाटलने इन्हें 'मवादका शरीर' बनाया है।

चतु सघातके विभाजनकी विधि अनुमार प्राचीन पद्धतिमें ग्रामकी तीन जानिया मानी जाती थीं—(१) द्विस्वरक (डायटोनिक) (२) अर्ध स्वरक (क्रामेटिक) और (३) श्रुतिमूलक (एनहार्मोनिक)।

१—द्विस्वरकमें म म के बीचका देश दो गुरु स्वर और एक अध स्वर या नेमामें बाटा जाता था। उपयुक्त पायथागोरसका ग्राम इसी जातिका ह।

२—अध स्वरमें एक टुकड़ा काफल गाघार $\frac{1}{2}$ के बराबर होता ह, जो लगभग तीन अत्र स्वरक बराबर ह और शेष एक स्वर प्राय दा अर्ध स्वरक टुकड़ामें बँटा होता ह।

३—श्रुतिमूलकमें एक टुकड़ा प्रकृत गाघार $\frac{1}{4}$ के बराबर हाता ह और शेष अध स्वर प्राय दो टुकड़ामें बँटा हाता ह। यह छोटा टुकड़ा एक स्वरका चतुर्थांश माना जाता ह। इसीलिए इस जातिको श्रुतिमूलक कहा गया है।

किसी चतु सघातमें इन टुकड़ाका क्या क्रम ह, इस बातपर एक एक जातिक अनक भेद हो सकते हैं।

इन जानियामें मुख्य बात यह ह कि द्विस्वरकमें चढा गाघार $\frac{1}{2}$ अधस्वरकमें कामऊ गाघार $\frac{1}{2}$ और श्रुतिमूलकमें प्रकृत गाघार $\frac{1}{4}$ का

प्रयोग होता है। इससे यह धारणा भी सिद्ध हो जाती है कि संक्रमणसंज्ञा गांधारपर जानम विवाही गांधार $\frac{5}{4}$ मिलता और लघनसंज्ञा गांधारपर जानम मवादा गांधार $\frac{3}{2}$ या कोमल गांधार $\frac{1}{2}$ मिलता है। यह स्वाभाविक क्रिया है जिसे नियंत्रण कण्ठ और कानकी रचनासे होता है।

प्राचीन यूनाना ग्रामकी तरह ही भारतीय, जरबी और फारसी ग्राम भी संक्रमिक प्रक्रियासे ही तयार हुए हैं। आधुनिक भारतीय दागिणारत्य गुरु ग्राम स्पष्टन अधस्वरक जातिका और उत्तरीय ग्राम द्विस्वरक जातिका है। ध्रुतिमूलक जातिके ग्रामका भी प्रयोग भारतीय संगीतमें पाया जाता है।

अब यहाँ चक्रिक प्रक्रिया और संक्रमिक प्रक्रियाके स्वरकी तुलना की जाती है।

यह बनाया जा चुका है कि चक्रिक प्रक्रियामें आरोही क्रमसे १२ कडियामें चक्र प्रायः पूरा हो जाता है। उसी तरह अवरोही क्रमसे भी चक्रको पूरा करनेके लिए १२ कडियाका आवश्यकता होगी। अगर बनायी हुई क्रियासे एक सप्तकमें ही गणना की जाय तो आरोही और अवरोही चक्रामें नीचे दिये हुए स्वर निकलें—

१—आरोही चक्र (सवटम)

स० → प १७६ → र ५१ → ध २२७ → ग १०२ → न २७८ → म' १५३ → म २८ → प २०४ → र ७९ → ध २५५ → ग' १०० → न' ३०६ (सं० ३०१) ।

२—अवरोही चक्र (सवटम)—

स० → म १२५ → न २५० → ग ७४ → ध १९९ → र २३ → प १४८ → म २७३ → न ९७ → म २२२ → ग ४६ → ध १७१ → र २९६ (सं० ३०१) ।

संक्रमिक प्रक्रियामें ५ गुरु स्वर (५१ स) और २ लीला (२३ स)

होते ह । अब लीमाक प्रमाणसे प्रत्येक स्वरको उतारनेपर ५ कामल स्वर और मिलगे जैसे, र (२८) ग ७९, प १५३ घ २०४ और न २५५ । म और स को एक एक लीमा उतारनेसे गुरु म और गुरु न ही मिलेंगे, इसलिए ये नहा उतारे जा सकते । इस प्रकार ग्राममें १२ स्वर हुए । यह ग्राम सावभौम ह ।

पर यदि उतारनेक बदल प्रत्येक स्वरका एक लीमा चढाया जाय तो ५ नय स्वर मिलेंगे, जैसे स' २३, र' ७४, म' १४८ प' १९९ और घ' २५० । ग और न नहीं चढाये जा सकते । इस प्रकार ग्राममें १७ स्वर हुए । फारसी ग्राम इमा प्रकारका ह ।

यदि प्रकृत गा गार (५) स निकले हुए लघु स्वर (१९) या ४६ से के पमानेस प्रत्येक स्वरका चढावें तो ५ स्वर और निकलगे जो शुद्ध गुरु स्वरासे एक एक कामा (५ से) उतर हुए हागे, जैसे, स" (४६) र" (९७), म (१७१) प" (२२२) और घ" (२७३) । ग म और न-स अंतरालाक एक एक लीमा होनेसे इनमे ग ' और न के स्थान नहीं आ सकते । इसलिए अब ग्राममें २२ स्वर हुए । प्राचीन हिन्दू ग्राम इसी प्रकारका ह ।

आगेका सारिणीस पता चलेगा कि इन दोना ही प्रक्रियाआसे निकल हुए स्वर एक ही ह, कवल चक्रिक ग्रामम दा स्वर अधिक ह । ये दो स्वर भी सक्रमिक ग्राममें आ सकते ह पर इन प्रक्रियाआकी युक्तिसे ही यह सिद्ध ह कि चक्रिक ग्राममें २४ स्वराका और सक्रमिक ग्रामम २२ स्वराका होना स्वाभाविक ह । या ता यह मानना ही पडेगा कि इन दोना ही प्रक्रियाआम कितने प्रकारक ग्राम हो सकते ह, इसकी कोई निर्दिष्ट सीमा नहीं ह ।

नोचेकी सारिणीम दाना ही प्रक्रियाआसे निकले हुए स्वर, तारता-क्रम से, दिये जाते ह जिससे तुलनामें सरलता होगी ।

सारिणी ६

व्यक्तिक प्राम		सन्नमिक प्राम	
स्वर	अतराल(सेक्ट)	स्वर	अतराल (सेक्ट)
स	०	स	०
र	२३	स	२३
ग	२८	र	२८
ग	४६	स'	४६
र	५१	र	५१
ग	७४	र'	७४
र	७६	ग	७६
ग	९७	र'	९७
ग	१०२	ग	१०२
म	१२५	म	१२५
ग'	१३०	—	—
प	१४८	म	१४८
म'	१५३	प	१५३
ध	१७१	म	१७१
प	१७६	प	१७६
ध	१९९	प'	१९९
प	२०४	ध	२०४
न	२२२	प'	२२२
ध	२२७	ध	२२७
र	२५०	ध	२५०
ध'	२५५	र	२५५
स	२७३	ध'	२७३
न	२७८	न	२७८
र	२९६	—	—
न' (स)	३०६(३०१)	स	३०९

५६ साधृत ग्राम^१—इस प्रकारके एक ग्रामकी चचा पहले की जा चुकी है जिसमें एक सप्तकमें १२ अक्षरों के अंतरालक होते हैं। यह भी बताया जा चुका है कि हिन्दुस्तानी संगीत समाजमें इस प्रकारके ग्रामकी उपयोगिता सिर्फ अचल स्वरवाले वाद्योंमें संगीतके लिए है। यहाँ इस प्रकारके ग्रामकी रचना विधिपर विचार किया जायगा।

प्राचीन कालमें पाश्चात्य देशोंमें उपयुक्त पायथागोरसके ग्रामकी प्रचार बहुत शीघ्रता से फैल रहा। उस समय इस ग्रामके हर एक स्वरको स्वरित या पडज मानकर अनेक मूच्छनाएँ बनायी जाती थीं जिन्हें 'माड' कहा जाता था। इस प्रकार अनेक उपग्राम या 'ठाठ' पदा हो जाते थे जिससे संगीतमें विचित्रता आ जाती थी। आगे चलकर महति के प्रभावमें सभी मोडाका लय हाकर केवल गुरु ग्राम और लघु ग्राम रह गये। इसमें संगीतकी विचित्रता जाती रही और इसमें एकरसता आने लगी जो रसनाके लिए असह्य होती है। इस श्रुतिको यथामुभव दूर करनेके लिए पाश्चात्य संगीतमें एक नया गलाका प्राणभाव हुआ।

इस गलाके अनुसार ग्रामको बिना बन्द हुए स्वरित बदलते जानकी प्रथा चल पड़ा अर्थात् संगीतका आरम्भ यदि स्वरित में ही होता है तो बादकी विचित्रता लानेके लिए र ग आदि अन्य स्वरोंमें किसी एकका स्वरित मान लिया जाता है और उसी गानका उसी ग्राममें इस नये स्वरित से गुरु किया जाता है। इसमें प्रत्येक स्वर समान रूपसे ऊपर चढ़ जाता इस स्वरित चालन या 'माडयुलान' कहते हैं। अब यह समझना आसान है कि पायथागोरसके ग्रामके साथ हार्मोनियम या प्याना-जस अचल स्वर

१ इस ग्रामका नाम 'साधृत' इसलिए रखा गया है कि प्राचीन शास्त्रोंमें 'साधारण' शब्द दो स्वरोंका, दो ग्रामोंका या दो जातियोंका मन्थिके अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। इस ग्रामका भी हर एक स्वर मन्थिके हा वन है।

वाज बाजाम यह स्वरित-बालन नहा हा सकता । इसके लिए अनक नय स्वराकी पटरियाँ बैठानी हागी । दूसरी बाधा यह आ पडी कि सहतिमें इए सधाताका हा उपयोग होना ह जिममें आवतक या प्रवृत्त स्वर ही काममें आ सकते हैं । विगण रूपस गाधारका इए होना आवश्यक ह । अघात सहतिम प्रकृत ग ३ का प्रमाण हाना चाहिए पायथागोरसक गाधार (६३) का नही ।

इन्ही कारणसे पायथागोरसक ग्रामका मदिमा तब पांचाल्य दगामे माध्राग्य रहन हुए भी महनि-मूलक मगीतके आविभाव और पटरियावाल बाजाक आविष्कारक बाद नये कृत्रिम ग्रामका आवयकता पडा ।

१—स्वर-साधून ग्राम—इस दिगाम पहले प्रथमक फलवरूप स्वर साधन ग्राम की रचना हुई जिसका अधिकार मदिमा तब बना रहा । इस रचनाका उद्देश्य था गाधारका मजानी बनाना जिससे उपयुक्त दूसरी नुटिकी और कुछ अगामे पहली नुटिकी भी पनि होनी थी । इसकी प्रक्रिया नीचे दी जाती ह—

चक्रिक क्रममें स→२→२→घ→ग इन चार कड़ियामें गाधारकी प्राप्ति होनी ह जहा एक कड़ीका मान स-म क बराबर या १७६ सेवट ह । इस गाधारका मान पहले सप्तकम १०२ सेवट है । पर प्रकृत गाधारका मान ३ या ९, ९ सेवट ह । इन दोनोंका अन्तर ५ १ सेवट हुआ । इसलिए प्रकृत गाधारको निष्पत्तिके लिए हर कड़ीका ५ ३ या लगभग १ ३ सेवट छटा करना पड़ेगा । अस्तु, पायथागोरसके चक्रकी हर कड़ी १७६ क बल १७४ ७ स हाना चाहिए । इस तरह प का मान अब १७४ ७ स । अत र का मान १७४ ७ + १७४ ७ = ३४९ ४ स हुआ । इस र को उतारकर पहले सप्तकमें लानपर इसका मान ३४९ ४ - ३०१ = ४८ ४ से हाना ह । इस प्रमाणसे १२ स्वराका चक्र पूरा करने पर और हर स्वरकी पहले सप्तकमें उतारनपर नीचे दिया हुआ ग्राम तयार हाता ह—

सारिणी १०

स्वर	अंतराल म से सबट	पारम्परिक	सात स्वर	स ग
म	०	१८९	४८४	१६८
स'	१८९			
र	४८४	२९५	४८४	
ग	७७९	१८९		
ग	९६८	२९५	२९५	
म	१२६३	१८९	४८४	
म'	१४५२	२९५		
प	१७४७	१८९	४८४	
प'	१९३६	२९५		
ध	२२३१	२९५	४८४	१६८
न	२५२६	१८९		
न	२७८५	२९५	२९५	
स	३०१			

सारिणाक निरीक्षणस पना चलता ह कि इम ग्राममें गा-चार तो प्रकृत (५) है पर इसके गुरु स्वर और लघु स्वर, इन दोना अवयवाको

मिलाकर बराबर हिस्सोंमें बांट दिया गया है इसलिए गा-घारके प्रकृत होनेपर भी द्विस्वरक ग्रामको तरह स र और र-ग बराबर हा गये हैं। इसीसे इसे स्वर साधृत ग्राम कहा जाता था। यहाँ यह ध्यानमें रखनकी बात है कि यह चक्र भी पहले चक्रकी तरह पूरा नहीं होना और इसलिए इस ग्राममें और भी स्वर धुसाये जा सकत हैं।

इस ग्राममें गा-घार तो सवाणी मिल जाता है पर स्वरित-चालन कुछ ही स्वरामें सम्भव है। फिर पञ्चम बहुत ही विचलित हो जाता है और प' (घ) और उपरले सप्तकके ग का अंतराल है स अर्थात् पञ्चम सवादस बन्धु बड़ा हो जाता है। इस 'उ' फइष्टवल कहते हैं। किसी भा स्वरित चालनमें इस अंतरालमें बचना भी आवश्यक है।

२—सम-साधृत ग्राम—उपयुक्त कृत्रिम ग्रामकी दृष्टियकि कारण ही आगे चलकर उसकी जगह सम-साधन ग्रामका आविष्कार हुआ जा अभी तक प्रचारमें है। इस ग्राममें स्वरित चालनकी सुविधाके लिए गा-घार-मवादके मोहका त्याग किया गया। इस ग्रामका पञ्चम भी अपनाकृत अधिक मच्चा हा गया। अर्थात् पहले ग्राममें गा-घारको सच्चा बनानेमें जो विकार एक जगह इकट्ठा हो गया था वह १२ स्वराम बंट गया। इस ग्रामका रचनाकी प्रक्रिया आगे दी जाती है —

जमा कि पहले बताया गया है चक्रिक प्रक्रियामें चक्र वक्तकी तरह पूरा नहीं होना बकि सपिल हाकर घूमता है। अगर वक्त पूरा हा जाय अर्थात् चक्रका तरहवाँ स्वर ठीक स पर पड ता यह आसानीमें समया जा सकता है कि बारह-बारह स्वर आपसमें बराबर हा जायेंग और फिर कोई भी स्वर स्वरित चालनमें काम आ सकता है। पर १२ प ७ सप्तकमें ५ ८८ सबट ज्यादा है। इसलिए वक्तको पूरा बनानेके लिए यह आवश्यक है कि चक्रका हर बढाम में $\frac{1}{2} = 4^\circ$ या लगभग स काट लिया जाय। अर्थात् अब चक्रकी हर एक कण्ठे १७६ १ व बाल १७१ ६ हानी चाहिए। इस प्रमाणसे चक्र पूरा करनेपर १२ अर्थ स्वरके अन्तराल

परस्पर बराबर हागे और इनका मान लगभग २५ से के होगा । इस ग्रामकी सारिणी (७) पहल दी जा चुकी ह (अनुच्छेद ५४) ।

६६ जटिल ग्राम—सम साधत ग्राममें स्वरित चालनकी समस्या तो प्राय हल हो जाती ह पर सभी स्वर फिर भी अनिष्ट रहते हैं । इसलिए ऐसे ग्रामकी फिर भी आवश्यकता रहती ह जिसमें इन दोना उद्देश्याकी सिद्धि हा जाये । यह तो ऊपरकी विवेचनाम स्पष्ट ह कि पञ्चम सवादका चक्र पूरा नहा हाता । इम चक्रको पूरा करनके लिए ही प्रत्येक स्वरको खिसकाना पडता ह जिसमें बह अनिष्ट हो जाता ह । जब अगर चक्रकी शृंखला इतनी बढायी जाये कि आदि स्वर और अन्त स्वर एक दूसरेके बहुत ही निकट आ जायें तो स्वराको विचलित करनेकी आवश्यकता प्राय न रहे । और तब स्वरित चालनम भी प्रकृत पञ्चम मिल सकता ह । गणनासे यह विदित ह कि—

जम १२	पञ्चम और ७	सप्तम	लगभग $\frac{3}{2}$	(अघ स्वर)	का अंतर ह
वसे ही	४१	पञ्चम और २४	,	" $\frac{5}{4}$	" "
	५३	,	३१	" "	" $\frac{7}{4}$
	३०६	,	१७९	,	" $\frac{9}{8}$

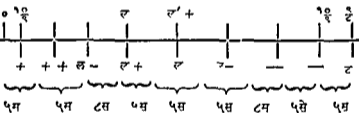
यह शृंखला इतना आग बढायी जा सकती ह कि पञ्चमका कोई आवत्य सप्तकक किसी आवत्यके और भी निकट आ जाये । इससे पञ्चम तो अधिकाधिक शुद्ध होता चला जायगा पर यह भा दखना ह कि पञ्चमक अतिरिक्त गांधार भी किम चक्रमें अधिक शुद्ध पडता ह । इस दृष्टिस विचार करनेपर ५३ स्वरवाला ग्राम सबसे अधिक उपयुक्त सिद्ध होता ह । इस प्रकारका प्रस्ताव पहल पहल गेराडुस मर्केटर (Gerardus Mercator) ने सोलहवीं सदीम किया था । उनसबो सदीमें लन्दनके बोमानेने और स्प्रिफील्डके वाइटने अपने लिए ऐसे हार्मोनियम बनवाये थे जिनम एक सप्तकम ५३ स्वर थे । पर ये व्यवहारम नर्णे आय, केवल कौतूहलकी वस्तु रह गये ।

७० जम चक्रिक प्रक्रियास ५३ स्वरोंका ग्राम बनाया गया ह वस हा देनोलून संक्रमित प्रक्रियाम ५३ स्वराना ग्राम बनाया ह । उनकी प्रक्रिया नीचेके चित्रके द्वारा समझायी जाती ह । इस चित्रका समझनेके लिए कुछ मकत पढ़ना बताया जाता ह जस —

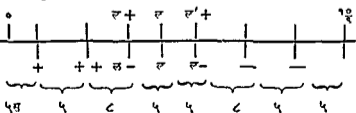
अन्तराल	संकेत	चढाव	उतार
लामा २३ स	ल	ल'	ल
गुरु अध स्वर २८ स	ल +	ल' +	ल +
लघु अध स्वर १८ स	ल -	ल' -	ल -
कामा		+	-

इहीं संकेताक द्वारा स्वरान टुकडाका बनाया जाता ह जस—

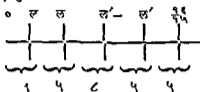
१—गुरु स्वर—



२—लघु स्वर



(३) गुरु अर्ध स्वर—



ऊपरकी क्रियास गुरु स्वर ९ भागाम, लघु स्वर ८ भागोमें और गुरु अर्ध स्वर ५ भागामें विभक्त होते हैं। एक सप्तकमें ३ गुरु स्वर, २ लघु स्वर और २ अर्ध स्वर हाते हैं इसलिए एक सप्तक कुल ५३ भागामें विभक्त हुआ।

इस विभाजन प्रक्रियाम और चक्रिक विभाजन प्रक्रियाम कोई विशेष अंतर नहीं ह। जैसे इसम एक अणु स्वर एक कोमाके बराबर हाता ह चक्रिक प्रक्रियामें भी प्राय वैसे हो होता ह। अगर यह ग्राम "यावहारिक हो तो इसमें उपर्युक्त तीना ही प्रक्रियाआस निष्पन्न सारे ग्राम आ जाते हैं। पर इस प्रकारके जटिल ग्राम बवल कौतूहलकी वस्तु है व्यवहार की नहीं।





७१ संगीतकी सृष्टि नादस हाती ह । जिस तरह मिट्टी या पत्थरस मूर्ति, रगस चित्र और इट-पत्थरसे महल तयार होते है, उसी तरह नादसे संगीत प्रस्फुटित होता ह । मिट्टी आदिकी तरह ही नाद संगीतका उपादान मात्र ह । कोई नाद चाहे जितना भी श्रुति-मधुर हो, अकेला संगीतका रूप नहीं ले सकता । एस नादमें ही संगीतका रूप दखना वसा ही ह जमा किसी पत्थरक ढाँचेमें बुद्धकी मूर्ति या रगाके ढरमें रम्भा मदालसाका चित्र देखना । किसी भी कला-कृतिके लिए अच्छे उपादानका ग्रहण करना उचित ह और इस दृष्टिसे संगीतके लिए कण प्रिय नाद भी आवश्यक ह । पर कण प्रिय नाद स्वयं न तो संगीत ह और न संगीतक लिए अनिवार्य ह । कलाकी सृष्टि उसके उपादानक रीतिगत उपयोग या प्रबन्धस हाती ह । यह प्रबन्ध कलावानकी कृति ह । एक साधारण मनुष्य माठी आवाज मुनकर ही तप्त हो सकता ह पर संगीतका पारखी यह दखता ह कि किसीने अपनी भीठी आवाजका किस रीतिस उपयोग किया ह—भीठी आवाजकी भित्तिपर कसो कारीगरी की ह । अस अनेक रंगाके प्रबन्धस चित्र कलाकी सृष्टि होती ह वसे ही भिन्न भिन्न तारताक अनक ऊँचे-नीचे नादाके प्रबन्धस संगीत-कलाकी सृष्टि होती ह । किसी नादकी प्रिय या अप्रिय वदना कर्णेंद्रिय तक ही सीमित होती ह । यह कण-स्त-तुआके स्पन्दस उत्तेजित केवल शुद्ध और परिच्छिन्न मानसिक विकार है । पर संगीतकी उत्पत्ति एमी अनक मानसिक अनुभूतियाँ क्रम और पारस्परिक सम्बन्धस हाती ह । एक आदिम मनुष्यको दूबन हुए मूरजका लाल धक्का दखकर हप हो सकता ह या खोखल बाँसकी नलीमें हवाक सञ्चारम निकली हुई ध्वनि मुनकर तृप्ति हा सकता ह । पर न तो चित्रकला कवल लाल रंग ह और न संगीत केवल बाँसकी ध्वनि ।

इस दृष्टि सगीत केवल नाद नहीं बरन भिन्न भिन्न तारता या स्थानके ऊँचे-नीचे स्वरका क्रम उद्ध प्रबंध है अर्थात् सगीतक विकासकी पट्टीको बड़ी 'अंतराल' है (अनुच्छेद ४७) ।

७२ डाविनने अपन 'मानव अवतरण' म अनेक वनानिकाके निरीक्षणके आधारपर यह बनाया है कि पशु-पशियानी ध्वनिमें भी भिन्न भिन्न स्वरके अन्तराल पाये जात हैं । और प्रायः ये अंतराल ऐसे होत हैं जिनका उपयोग मनुष्य समाज अपनी सगीत-कला म आज भी कर रहा है । कुत्ते, पालतू हानके बाद चार या पाँच स्पष्ट स्वरमें भूकने लगे हैं । 'घरेलू मुँगे कमसे-कम एक दर्जन स्पष्ट स्वरमें बोलते हैं ।' स्वरण्ड लीड उठन अमरीकामें पाये जानेवाले एक विशेष जातिके चूहेका वजन किया है । उन्होंने बताया है कि यह चूहा अपन गलेस अध स्वर तकका सच्चा अन्तराल निकालता है । यह कभी-कभी अपने स्वरका ठीक ठीक एक अष्टक नीचे उतारता है । उन्होंने इस चूहेके प्राकृतिक सगीतको स्वर लिपि म तयार की है । बहुतेरे पशियामें जा गायक जातिकें समझे जाते हैं, गलेस आवश्यकताके स्वर मघात निकालनेकी क्षमता हासी है ।

वाटरहाउसक निरीक्षणसे पता चलता है कि वनमानुस जाति म गिब्यन आरीही और अवगोही मून्थानमें अध स्वरकें सच्चे अन्तरालका प्रयोग करता है और इमके निम्नतम और उच्चतम स्वरमें एक अष्टकका अन्तराल होता है । इसकी ध्वनि तोत्र और सगीतमय होती है । ओवनन भी, जो एक गायक या इम निरीक्षणकी पुष्टि की है । वनमानुस जातिमें और भी जाति विशेषमें पशु है जा तीन-तीन स्वर शुद्ध अन्तरालके साथ गाते है ।

वनानिक निरीक्षणका यन् मत है कि पशियामें सगीतका उपयोग विशेष रूपसे निराशा, भय क्रोध विजय या बल आनन्दके भाव प्रकट करनेमें हाता है । पशुओंमें भी नर विशेषतः मैथुनकी श्रुतिमें ही गात हुए पाये जाते हैं जब उन्हें प्रेम, दृढ़, ईर्ष्या, क्रोध, विजय आदि भावावा प्रकट करनेकी प्रेरणा हाती है । मनुष्यका कण्ठ-रज्जु विश्वके कण्ठ रज्जुकी अपेक्षा

लम्बाईमें तिगुना होता ह । ऐसा समझा जाता ह कि विकासके आदिम कालमें 'प्रेम, क्रोध ईर्ष्या आदिकी उत्तेजनाम कण्ठके बार-बार व्यवहारसे' नरका कण्ठ रज्जु लम्बा हो गया ह । जो हा, इतना सिद्ध ह कि भिन्न भिन्न भावाको प्रकट करनमें पशु-पक्षी भी भिन्न भिन्न स्वरके सक्रमका उपयोग करते ह और वहीसे संगीतका आरम्भ होता ह ।

७३ इस दृष्टिम यह आश्चर्यकी बात नहीं कि मानव जातिक विकासके आदिम कालमें भी संगीतका अस्तित्व पाया जाता ह । पुरातत्व वत्ताजाने खोहाम पत्थरके थोडारा और लुप्त जातिक पशुआकी हड्डियाक साथ रनद्योय [प्राचीन जातिके हिरन] की हड्डीसे और सींगसे बनी हुई बांसुरी पायी ह । यह बहुत ही पुराने प्रस्तर युगकी बात ह । लेओनाइड ऊलेने जर्मोनक नीचेस एक् ११ ताराका बाजा निकाला ह जो प्राय ५००० वष पुराना ह । इससे स्पष्ट ह कि इतने प्राचीन कालमें भी मनुष्य भिन्न भिन्न स्वरके सक्रमको जानता था और उससे आनन्द उठाता था । सुमरी गायकाका ४६०० वष पुराना चित्र पाया गया ह जिसमें कई तरहके बाजे और ढोलक दीख पडत ह । मिस्र देशम प्राय ४५०० वष पुराना एक चित्र पाया गया ह जिसमें ७ गवये ह । इनमें से दो तारक बाजे और तीन बांसुरी-सरीस बाजे बजा रह ह और दो इन सवाक बीच तालियां दे रहे ह ।

तात्पर्य यह कि संगीतका विकास पशु-पक्षियादि लेकर मनुष्य तक लगातार जाता चला आया ह, और इसीलिए मानव-संगीतका विकास भी मानव-जातिक विकासके साथ-ही साथ हुआ ह । आदिम कालमें, पशु-पक्षियाकी तरह ही मानव-जातिमें भी संगीतकी प्रेरणा प्रेम, ईर्ष्या, द्वन्द, विजय आदि भावके प्रदर्शनक लिए ही होनी थी । भक्सम्यूलर आदि भाषानस्वशाकी धारणा ह कि भाषाकी उत्पत्तिके पहल संगीतकी उत्पत्ति हुई ह । क्याकि विकासका दृष्टिसे यह स्पष्ट ह कि अथ जीवाकी भाँति मनुष्यकी भी पहले केवल दुःख और व्याक भावाकी व्यक्त करनकी

प्रेरणा होता होगी जो केवल स्वर-सघातसे किया जाता होगा। पहले मनुष्य एक विशेष स्वर-सघातसे प्रेम, दूसरे स्वर-सघातसे ईर्ष्या और किसी तीसरे स्वर-सघातसे विजयकी भावनाकी घोषणा करता होगा। आगे चल कर जब मनुष्यका मस्तिष्क विकसित हुआ तो उसके एक एक व्यापक भाव-म विचारोकी अनक भिन्न भिन्न धाराएँ खुल पडी। इसी प्रकार प्रेम, ईर्ष्या, द्वन्द्व, विजय आदि शुद्ध, व्यापक भाव जटिल होने लगे। यहीसे भाषाकी उत्पत्ति हुई, जब भावमय स्वर सघातमें या स्वरके उतार चढ़ावमें स्वर व्यञ्जनमय शब्दों और वाक्योको गूँथकर किसी व्यापक भावकी अनक प्रतिक्रियाओकी व्यञ्जना होने लगी। आज भी यह देखा जाता है कि जब किसी विचारको भावमे अनुप्राणित करना होता है या थोताभावे हृदयमें विचारोके द्वारा किसी भावकी उत्तेजना पदा करनेकी आवश्यकता हाती है तो वक्ता एक स्वरके बदले स्वराक उतार चढ़ाव या अंतरालस काम लेता है, अर्थात् सार्थक वाक्याम सगीतका पुट डालता है। साधारण बोल चालमें भी वाक्याका उच्चारण एक तारतापर या एक स्वरम नही हाता। विधेयात्मक वाक्य अन्तम पञ्चसे निचल पञ्चमपर, मध्यमके अन्तरालम गिरता है। प्रदनसूचक वाक्य अन्तम पञ्चम तक ऊपर उठता है। जहा किसी शब्द पर जोर देना हाता है वहाँ वह एक स्वर ऊपर उठता है।

सगीतका सम्पर्क केवल प्रेम शृङ्गार या प्रसन्नताक भावसे ही नही है। यह आदिम मनुष्यके सार भाव, सारी वामजाआकी अभि-यक्तिका साधन था। अब भी यह देखा जाता है कि गोक या दुःखके समय विशेष रूपसे स्त्रियाका विलाप सगीतके रूपमें ही हाता है। 'अफ्रीकावासी हर्षी जब उत्तेजित होना है तो उसके मुँहसे वाक्य सगीतमें ही निकलते हैं, दूसरे हृष्टो भी उसका जवाब सगीतमें ही देता है। धार धीरे सारी मण्डला एक सुरसे गाने लगती है।' आरम्भमें मानव जातिके सारे भावाका सकेत संगीत के द्वारा ही किया जाता था। आगे चलकर जब भाषा प्रस्फुटित हुई तो

संगीतकी उपयोगिता कम हो गयी। फिर भी जहाँ समष्टि रूपस आनन्द या प्रसन्नताक प्रबल भावाको ध्वस्त करना या सार समुदायकी युद्धके लिए उत्तेजित करना हाता था वहाँ संगीतका उपयोग होता था। इसी प्रकार आदिम जातियाम समुदाय संगीत और आग चलकर सम्य मानव समाजम साम्य संगीतका प्रादुर्भाव हुआ।

७४ गानका आविर्भाव पहल हुआ या वाद्यका, इस विषयम मतभेद रहा ह। पर प्रमुख तत्त्वका यह मत ह कि गानके बाद ही वाद्यका आविष्कार हुआ ह। जो वाद्यका स्थान गानके पहल रखते ह उनकी धारणा ह कि मनुष्य पहल खोलले वासम हवाकी गतिस निकल हुए ध्वनिसे और घातुकी सनकसे आकर्षित हुआ होगा फिर उसक अनुरूप स्वर निकालनका प्रयत्न करके उसन कण्ठ-संगीत या गानका आविष्कार किया होगा। यह धारणा तभी ठीक हो सकती है जब अंतराल या स्वर-सक्रम नहीं बल्कि शुद्ध नादका ही संगीत मान लिया जाय। जब कण्ठ-संगीतका विकास पाणु पशियोंसे ही हाता आ रहा ह तो मानव-जातिमें आकर इस विकास क्रमक टूट जानका कोई कारण नहीं। इसलिए यह धारणा अधिर विश्वस्त मालूम होती ह कि मानव जातिम गानकी प्रवृत्ति विकासक क्रमस ही मौजद था। पाछे जब अनुभवस मनुष्यन वासकी नलीमें वायुकी गतिस या तारक छाने म निकली है ध्वनियारा श्रुति मधुर पाया ता इन उपकरणका उपयोग कण्ठ संगीतका नकल बननम किया। यह मानव जातिक विकासक उम कालमें हुआ जब मनुष्यका मस्तिष्क अपनी सुविधाक लिए यंत्राका आविष्कार करने लगा था।

७५ जस सम्भवत भाषाक वाक् शक्ति और उसक वाक् व्याकरण साम्यका निर्माण हुआ वस ही गानक वाक् वाद्य और वाद्यक वाक् संगीत, साम्य लिया गया। वाद्य-यंत्रक आविष्कारन संगीतकी मूर्तिमात्र कर लिया जिसस मनुष्य संगीतका विनियम कर इसी शरीर रचनापर विचार कर सका। बवल स्मनिक बलपर विचार विमता सम्भव नहीं हाता। स्मति

अतदष्टिके सामने बहुत छोटे क्षेत्रका ही चित्र रख सकती ह। इसी लिए लिपिकी भाति ही वाद्य-यंत्र भी एक नया साधन प्राप्त हुआ जिसने मस्तिष्कके सामने सगीतका पूण और स्थायी रूप खडा कर दिया। इसके बाद ही व्याकरणकी तरह सगीत शास्त्रका निर्माण हुआ जिसने ग्राम्य सगीतको शास्त्रीय सगीतमें बदल दिया। प्राचीनसे प्राचीन सगीत-शास्त्रका देखनस यही पता चलता ह कि उसके प्रणेताने, चाह पायथागोरस हा या भरत, तारके वाद्य यंत्रके आधारपर ही सगीतके नियम निर्धारित किये ह। तात्पर्य यह कि वाद्य-यंत्रके आविष्कारके बाद ही सगीत शास्त्रका निर्माण हुआ ह जिमसे सगीतके विकासकी नयी स्फूर्ति मिली ह।

७६ पशु-पशियाके क्रिया कलापम भी नियम दिलायो पटना है और उनम भी परिस्थितिके अनुसार निष्पत्तीक सप्तता पायी जाती है। पक्षियोंके घोंमलाको देखनेसे मालूम होता ह कि उहाने काफी ममत्वदारीस काम लिया ह। गरीफेकी तरह बना हुआ अवाबीलका घासला देखकर यही धारणा होती ह जैसे यह किसी गिल्पीकी कृति हा। पर पशु-पशियोंमें बोध होनेपर भी उहें सारी प्रेरणा स्वभावसे मिलती ह। इसीलिए उनकी कृतियामें एक प्रकारकी समानता हाती है जा एव जातिक पशु-पशियाक काव्य-कलापमें अक्षुण्ण रहती ह। अथात् उनकी कृतियामें यक्तिगत विशेषता पना नहीं रहती बरन् वगवग या जातिगत विशेषता रहती ह। मानव जाति में मस्तिष्कके विकासक कारण स्वभाव बुद्धिके प्रभावसे दुबल हो जाना ह इसलिए मानव-कृतियामें व्यक्तिगत विशेषता और विभिन्नता पाया जाती ह। अतः कलाका आरम्भ यहासे होता ह जहाँ मनुष्यकी कृतियामें बुद्धिके उपयोगसे विभिन्नता आने लगती ह। सभ्यपमें यह कहा जा सकता ह कि कला मूलतः कृत्रिम ह, जिसका मुख्य उपकरण बुद्धि ह। इसलिए यद्यपि सगीतकी आदिम प्रेरणा भाव ह फिर भी सगीत कला भाव-ही भाव नहीं ह। सगीत बुद्धिकी कारीगरीस ही कलाक रूपम खडा होता ह। बुद्धिका उपयोग विवक और विचारके रूपमें होता ह। जाव सगीत शुद्ध भावमय

हाता ह । आदिम मानव-संगीतम भाव प्रबल हाता ह, पर बुद्धिक प्रभावस उसम विभिन्नता और व्यक्तित्व आन लगता ह । कलाका यहीस आरम्भ होता ह । पर बुद्धि गीण होनसे यह कलाका आदिम रूप ह । जब मानव ससृतिवे विकासवे साथ साथ भाव बुद्धिसे अधिकाधिक नियन्त्रित होन लगता ह तत्र कलाका सच्चा ससृत रूप प्रकट होता ह । इस प्रकार यह स्पष्ट ह कि संगीत-कलाका सच्चा विकास सभी जातियाम, सभी देशाम, संगीत शास्त्रवे निर्माणक द्वारा हुआ ह । अतः शास्त्रीय संगीतका ही उच्च संगीत कला मानना उचित ह ।

जब सगात-कलाका विकास बुद्धिक द्वारा हुआ तो निःसन्देह, इसक गुण-तत्त्व और सौन्दर्यकी बुद्धिसे द्वारा ही ग्रहण किया जा सकता ह । और इस प्रकार संगीत कलाका लक्ष्य भी शक्ति द्विद्रिय सुख नहीं बल्कि स्थायी बौद्धिक आनन्द ह । इस उद्देश्यकी पूर्ति लक्ष्य लक्षण युक्त संगीत शास्त्रक अध्ययनम ही हो सकती ह । इतना ही नहीं, किसी भी देश या जातिकी या किसी भी युगकी ससृति और उसकी बौद्धिक दगाका मूल्य उसके संगीत शास्त्रकी विवचनास आँका जा सकता ह । आज यदि पाश्चात्य देशका सगातम हिन्दुस्तानी संगीतको पसन्द नहीं करता या एक हिन्दुस्तानीका पाश्चात्य संगीतमें कोई रस नहीं मिलता तो इसका यह कारण नहीं ह कि हिन्दुस्तानी संगीत या पाश्चात्य संगीत-कलाकी दृष्टिस हीन ह । इसका मुख्य कारण यह ह कि न तो पाश्चात्य सगातम हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिस परिचिन ह और न हिन्दुस्तानियाकी पाश्चात्य पद्धतिका ज्ञान ह ।

इसीलिए किसी भी संगीत प्रणालीका मूल्य उसकी पद्धतिक अध्ययन, उसकी परम्परापर विचार और उसकी प्रचलित परिपाटामें त्रियात्मक रचिवे द्वारा ही समझा जा सकता ह । प्रत्येक संगीत-पद्धतिका भूत, यत्तमान और भविष्य ह । इसलिए उसक इतिहास उसक व्यवहार और उसकी सम्भावनाआ पर सहानुभूतिक साथ विचार करके ही उसका महत्त्व समझा जा सकता ह ।

२४ प्राचीन स्वर-ग्राम

[क] वैदिक पद्धति

७७ भारतीय सगीतका आरम्भ वैदिक कालसे ही होता है। वैदिक स्वर सङ्ग्रह ही भरत ग्रामका विकास माना जाता है (अनुच्छेद ८२)। भरतकी पद्धतिसे ही कालांतरमें दक्षिणात्य और उत्तरीय पद्धतियाका जन्म हुआ।

भरतकी पद्धति और प्राचीन यूनानी पद्धतिके बीच बहुत अशामें समता पायी जाती है। सम्भव है कि प्राचीन कालमें इन दोनों पद्धतियाक बीच आदान प्रदान हुआ हो। पर यह इतिहासनाकी विद्वानका विषय है। मध्यकालमें उत्तरीय सगीत मुसलमानाके सम्पर्कमें आया। पर मुसलमानों द्वारा और उस्तादान भारतीय सस्वारको नष्ट न होन दिया। आदि मुसलमान सगीताचाय अमीर खुसरूने यह घोषणा कर दी कि वे तुक होकर भी हिन्दुस्तानी हैं और इसलिए उन्हें मिस्र या अरबसे कोई प्रेरणा नहीं मिली है। उनकी कला हिन्दुस्तानी ही है। अमीर खुसरूका यह आत्म आज भी काम कर रहा है। उच्च कोटिके गायक और नायक, चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, सगीतका अनुशीलन आज भी भारतीय पद्धतिके अनुसार ही करते हैं। उनका आलाप, तान, सरगम आदि प्राचीन नियमाक अनुसार ही होता है। मुसलमान ग्रन्थकारान भी भरत शाङ्गदेव की मलापर ही श्रुति, स्वर, ग्राम, मूचडना आदिका विचार किया है।

१ Life and works of Amir Khusru' by Dr
Mohomed Wahid Mirza The University of the
Punjab 1935

अस्तु बाह्य सम्पक्के होते हुए भी भारतीय संगीतका संस्कार अबाध रूपसे भारतीय ही रहा है। भारतीय संगीतकी गति विधि समझनेके लिए वैदिक कालमें ही इस संस्कारके प्रवाहपर विचार करना आवश्यक है।

७८ प्रायः सभी जातियाँ और सभी देशोंमें यह पाया जाता है कि ग्राममें स्वराकी संख्या पहल कम थी, जो क्रम-क्रम बढत बढत सात हो गया। ग्राम्य संगीत प्रायः सभी देशोंमें पाँच स्वरवाली 'ओडव' जातिके या एक ही चतुःसथातक पाय जात है। पहल अधः स्वरक अंतरालका उपयोग नहीं होता था—एक स्वर या इससे बडे अंतराल ही काममें आत थे। चीन, स्वाटलण्ड और आयरलैंडका मुख्य ग्राम्य गीत आज भी ओडवमें ही गाया जाता है जिनका मूच्छता 'स र म प ध स' है। यह आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिका दुर्गा राग है।

गूनान (ग्रीक) देशक आदि गायक आर्यायसक वाद्यम चार ही तार थे जो 'स म प स' में बधे होते थे। बादको 'पञ्चम-सवा' (अनुच्छेद ६५) का विधिस 'र' के लिए एक तार और जोडा गया। फिर टर्पेण्डरने, इसी धामपर, म ध का समावदा किया और अंतमें पायथागोरसने 'न' जाडकर ग्रामको सम्पूर्ण कर दिया। चीन देशमें भी राजा त्साय्यूने सनातनी गायकके धार विरोधक बीच चीनी ग्रामको ओडवस सम्पूर्ण किया।

हिन्दुस्तानमें ताँ ग्राम्य गीत अधिकत एक ही चतुःसथातक अर्थात् स स म त्व सीमित पाय जात है जिनका आरम्भ तार स्थानस होता है। इसी तरह ओडव राग भी प्रचलित है। हिन्दुमतक अनुगार राग रागिनियाँ के भेदपर ध्यान देनसे यही धारणा होनी है कि रागाकी प्रवृत्ति स्पष्टत ओडव या पाडवकी धार है। सम्भव है कि रागाकी रचना रागिनियाँस पहल हुई हो।

जा हो यह ताँ तथ्य-या ही प्रतीत हाता है कि सभी जगह ग्राम थोड स्वरासे बढता हुआ सम्पूर्ण हुआ है।

यदिब गान पहल चार स्वरा तक ही सीमित था। पीछे सामगानक

उत्तर कालम सात स्वराका प्रयोग होने लगा । ' ऋग्वेदम आड्व या पान्वका प्रसग नही आना ह पर 'आचिनो गायति गायिनो गायति' 'सामिना गायति , य पद मिलत ह । ' आचिक संगीत एक स्वरका, गाधिक दा स्वराका और सामिक तीन स्वराका हाता था । आचिकका उपयोग ऋचाके उच्चारणम, गाधिकका गाथा गानम और सामिकका सामगानम हाता था । सामिकके स्वर तार स्थानके ग र स हाते थे । तार गा धार कभी कभी कण रूपमें मध्यम लकर चलता था जिमसे स्वराकी सख्या तीनक बदल चार हो गयी । इस म ग र स वाल चतु स्वरक गानका नाम 'स्वरातर' हुआ ।

७६ यजुर्वेदने वैदिक स्वराकी सना उदात्त, अनुदात्त और स्वरित बताया ह । उदात्तका अर्थ ऊँचा और अनुदात्तका नीचा ह । स्वरितका तात्पर्य उस स्वरम ह जिसपर उदात्त और अनुदात्तका मेल हो और जा बार बार उच्चारित हा । सम्भवत स्वरितसे मतलब आधार स्वरसे ह जिम बोल चालकी भाषामें सुरु कहत ह । नारदने अपनी शिक्षामें इन यजुर्वेदीय सनाआगी लौकिक स्वरासे समता बाधी ह । वैदिक सना सम्भवत एक हो चनु सघात तक सीमित थी, पर नारदने निम्न चतु सघात जोडकर अष्टक परा कर दिया । यहाँ मह भो बता दना आवश्यक ह कि वैदिक गानकी मूच्छना अवरोही थी जा तार गाधार या तार मध्यमसे चलती थी ।

नारदके मतानुसार वैदिक जीर लौकिक स्वर सनाआकी तुलना नीचे दा जाती ह—

म ग र स न ध प [म]
स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित [स्वरित]

इमे आधुनिक आरोही मूच्छनामें इस प्रकार प्रकट करेंगे—

पूर्वाग				उत्तराग			
स	र	ग	म	प	ध	न	स
स्वरित अनुदात्त उदात्त स्वरित				स्वरित अनुदात्त उदात्त स्वरित			

अस्तु बाह्य सम्पर्कके होते हुए भी भारतीय संगीतका संस्कार अबाध रूपसे भारतीय ही रहा है। भारतीय संगीतकी गति विधि समझनेके लिए बर्तमान कालस ही इस संस्कारके प्रवाहपर विचार करना आवश्यक है।

७८ प्रायः सभी जातियाँ और सभी देशोंमें यह पाया जाता है कि ग्राममें स्वरकी संख्या पहले कम थी, जो क्रम-क्रम बढत बढत सात हो गयी। ग्राम्य संगीत प्रायः सभी देशोंमें पाँच स्वरवाली 'ओडव' जातिके या एक ही चतुःसपातक पाय जात है। पहले अथ स्वरके अंतरालका उपयोग नहीं होता था—एक स्वर या इससे बड़ अंतराल ही काममें आत थे। चीन, स्कॉटलैण्ड और आयरलैण्डका मुख्य ग्राम्य गीत आज भी ओडवमें ही गाया जाता है जिनका मूच्छना स र म प घ म है। यह आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिका दुर्गा राग है।

यूनान (ग्रीस) देशके आदि गायक आफियसके वाद्यम चार ही तार थे जो 'स म प स' में बधे होते थे। बादकी 'पञ्चम-सवा' (अनुच्छेद ६५) की विधिस 'र' के लिए एक तार और जोड़ा गया। फिर टर्पेण्डरन, इसी धारपर, म घ का समावेश किया और अन्तमें पाययागारसने न जोड़कर ग्रामको सम्पूर्ण कर लिया। चीन देशमें भी राजा त्साय्यून सनातनी गायकके चार विरोधक बीच चीनी ग्रामको ओडवस सम्पूर्ण किया।

हिन्दुस्तानमें ता ग्राम्य गीत अविश्रुत एक ही चतुःसपातक अर्थात् स स म तक सीमित पाये जात है जिनका आरम्भ तार स्थानस होता है। इसी तरह ओडव राग भी प्रचलित है। हनुमन्मतके अनुगार राग रागिनियाँ के भेदपर ध्यान देना यही धारणा होती है कि रागाकी प्रवृत्ति स्पष्ट ओडव या पाडवकी आर है। सम्भव है कि रागाकी रचना रागिनियाँसे पहले हुई है।

जा हो, यह ता तथ्य-सा ही प्रतीत होता है कि सभी जगह ग्राम पाड स्वरसे बनता हुआ सम्पूर्ण हुआ है।

बदिक गान पहले चार स्वरों तक ही सीमित था। पाँचे सामगानक

उत्तर कालमें सात स्वराका प्रयाग होने लगा । “ऋग्वदम ओडव या पाटवका प्रसंग नहीं आना ह पर ‘आचिनो गायति गायिनो गायति’ सामिना गायति , य पद मिलत ह ।’ आचिक सगीत एक स्वरका, गायिक दा स्वराका और सामिक तीन स्वराका हाता था । आचिकका उपयोग ऋचाके उच्चारणम, गायिकका गाथा गानम और सामिकका सामगानमें हाता था । सामिकक स्वर तार स्थानके ग र स हाते थे । तार गा धार कभा कभी कण रूपमें मध्यम लेकर चलता था जिमसे स्वराकी सख्या तानक बढल चार हो गयी । इस म ग र स वाल चतु स्वरक गानका नाम ‘स्वरातर’ हुआ ।

७६ यजुर्वेदने वैदिक स्वराकी सना उदात्त, अनुदात्त और स्वरित बनाया ह । उदात्तका अर्थ ऊँचा और अनुदात्तका नीचा ह । स्वरितका तात्पर्य उम स्वरस ह जिसपर उदात्त और अनुदात्तका मेल हो और जा बार बार उच्चारित हो । सम्भवत स्वरितस मतलब आधार स्वरसे ह जिम बाल चालका भाषामें सुर कहते ह । नारदने अपनी शिक्षामें इन यजुर्वेदीय सनाआसी लौकिक स्वरास समता बाँधी ह । वैदिक सज्ञा सम्भवत एक ही चतु सघात तक सीमित थी पर नारदने निम्न चतु सघात जाडकर अष्टक परा कर लिया । यहाँ यह भी बता दना आवश्यक ह कि वैदिक गानकी मूच्छना अवरही थी जो तार गाधार या तार मध्यमसे चलती थी ।

नारदके मतानुसार वैदिक और लौकिक स्वर सनाआकी तुलना नीच दी जाती ह—

म ग र स न ध प [म]
स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित [स्वरित]

इमे आधुनिक आरोहा मूच्छनामें इम प्रकार प्रकट करेंगे—

पूर्वाग				उत्तराग			
स	र	ग	म	प	ध	न	स
स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित	स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित

अस्तु बाह्य सम्पर्क होते हुए भी भारतीय संगीतका सस्कार अबाध रूपसे भारतीय ही रहा है । भारतीय संगीतकी गति विधि समझनेके लिए बर्दिक कालस ही इस सस्कारक प्रवाहपर विचार करना आवश्यक है ।

७२ प्राय सभी जातियाँ और सभी देशोंमें यह पाया जाता है कि ग्राममें स्वराकी संख्या पहल कम थी, जो क्रमशः बढ़त बढ़ते सात हो गयी । ग्राम्य संगीत प्राय सभी देशोंमें पाँच स्वरवाली 'ओडव' जातिके या एक ही चतुःसंघातक पाय जात है । पहल अध स्वरक अंतरालका उपयोग नहीं होता था—एक स्वर या इससे बड़ अंतराल ही काममें आत थे । चीन, स्काटलैण्ड और जर्मनीके मुख्य ग्राम्य गीत आज भी ओडवमें ही गाया जाता है जिनकी मूळरचना सर म प घ स' है । यह आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिकी दुर्गा राग है ।

यूनान (ग्रीस) देशके आदि गायक आफ्रिकक वाद्यम चार ही तार थे जो स म प स' में बंधे होते थे । बादको पञ्चम-सवात' (अनुच्छेद ६५) की विधिस 'र' क लिए एक तार और जोड़ा गया । फिर टर्पेण्डरन, इसी वाद्यपर ग घ का समावेश किया और अतमें पायथागोरसने 'न' जाडवर ग्रामको सम्पूर्ण कर दिया । चीन देशमें भी राजा त्सायूने सनातनी गायकाके धार विरोधक बीच चीनी ग्रामको ओडवस सम्पूर्ण किया ।

हिन्दुस्तानमें तो ग्राम्य गीत अधिकत एक ही चतुःसंघात तक अर्थात् स स म तन सीमित पाये जात है जिनका आरम्भ तार स्थानस होता है । इसी तरह आडव राग भी प्रचलित है । हनुमत्पतक अनुगार राग रागिनिया के भेदपर ध्यान देनेस यही धारणा होती है कि रागाकी प्रवृत्ति स्पष्टत ओडव या पाडवकी आर है । सम्भव है कि रागाकी रचना रागिनियासे पहल हुई हो ।

जा हो, यह ता तथ्य-सा ही प्रतीत होता है कि सभी जगह ग्राम धाड स्वरसे बढ़ता हुआ सम्पूर्ण हुआ है ।

बर्दिक गान पहल चार स्वर तक ही सीमित था । पाँचे सामगानक

प्राचीन स्वर ग्राम

उत्तर कालम सात स्वराका प्रयोग होने लगा । ' ऋग्वेदमें ओडव या पाडवका प्रसंग नहा आना ह पर 'आचिनो गायति' गायिनो गायति' सामिनो गायति', य पद मिलते ह । आचिक संगीत एक स्वरका, गायिक वा स्वराका और सामिक तान स्वराका हाता था । आचिकका उपयोग ऋचाके उच्चारणम, गायिकका गाया गानम और सामिकका सामगानम हाता था । सामिकके स्वर तार स्थानके म र स हाते थे । तार गा धार कभी कभी कण रूपमें मध्यम लेकर चलता था जिमसे स्वराकी सख्या तानक बल चार हो गयी । इस म ग र स वाले चतु स्वरक गानका नाम 'म्बरा तर' हुआ ।

७६ यजुर्वेदने वदिक स्वराकी सना उदात्त, अनुदात्त और स्वरित बनायी ह । उदात्तका अथ उच्चा और अनुदात्तका नीचा ह । स्वरितका तात्पर्य उम स्वरमे ह जिसपर उदात्त और अनुदात्तका मेल हो जीर जा बार बार उच्चारित हो । सम्भवत स्वरितसे मतलब आधार स्वरसे ह जिम वाल चालकी भाषामें सुर कहते ह । नारदने अपनी शिक्षामें इन यजुर्वेदीय सनाआकी लौकिक स्वरासे समता बायी ह । वदिक सना सम्भवत एक हो चतु मघात तक सीमित थी, पर नारदने निम्न चतु मघात जोडकर अष्टक परा कर दिया । यहा यह भी बता दना आवश्यक ह कि वदिक गानकी मूच्छना अवरोही थी जा तार गा धार या तार मध्यमसे चलती थी ।

नारदके मतानुसार वदिक और लौकिक स्वर सनाआकी तुलना नीचे दो जाता ह—

म ग र स न ध प [म]
स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित [स्वरित]
इसे जाधुनिक आरोही मूच्छनामें इस प्रकार प्रकट करेंगे—

पूर्वाम उत्तराम
स र ग म प ध न स
स्वरित अनुदात्त उदात्त स्वरित स्वरित अनुदात्त उदात्त स्वरित

अन्तु बाह्य सम्पर्क होते हुए भी भारतीय संगीतका संस्कार अबाध रूपसे भारतीय ही रहा है। भारतीय संगीतकी गति विधि समयनेके लिए बर्दिक कालस ही इस संस्कारके प्रवाहपर विचार करना आवश्यक है।

७= प्राय सभी जातिया और सभी देशमें यह पाया जाता है कि ग्राममें स्वराकी संख्या पहल कम थी, जो क्रमश बढ़ते बढ़ते सात हो गयी। ग्राम्य संगीत प्राय सभी देशमें पाँच स्वरवाली 'ओडव' जातिके या एक ही चतुसपातके पाये जाते हैं। पहल अध स्वरक अंतरालका उपयोग नहीं होता था—एक स्वर या इससे बड़ अंतराल ही काममें आते थे। चीन, स्वाटलण्ड और आयरलैण्डका मुख्य ग्राम्य गीत आज भी ओडवम ही गाया जाता है जिनकी मूच्छना 'स र म प घ न' है। यह आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिका दुगा राग है।

यूनान (ग्रीस) देशक आदि गायक आदिपसक वाद्यम चार ही तार थे जो 'स म प स' में बँधे होते थे। बादकी पञ्चम-संवाद' (अनुच्छेद ६५) का विधिस 'र' के लिए एक तार और जोड़ा गया। फिर टर्पेण्डरने, इसी यादपर ग घ का समायन किया और अन्तमें पायथागोरसने 'न' जोड़कर ग्रामकी सम्पूण कर लिया। चीन देशमें भी राजा त्सायून सनातनी गायकाः घोर त्रिरोधक बीच चीनी ग्रामकी ओडवस सम्पूण किया।

हिन्दुस्तानमें तो ग्राम्य गीत अधिकत एक ही चतुसपात तक अर्थात् स र म प सीमित पाये जाते हैं जिनका आरम्भ तार स्थानस होना है। इसी तरह ओडव राग भी प्रचलित है। हनुमत्सतके अनुसार राग रागिनिया के भेदपर ध्यान देना यही धारणा होनी है कि रागाकी प्रवृत्ति स्पष्टत ओडव या पाडवकी आर है। सम्भव है कि रागाकी रचना रागिनियासे पहले हुई हो।

जा हो यह तो तथ्य-सा ही प्रतीत होता है कि सभी जगह ग्राम गाँव स्वरसिद्ध बन्ता हुआ सम्पूण हुआ है।

बर्दिक गान पहल चार स्वरा तक ही सीमित था। पीछे सामान्य

उत्तर कालमें सात स्वराका प्रयोग होने लगा । 'श्रुत्वादिमं आह्वं या पाठवका प्रमग नहीं आना ह पर 'जाचिना गायन्ति गायिनो गायति' 'सामिना गायन्ति य पद मित्त है । आचिक सगान एक स्वरका, गायिक सा स्वराका और सामिक तीन स्वरका ज्ञाना था । आचिकका उपयोग श्रुत्वाक उच्चारणमें, गायिकका गाथा गानमें और सामिकका सामगानमें जाता था । सामिकके स्वर तार स्थानक ग र म जाने थे । तार गांधार कमा-कभी कण रूपमें मंगम लेकर चलता था जिससे स्वराकी संख्या तानक बन्द चार हो गयी । इस म ग र म धातु चतु स्वरक गानका नाम 'स्वगानर' हुआ ।

७६ यद्वेदने वदिक स्वराका सना उदात्त, अनुदात्त और स्वरित बनाया ह । उदात्तका अर्थ उँचा और अनुदात्तका नाचा ह । स्वरितका तात्पर्य उभय स्वरस ह जिसपर उदात्त और अनुदात्तका मेल जा और ता बार-बार उच्चारित हो । सम्भवत स्वरितस मत्तव धाधार स्वरसे ह जिस धातु चालका भाषामें सुन कर्ण है । नादने अपनी शिष्यामें इन यद्वेदाय सनात्राकी लौकिक स्वरासे समझा बापी ह । वदिक सना सम्भवत एक हा चतु सघात तक सीमित थी, पर नारदन निम्न चतु सघात जाडकर अष्टक परा कर दिया । यहा यह भी बता दना आवश्यक ह कि वदिक गानकी मूर्च्छना अकराहो थी जा तार गांधार या तार मध्यममे चलती थी ।

नारदक मतानुसार वदिक और लौकिक स्वर-सनात्राकी तुलना नीचे दी जाता ह—

म ग र स न ध प [म]
स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित [स्वरित]

इसे बानुनिक आरोहा मूर्च्छनामें इस प्रकार प्रकट करेंग—

पूर्वांग				उत्तरांग			
म	र	ग	म	प	ध	न	स
स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित	स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित

अस्तु बाह्य सम्पर्कके होते हुए भी भारतीय सगीतका संस्कार अबाध रूपसे भारतीय ही रहा है। भारतीय सगीतकी गति विधि समझनेके लिए वैदिक कालसे ही इस संस्कारके प्रवाहपर विचार करना आवश्यक है।

७= प्रायः सभी जातियाँ और सभी देशोंमें यह पाया जाता है कि ग्रामम स्वरोंकी संख्या पहले कम थी, जो क्रमशः बढ़त बढ़त सात हो गयी। ग्राम्य सगीत प्रायः सभी देशोंमें पाँच स्वरवाली 'ओडव' जातिक या एक ही चतुःसंधातके पाये जाते हैं। पहले जध स्वरक अंतरालका उपयोग नहीं होता था—एक स्वर या इससे बड़े अंतराल ही काममें आते थे। चीन, स्काटलैण्ड और जार्जलैण्डका मुख्य ग्राम्य गीत आज भी ओडवमें ही गाया जाता है जिसकी मूच्छना स र म प घ म' है। यह आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिका दुर्गा राग है।

यूनान (ग्रीस) देशके आदि गायक आकस्मिक वाद्यम चार ही तार थे जो स म प स' में बँधे होते थे। बादके 'पञ्चम सवा' (अनुच्छेद ६५) की विधिसे 'र' क लिए एक तार और जोड़ा गया। फिर टर्पेणरने, इसी वाद्यपर ग घ का समावेश किया और अंतमें पायथागोरसने 'न' जोड़कर ग्रामको सम्पूर्ण कर लिया। चीन देशमें भी राजा त्साय्यूने सनातनी गायकाँके धार विरोधक बीच चीनी ग्रामको ओडवसे सम्पूर्ण किया।

हिन्दुस्तानमें तो ग्राम्य गीत अधिकतम एक ही चतुःसंधात तक अर्थात् स म म तव सीमित पाये जाते हैं जिनका आरम्भ तार स्थानसे होता है। इसी तरह ओडव राग भी प्रचलित है। हनुमत्मतके अनुसार राग रागिनियाँ के भेदपर ध्यान देनेसे यही धारणा होनी है कि रागाँकी प्रवृत्ति स्पष्टतः ओडव या पाडवकी आरंभ है। सम्भव है कि रागाँकी रचना रागिनियोंसे पहले हुई हो।

जा हो, यह तो तथ्य-सा ही प्रतीत होता है कि सभी जगह ग्राम चौड़े बरासे बढ़ता हुआ सम्पूर्ण हुआ है।

वैदिक गान पहले चार स्वरों तक ही सीमित था। पाँचे सामगानके

उत्तर कालमें सान स्वराका प्रयोग होने लगा । 'ऋग्वेदमें ओडक या पाण्डका प्रयोग नही आता है पर 'जाचिना गायन्ति गायिना गायन्ति सामिना गायन्ति', य पद मिलता है । जाचिक संगीत एक स्वरका, गायिक ग स्वराका और सामिक तान स्वराका जाना था । जाचिकका उपयोग ऋषाक उच्चारणमें, गायिकका गाथा गानमें और सामिकका सामगानमें हुआ था । सामिकक स्वर तार स्थानके ग र स हाते थे । तार गांधार कभा कभा कण रूपमें मंत्रम लकर चलता था जिमसे स्वराकी संख्या तीनक चल चार हो गयी । इस म ग र स वाल चतु स्वरक गानका नाम 'स्वरांतर हुआ ।

७६ यजुर्वेदने वैदिक स्वराकी सना उदात्त, अनुदात्त और स्वरित बनायी है । उदात्तका अर्थ ऊचा और अनुदात्तका नीचा है । स्वरितका तात्पर्य उम स्वरम है जिसपर उदात्त और अनुदात्तका मेल हो और जा बार बार उच्चारित है । सम्भवत स्वरितसे मतलब आधार स्वरसे है जिस वाद चलका भाषामें सुर कहते हैं । नारदने अपनी शिक्षामें इन यजुर्वेदीय सनाआकी लौकिक स्वरास समता बाधी है । वैदिक सना सम्भवत एक ही चतु मघान तक सामित थी, पर नारदने निम्न चतु सघात जोडकर अष्टक पूरा कर दिया । यहाँ यह भी बता दना आवश्यक है कि वैदिक गानकी मूच्छना श्वरोही थी जो तार गांधार या तार मध्यमसे चलती थी ।

नारदक मतानुसार वैदिक और लौकिक स्वर सनाआकी तुलना नीचे दी जाती है—

म ग र स न ध प [म]
स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित उदात्त अनुदात्त स्वरित [स्वरित]

इसे आधुनिक आरोही मूच्छनामें इस प्रकार प्रकट करेंगे—

पूर्वांग				उत्तरांग			
स	र	ग	म	प	ध	न	स
स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित	स्वरित	अनुदात्त	उदात्त	स्वरित

अपनी शिक्षाम पाणिनिने भी इसी तुलनाको पुष्टि नीचे दिये हुए श्लोकसे की है —

उदात्तो निपादगाधारौ अनुदात्त ऋपमधैवतो ।
स्वरितप्रमया श्येत षड्जमध्यमपञ्चमा ॥^१

सामवदके कालमें बढिक गान पूरे सात स्वरोंम गाय़ा जाने लगा ।^२
स्वराको सामवेगीय सना, जो ऊपरकी सनासे भिन्न ह, आग दी जाती ह—

ऋष्ट प्रथम द्वितीय ततीय चतुथ मद्र अतिस्वर
म ग र स न ध प

नारद गिगाम ध और न का स्थान उल्टा है । जने—

‘य सामगाना प्रथम स वेणोमध्यमस्वर ।
यो द्विताय स गाधारस्तृतायश्चृपम स्मृत ॥
चतुथ षड्ज इत्याहु पञ्चमो धैवतो भवेत् ।
षष्ठो निपादो विनेय सप्तम पञ्चम स्मृत ॥’

इस व्यतिक्रमका कई कारण नहा जान पडता । पर प्राचीन यूनानी पद्धतिमें भी ऐमा व्यतिक्रम पाया जाना ह । शायद मह सभी प्राचीन पद्धतियाकी विशेषता हो ।

सायणाचार्यका मत नारदक मतस भिन्न ह । उनके हिसाबस स्वराका व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए—

१ चतु सघातका बेटन षड्ज, मध्यम, पञ्चम और नार पदनस बंधा हुआ है । य स्वर अचल है जिहें अरिस्टोटेल्सन ‘सवादका शरार’ और यजुर्वेदन ‘स्वरित’ कहा है ।

२ कहा जाता है कि तुम्बुग्ने स्वरोंकी सख्या बढ़ाकर, सामगानक लिंग सात स्वर निधारित किये है ।

ऋष्ट प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ मद्र अतिस्वर
 न घ प म ग र स

उनका वाक्य यह है—

“लौकिके ये निपादादय सप्तस्वरा प्रसिद्धा त एव साम्नि ऋष्टादय सप्तम्बरा भवन्ति । तथा—यो निपाद स ऋष्ट, धवत प्रथम, पञ्चम द्वितीय, मन्त्रमस्तृतीय, गाधारश्चतुर्थ, ऋपमो मद्र, पडजोऽति स्वाय इति ॥”

८० यहा स्वरितक अर्थपर विचार करना आवश्यक है । व्याकरणम स्वरितकी परिभाषा ‘समाहार स्वरित’ दी गयी है जिमका अर्थ है— ‘उदात्त और अनुदात्तका जहा एकत्र समाहार या मेल हो वही स्वरित है ।’ इस परिभाषाके अनुसार स्वरितका स्थान अनुदात्त और उदात्तके बीच होना चाहिए । किन्तु नारदने उदात्त अनुदात्त और स्वरितका क्रमश गाधार, ऋपम और पडज माना है । यहाँ पडजमें समाहारका भाव नहीं आता । इसलिये उदात्त और अनुदात्तके स्थानका स्वरितकी परिभाषाके अनुकूल निर्णय करना आवश्यक है ।

यदि बर्दिक स्वरलिपि एक एक स्वरक अक्षरसे ‘न स र स’ मानी जाये जहा न अनुदात्त और र उदात्त है, तो स्वरितका समाहारत्व और बहुत्व अर्थात् वाग्-वार उच्चरित होनेका गुण, दाना सिद्ध हो जाते हैं । इसी प्रकार प को स्वरित माननेपर ‘म प घ प’ समुदाय बनता है । इस स्वर-समुदायके साथ-साथ अध स्वरका गमक भी कभी कभी लिया जाता है । इन हिसाबसे बर्दिक स्वर ग्राम ऐसा बनेगा—

अनु०	स्व०	उ०	ग०	अनु०	स्व०	उ०	ग०
न→	स	र	ग	म→	प	घ	न
	१ स्वर	१ स्वर	१ स्वर		१ स्वर	१ स्वर	१ स्वर

एक पूरा स्वर साधारणतः ट्टे का होता है पर स र स या ‘प घ प’

प्रयोगमें एक श्रुति उतरकर $\frac{1}{2}$ रह जाता है (अनुच्छेद १४१) । अतएव उपयुक्त ग्रामका मान सहित ऐसा रूप हागा—

न	स	र	ग	म	प	ध	न
$\frac{1}{2}$	१	$\frac{1}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{4}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{5}{2}$	$\frac{1}{2}$
}		}		}		}	
$\frac{1}{2}$		$\frac{1}{2}$		$\frac{1}{2}$		$\frac{1}{2}$	

यह शुद्ध भरत ग्राम है (अनुच्छेद १०१) । वदिक स्वर ग्रामका यह प्रबंध यदि ठीक माना जाय तो भरतकी वदिक परम्परा सिद्ध होती है । सायण भी (अनुच्छेद ७९) सम्भवतः इसी विचारको मानते थे, क्योंकि उन्होंने न को क्रुष्ट (गमक) और ध की प्रथमकी रागा दी है । वदिक अवरोही क्रममें इस स्वर ग्रामका भी धवत ही प्रथम है और न गमकम आता है ।

८१ कुछ विद्वानोंका मत है कि सामवेदके स्वराकी ही भरत और शाङ्गदेवन अपन पडज ग्रामके शुद्ध स्वर माने हैं । इतना ही नहीं, आज भी सामवेद प्राचीन पद्धतिसे ही अर्थात् भरतके स्वराओं ही गाया जाता है । इस प्रसंगमें श्रीनिवास आर्य्यगारका मन विचारणीय है जो उन्होंने गावित्कृत सप्रहचूडामणिकी भूमिकाम प्रकट किया है । वे लिखते हैं—

“गणितके पहले शास्त्रकार भरत और उनके बादके शास्त्रकार शाङ्गदेव, इन दोनोंमें सामवेदके स्वराकी ही शुद्ध स्वर माना है । परम्परा प्राचीन सामवेद आज भी उसी रूपमें प्रचलित है जिसे हमें वह आरम्भमें गाया जाता था । इस बदने उच्चारणपर ध्यानपूर्वक विचार करनेमें पता चलता है कि इनके स्वर ग र स न ध प, जो तार मध्यध्यापी हैं और सामवेदिकाकी पद्धतिसे जिनका पर्याय प्रथम, द्वितीय तृतीय चतुर्थ मन्द्र और अतिस्वर है अवरोही क्रममें है । कभी-कभी जब ग का उच्चारण शीघ्र है तो म, जो सामवेदिकाका क्रुष्ट है गमकके रूपमें आता है ।

मध्य स्थानमें लानेपर सात स्वर ये हैं—

स र ग म प घ नि
 ततीय द्वितीय प्रथम क्रुष्ट अतिस्वर मद्र चतुथ
 १ १० ३३ ५ ३ ५ ११ ”

सगात रत्नाकरके प्रणेता शाङ्गदेवने सगीतक, मार्ग और दशा ये दो भेद बनाये हैं। इनमें,से मागका ब्रह्मा आदि देवोंने निरूपण किया और भरत आदिने इसका प्रयोग किया। देश-देशम जा लागाको रुचिके अनुसार आनन्द देनेवाला है वह सगीत दशी ह (परिशिष्ट २ ग १)। शाङ्गदेवने देश सगीतक नियमाको ही निर्धारित किया ह। इहीं भेदाका उन्हाने आग चलकर 'गांधव सगीत' और 'गण सगीत'के नामसे बताया ह।

रामस्वामीने रामामात्य कृत स्वरमेल कलानिधिकी भूमिकामें इस मार्ग और देशी भेदपर विचार किया है। उनका मत ह कि मागसगीत वैदिक सगीतका छातक ह जिसकी सीमा चतु स्वरक स्वरान्तर तक ह। पचस्वरक ओडवस दशो सगीतका आरम्भ होना है। सभी शास्त्रकारान सगीतकी ओडव, पाडव, सम्पूण ये तीन ही जातिया मानी है। रामामात्यने स्पष्टत ये भेद देशी सगीतमें ही बनाये है (परिशिष्ट २ घ १)। रामस्वामीक मतानुसार 'आचिक' 'गायिक' 'सामिक' और 'स्वरांतर' ये जातिया तो मार्ग या वैदिक सगीतमें प्रयुक्त होती है, और ओडव, पाडव और सम्पूण देशी सगीतमें पीछे सामगानमें भी सात स्वरोंका प्रयोग होने लगा।

१ यह मत ठीक नहीं जान पड़ता क्योंकि शाङ्गदेवने मागक प्रमगमें भरतका भी नाम लिया है। शाङ्गदेवने माग और गान्धवका एक ही अर्थ माना है। पर भरतन अपने सगीतको गांधव बताया है। एमा जान पड़ता है कि मागम तात्पर्य उस प्राचीन अप्रचलित सगात पद्धतिस है जिसका अस्तित्व कबल नियमोंमें ही पाया जाना है। आन रत्नाकरकी पद्धति भी मागमें ही मानी जायगी।

पर यह चाहे तो संगीतके विकाम क्रममें सचिकी दशाका ध्यानक ह या
वदिक संगीतपर देशी संगीतका प्रभाव है ।

ऊपरके विवरणस यह स्पष्ट ह कि भारतीय संगीतका क्षत्र क्रमस एक
स्वरसे लेकर सात स्वरा तक बढता गया । इस विकास क्रमका उपक्रम
वैदिक संगीतमें ही पाया जाता ह । इही बातको नीचे मारिणीस द्वाय
समाहार रूपम बताया गया ह ।

सारिणी ११

जाति	स्वर-सख्या	प्रयोग	व्याख्या	सरगम
आचिक	१	वैदिक	ऋचा या मन्त्रोच्चार	ग र स
गाथिक	२			
सामिक	३			
स्वरान्तर	४			
ओडव	५	लौकिक	,	म ग र स
पाडव	६			
सम्पूण	७			

२२ वैदिक संगीतका विधान ऋग्वेद प्राणिसाख्यमें पाया जाता है ।
नारदी, माण्डूकी यानवल्क्य आन्सिषा प्रथोमें भी वैदिक सगातके नियम
ही प्रतिपादन ह । पर इन गिसा प्रथोमें लौकिक सगातकी संज्ञाओं बने

मध्य स्थानमें लानपर सात स्वर ये हैं—

स र ग म प घ नि
 ततीय द्वितीय प्रथम क्रुष्ट अतिस्वर मद्र चतुर्थ
 १ १० ३३ ५ ३ ५ ११ ”

सगीत रत्नाकरके प्रणेता शाङ्गदेवने सगीतके, मार्ग और दशी ये दो भाग बताये हैं। इनमें,से मार्गका ब्रह्मा आदि देवोंन निरूपण किया और भरत आग्नि इसका प्रयोग किया। देश दंगमें जो लोगको रुचिक अनुसार आनन्द देनेवाला ह वह सगीत देशी ह (परिशिष्ट २ ग १)। शाङ्गदेवने देशी सगीतके नियमको ही निर्धारित किया ह। इही भेदाको उहाने आग चलकर 'गांधव सगीत' और 'गण सगीत'के नामसे बनाया ह।

रामस्वामीने रामामात्य कृत स्वरमेल कलानिधिकी भूमिकामें इस भाग और देशी भेदपर विचार किया ह। उनका मत ह कि भागसगीत वैदिक सगीतका शोनक ह जिकको सीमा चतु स्वरक स्वरान्तर तक ह। पचस्वरक ओखस दशा सगीतका आरम्भ होता ह। सभी शास्त्रकाराने सगीतकी आठव, पाडव, सम्पूण ये तीन ही जातिया मानी हैं। रामामात्यने स्पष्टत प भा देशी सगातमें हो बताये ह (परिशिष्ट २ घ १)। रामस्वामीके मतानुसार 'आचिक', 'गाधिक' 'सामिक' और 'स्वरा तर' ये जातिया ता भाग या वलिक सगीतम प्रयुक्त होती ह, और ओडव, पाडव और सम्पूण देशी सगीतमें पीछे मामगानम भी सात स्वराका प्रयोग हाने लगा।

१ यह मत ठीक नहीं जान पड़ता, क्योंकि शाङ्गदेवने भागके प्रथममें भरतका भी नाम लिया है। शाङ्गदेवने भाग और गांधवका एक ही अर्थ माना ह। पर भरतने अपने सगीतको गांधव बताया है। क्या जान पड़ता है कि भागस तात्पर्य उस प्राचीन अप्रचलित सगीत पत्रिस है जिसका अस्तित्व केवल नियमोंमें ही पाया जाता है। आन रत्नाकरका पद्धति भी भागमें ही माना जायगी।

पर यह चाहिं तो संगीतक विकास क्रममें सचिका दशाका धातक है या वदिक संगीतपर देगी संगीतका प्रभाव ह ।

उपरके विवरणसे यह स्पष्ट ह कि भारतीय संगीतका क्षेत्र क्रमश एव स्वरस लेकर सात स्वरा तक बढ़ता गया । इस विकास क्रमका उपक्रम वदिक संगीतमें ही पाया जाता ह । इही धातोको नीचे मारिणीवे द्वारा समाहार रूपम बताया गया ह ।

सारिणी ११

जाति	स्वर सख्या	पयोग	याख्या	सरगम
आचिक	१	वदिक	ऋचा या मन्त्रोच्चार	ग र स
गाथिक	२		गाथा पाठ	
सामिक	३		सामगान	
स्वरांतर	४			
ओढव	५	लौकिक		म ग र स
पाडन	६			
सम्पूण	७			स र ग म प ध न

दर : वदिक संगीतका विधान ऋग्वेद प्राणिशास्त्रमें पाया जाता ह । नारदी, माण्डूकी, याजुर्वल्ग्य आदि शिखा ग्रन्थामें भी वदिक संगीतके नियमाका ही प्रतिपादन ह । पर इत निम्ना ग्रन्थामें लौकिक संगीतकी संज्ञा और

नियमाके द्वारा ही वदिक सगीतकी व्याख्या की गयी है। इन शिक्षा-ग्रन्थकी विशेषता यह है कि इनमें स्वरके स्थानाका निर्धारण जीव जंतुओके शब्दोसे किया गया है। (परिशिष्ट २ क) आगे चत्वार मत्तङ्ग, शाङ्गदेव आदि शास्त्रकाराने श्रुति स्वरकी स्वतंत्र व्याख्या करत हुए भी इहीकी परिपाटी पर जीव जंतुओके स्वरका प्रसंग दिया है।

[ख] भरत पद्धति

८३ या तो महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थोमें संगीत और इसके अनेक नियमाकी चर्चा पायी जाती है पर संगीत शास्त्रके आदि आचार्य भरत ही मान जाते हैं। इनका लक्ष्य लौकिक संगीत था—शिक्षा ग्रन्थकी तरह वदिक संगीत नहीं। इन्होंने संगीतपर कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं लिखा है। इनका संगीत शास्त्र संक्षिप्त रूपमें इनके नाट्य शास्त्रका एक अङ्ग है।

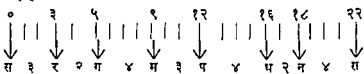
भरतके मतानुसार पञ्च ऋषभ, गांधार आदि सात स्वर हैं। जिनमें २२ श्रुतियाका समावेश है। पञ्च, मध्यम और पञ्चमम चार चार श्रुतिया, ऋषभ और ध्रुवतमें तीन तीन श्रुतिया और गांधार और निषादमें दो दो श्रुतियाँ हैं। स्वरकी तरह ही श्रुति भी दो ध्वनियाका अंतराल है जो स्वरमें बहुत छोटा है। इन्में अणुस्वर कह सकते हैं। कई श्रुतियाका योगसे एक स्वर बनता है। भरतकी श्रुतियाका क्या परिमाण है इसपर अभी विचार न करके केवल श्रुतियाका संख्याक आधारपर भरतका स्वर संस्थान नीचे लिया जाता है—



भरतके स्वरका पारस्परिक सम्बन्ध चार प्रकारका माना है—वादी, सवादी, अनुवादी और विवादी। किसी एक स्वरकी यदि वादी मान लिया

जाये तो ९ या १३ श्रुतियाँ अंतरका स्वर इसका संवादी होगा, २ या २० श्रुतियाँ अंतरका स्वर विवादी होगा और बाकी सारे स्वर इसने अनुवादी होंगे। जैसे, स का म और प संवादी है। वैसे ही र का घ संवादी है, ग विवादी है और बाकी स्वर अनुवादी हैं। यहाँ संवाद दो प्रकारका हुआ—एक पञ्चम—और दूसरा मध्यम-गया^०। पञ्चम संवादका अंतराल १३ श्रुतियाँ और मध्यम गया^० का ० श्रुतियों का होता है। यह महत्वाकी बात है कि भरतने वादी संवादीका व्यवहार स्वरान्तर परस्परिक सम्बन्ध ही अधम किया है (परिशिष्ट २ व १) अर्थात् य स्वरके भेद बताया गया है। आधुनिक संगीतमें इसका व्यवहार रागाम हीन लगा है और यानी अद्य उसी अर्थमें प्रयुक्त होता है जिस अर्थमें प्राचीन रागात्म 'अंश' का प्रयोग होता था।

८४ भरतने दो ग्रामाकी चर्चा की है जिनमें से एक तो पट्टज ग्राम है जो ऊपर लिया जा चुका है। दूसरा मध्यम ग्राम है जिसका स्वर-मंस्थान यह है—



पट्टज ग्राम और मध्यम ग्राममें भेद इतना ही है कि मध्यम ग्राममें पञ्चम एक श्रुति नीचे लिखा हुआ है। जहाँ पट्टज ग्राममें म प अंतराल ४ श्रुतियाँ और प ध ३ श्रुतियाँ हैं वहीं मध्यम ग्राममें म प ३ श्रुतियाँ और प ध ४ श्रुतियाँ हैं।

अर्थात्—

पट्टज ग्राम—म ४ प ३ ध ।

मध्यम ग्राम—म ३ प ४ ध ।

मध्यम ग्राममें पञ्चमके लिये श्रुति विचलित हो जानसे पट्टज ग्रामका सम्बन्ध तो टट जाता है परन्तु संवाद स्थापित हो जाता है जिसका अन्तर

अब ९ श्रुतियाँ हैं। अर्थात् स और र दोनोंका मध्यम सवाद स्थापित हो जाता है। (परिशिष्ट २ ख २) मध्यम ग्रामका आरम्भ पडजसे नहीं, मध्यमसे होता है। स्वराका नाम बिना बदले हुए म से आरम्भ करनेपर म ग्रामका रूप ऐसा हो जाता है—

०	३			९	१३	१६	१८			२२				
↓	↓			↓	↓	↓	↓			↓				
म	३	प	४	ध	२	न	४	स	३	२	ग	४	म	
[स	३	र	४	ग	२	म	४	प	३	ध	२	न	४	स]

इन दो ग्रामाक नामकरणके विषयमें स्टडवज आदि निरर्थक भ्रम पड गये हैं। भरतने यह स्पष्ट कर दिया है कि पहले ग्रामका नाम पडज ग्राम 'सवादाधिक्य' के कारण पडा है, अर्थात् साता स्वराय पडज ही ऐसा है जिसके म और प, दो सवादो हैं। मयम ग्राम पडजकी यह विशेषता नष्ट हो जाती है। अब जब मध्यम ग्रामको मध्यमसे आरम्भ करते हैं तो मध्यम ही ऐसा स्वर रह जाता है जिसके दो सवादो, न और स हैं। इस लिए सवादाधिक्यके सिद्धांतपर ही इस दूसरे ग्रामका सजा मध्यम ग्राम पडी है। तीसरे ग्रामकी सजा गांधार ग्राम भी इसी नियमके आधारपर है (अनुच्छेद ९१)।

८५ भरतकी पद्धतिमें दो ही विकृत स्वर हैं जिन्हें स्वर माधारण कहते हैं। जब गांधार मध्यमकी दो श्रुतियाँ ले लेता है तब वह मध्यम साधारण होता है और इस गांधारका 'अंतर गांधार' कहते हैं। इसी प्रकार पडजकी दो श्रुतियाँ लेकर गुद्ध निपाद 'पडज साधारण होता है जिसका काली निपाद' कहते हैं। पर इन अन्तर स्वराका प्रयोग अल्पमात्राम, बवल आराहीमें होता है (परिशिष्ट २ ख ३)। तात्पर्य यह कि इन विकृत स्वराका भरतकी पद्धतिमें बवल प्रवक्षक स्वर' के रूपमें उपयोग होता है। तब जब नाचेक स्वराका छाडकर किसी ठहरावक स्वरपर जाता है तो

इस स्वरसे दो श्रुति नीचेका स्वर छूकर जाता ह । जस, सीधे 'प-म' न रखर प न स' लिया जाता ह । जहाँ बड़े अन्तरालका लघन होता ह वहाँ यह क्रिया स्वाभाविक ह । यहाँ 'न' का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं ह । यह प से स में प्रवेश करनेका एक द्वार मात्र ह इसीलिए ऐस स्वराको 'प्रवेशक स्वर कहते हैं । यह सदा स्थायी स्वर या स्वरितके साथ जाता ह ।

प्रवेशक स्वरके प्रसंगमें हेमहोजका मन नीच दिया जाता ह—

' तीव्र निपादका पडजक साथ एक बिल गण सम्बन्ध पदा हो गया ह, जा आधुनिक सगीतमें प्रवेशक स्वर (लीडिङ्ग नोट)क नामस व्यक्त किया जाता ह । तीव्र निपादका तार पडजस अध स्वरका अ नर ह जो ग्रामम सबसे छोटा अन्तराल ह । तार पडजस इस निकटनाके कारण तीव्र न का उच्चारण ग्रामम एसे स्वरस जानपर भी जिनका तीव्र न स कोई सम्बन्ध नहीं, बड़ी सरलता और स्पष्टतासे होता ह । जस, म-न का लघन कठिन ह, क्वाकि इन स्वराम कोई सम्बन्ध नहीं ह पर जब गायक 'म-न स तान लेता ह तो वह 'म-स' की धारणा बाँधता ह जा सुगमतास सम्पन्न हो सक पर वह अपन स्वरका पहल इतना नहीं उठाता कि वह स पर पहुच जाये और इस प्रकार रास्तेमें न का स्पग करता ह । इसीलिए यह कहा जाता ह कि 'न के द्वारा स में प्रवेश होता ह या न' स का प्रवेशक स्वर ह ।' इसलिये सभी आधुनिक मूच्छनाग्रामें—बहुँ भी, जहाँ न का आना उचित नहीं—टीप (स) तक पहुँचनवाले आरोही तानाम तीव्र न को प्रधानता दी गयी ह । ' आधुनिक हिन्दुस्तानी सगीतमें भी यह देखा जाता ह कि काफी, खम्माज आदि रागामें जहाँ बोलमल न का प्रयोग होना चाहिए आरोहीमें तीव्र न आता ह । एसे रागामें जिनमें दाना गांधार और दोना निपाद ह । नियमित रूपस अवरोहीमें कामल और आरोहीमें तीव्रका प्रयोग होता ह । ऐस रागामें तत्त्वन आरागामें निपाद और गांधारका वज्य मानना चाहिए । क्वाकि तीव्र न और ताव्र ग का प्रयोग तो स्वभावतः प्रवेशक रूपमें होता ह ।

अन्तर स्वराके प्रसंगमे भरतके आदेशका यही तात्पर्य ह । ऊपरकी विवेचनासे भरतके इस नियमका औचित्य भी सिद्ध होता ह ।

८६ पङ्किका प्रवेशक काकली न और मध्यमका प्रवेशक अन्तर ग, उन दा हो विकृत स्वराकी कल्पनासे पङ्क और मध्यमका महत्त्व सिद्ध होता है । पङ्किका महत्त्व तो निर्विवाद ह क्योंकि यह अ य ६ स्वराके जनक है । पर भरतने मध्यमकी भी बड़ी महिमा बतायी ह । उन्हान इसे 'अवि लोपी' माना ह, इमीलिये ओडव और पाटवमे और सभी स्वर लुप्त हो सकते है पर मध्यमका लोप कभी नहीं होता । इसका कारण यह है कि भरत सप्तकक माननेवाले थे, जो दो सयुक्त चतुस्रघातामे बनता ह । असे,

स र ग म प ध न
 └──────────┬──────────┘
 पूर्वाङ्ग उत्तराङ्ग

इसमे पूर्वाङ्ग या प्रथम चतुस्रघातके सभी स्वराके पञ्चम सवादी उत्तराङ्गमे ह । केवल म का कोई पञ्चम सवादी नहीं ह जो दोना चतुस्रघाताका जोड़ता ह । यदि तार पङ्किका जोड़कर अष्टक बनाया जाय, जैसा कि प्रचलित प्रथा है, ता मध्यमका महत्त्व घट जाता है और पञ्चमका पङ्किका महत्त्व मिल जाता ह । क्योंकि अब अष्टक वियुक्त चतुस्रघातास बनता ह जिसके उत्तराङ्गमे प का वही स्थान ह जा पूर्वाङ्गमे स का ह । असे—

म र ग म प ध न स
 └──────────┬──────────┘
 पूर्वाङ्ग उत्तराङ्ग

अब म समेत पूर्वाङ्गके सभी स्वराका उत्तराङ्गमे पञ्चम सवादी मौजूद ह । भरत पद्धतिमें मध्यमका महत्त्व संगीतकी पूर्वविस्थाका द्योतक ह । जबतक कण्ठ संगीतकी प्रधानता रहती ह तबतक मध्यम ही प्रधान रहता ह । जब वाद्यकी अधिकार बढ़ता ह तब पञ्चम मुख्य हो जाता ह । क्योंकि कण्ठसे म अधिक स्पष्ट, और सरलतास, निकलता है, पर वाद्यमे पञ्चम सवाद अधिक स्पष्ट और पूण होता ह ।

८७ विद्वृत स्वराक अभावमें संगीतका क्षेत्र दा ही ग्रामा तक सामित हो जाता ह । इसलिए इस अभावको दूर करनेके लिए भरतने मूच्छना' की व्यवस्था की ह । मूच्छना किन्हीं सात स्वराके क्रमबद्ध उतार-चढ़ावका कृत ह । एक ग्रामक किसी भा स्वराका आधार मानकर क्रमग सात स्वर नाच उतरनेस एक मूच्छना बन जानी ह । इस प्रकार एक ग्रामम ७ मूच्छनाएँ हा सकती ह । इस त्रिमास प-ग्राम और म-ग्राम मिलाकर १४ मूच्छनाएँ हाती ह । इन मूच्छनाआम-स प्रत्येकक तीन-तीन भेद और हो सकत ह । जस, (१) अतर गाघार या (२) काकली निपाद या (३) अतर गाघार और काकली निपादवागी मूच्छना अथात् प्रत्येक मूच्छनाक एक गूढ और तान विद्वृत भेद मिलकर ४ भेद हुए । इस प्रकार मूच्छनाआके कुल भेद ५६ हुए । इन प्रकार मूच्छनाआम उपयोगसे एक ग्रामस अनक उपग्राम निकल पड और संगीतका क्षेत्र बहुत विस्तृत ा गया । ये मूच्छनाए अवरोही, क्रममे बनायी जानी था । भरत-कायमें बसिष पद्धतिका अवरोही क्रम ही प्रचलित था । प्राचीन यूनानी ग्राम भी अवरोही क्रममें ही पाये जात ह । इसलिए ग्राम मूच्छनाका यह क्रम प्राचीनताका द्योतक ह ।

दाना ग्रामाका मूच्छनाएँ आराहा-क्रममें ध्रुति मन्व्या और नामक साथ नीच दी जाना है—

पहल ग्राम—

- स ३ र २ ग ४ म ८ प ३ ध २ न ४ स ३ र २ ग ८ म ४ प ३ ध २ न ४ स ।
 १—[म] स ३ र २ ग ४ म ४ प ३ ध २ न ४ (म)—उत्तर मद्रा ।
 २—[र] र २ ग ४ म ४ प ३ ध २ न ४ म ३ (र)—अभिन्दुगता ।
 ३—[ग] ग ४ म ४ प ३ ध २ न ४ स ३ र २ (ग)—अवात्राता ।
 ४—[म] म ८ प ३ ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ (म)—मसरीवृता ।
 ५—[प] प ३ ध २ न ८ म ३ र २ ग ४ म ४ (प)—गूढ पहजा ।
 ६—[ध] ध २ न ४ म ३ र २ ग ८ म ८ प ३ (ध)—उत्तरायता ।
 ७—[न] न ४ स ३ र २ ग ४ म ४ प ३ ध २ (न)—रजना ।

मध्यम ग्राम—

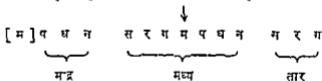
- म ३ प ४ ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ म ३ प ४ ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ म
 १—[म] म ३ प ४ ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ (म)—सौवीरी ।
 २—[प] प ४ ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ म ३ (प)—हृष्यका ।
 ३—[ध] ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ म ३ प ४ (ध)—पौरवी ।
 ४—[न] न ४ स ३ र २ ग ४ म ३ प ४ ध २ (न)—मार्गी ।
 ५—[स] स ३ र २ ग ४ म ३ प ४ ध २ न ४ (स)—शुद्धमध्या ।
 ६—[र] र २ ग ४ म ३ प ४ ध २ न ४ स ३ (र)—श्लोपनता ।
 ७—[ग] ग ४ म ३ प ४ ध २ न ४ स ३ र २ (ग)—हरिषास्वा ।

प्राचीन यूनानी पद्धतिमें भी इसी तरहको मूच्छनाआका प्रयोग होता था जिह 'मोड' कहते थे । इन मोडासे अनक प्रकारके सक्रम तयार हाते थे । जब पाश्चात्य देशामें सहतिका प्रचार हुआ था इन सारे माडाका लोप हो गया और गुरु ग्राम और लघु ग्राम—ये दो ही मोड रह गये क्वाकि सहतिके लिए ये ही उपयुक्त समझे गये ।

यह निश्चित ह कि भरतक ग्रामामें मूच्छनाआके स्वराका न तो स्थान बदलता और न मज्ञा ही बदलती ह । किसी ग्रामकी ध मूच्छना उस ग्रामक धवतसे ही गुरु होती ह (अनुच्छेद ९२) ऐसा नही कि धवतको पडज मानकर सभी स्वराकी सना क्रमानुसार बदल दी जाये और इस प्रकार एक नया ग्राम बनाकर उस सदेह मध्य सप्तकम सरका दिया जाये । ऐसा करन से फिर मूच्छनाकी आवश्यकता न रहती—एक ग्रामम विकृत स्वराक प्रयोग से ही काम चल जाता । दोनों ग्रामाक प्रयोगस और इनकी प्रत्येक मूच्छना के अंतर ग और काकली न के साथ चार चार भेदाक विधानस यह सिद्ध ह कि मूच्छनामें भरतक स्वर अपना स्थान या सना नही छाडते, नही तो इन विकृत मूच्छनाआका काई अय न होता । अचल मूच्छनाआका यह विधान शाङ्गदेवक समयम नहा रहा, इसीस उहान १२ विकृत स्वराका प्रसग दिया ह (अनुच्छेद ६३) ।

भरतकी पद्धतिम मध्यमका प्रधानता दी गयी है (अनुच्छेद ८६)। मूच्छना म भी मध्यमका महत्त्व पाया जाता है। भरतने कहा है—“मध्यमस्वरण तु वीणेन मूच्छना निर्देशो भवति अनाशित्वात् । मूच्छनाप्रयोगमपि स्थान प्राप्पयर्थं । स्थानं तु त्रिविधं ।’ मतङ्गने सम्भवत इसीकी व्याख्या करते हुए कहा है—‘मध्यसप्तकं मूच्छनानिदश कार्या मन्द्रतारसिद्धयर्थम् ।’ किंतु मध्यम स्वर का अर्थ ‘मध्य सप्तक’ उचित नहीं जान पड़ता । भरत वाक्यका अर्थ है—“वीणा वादक मूच्छनाका निर्देश मध्यम स्वरसंकरण है, क्योंकि इसका नाश नहीं होता । मूच्छनाका प्रयोजन भी स्थान प्राप्ति है । स्थान तीन प्रकारके हैं [मन्द्र, मध्य और तार] ।’ यहाँ मध्यम स्वर को अनाशी बनाने से यह स्पष्ट है कि इसका अर्थ स्वर है, सप्तक नहीं । इस दृष्टिसे भरतकी वीणाके स्वराक सम्बन्धम ब्रह्म महत्त्वका बातें निकलती हैं ।

भरतका वीणामें १३ स्वर १३ सुरदरियापर स्थापित हैं । इन स्वराक साथ खुले तारका स्वर मिलानसे १४ स्वर हो जाते हैं जिनमें साता मूच्छनाएँ आ जाती हैं । यह स्वर मस्थान नीचे दिया जाता है—



इस सम्बन्धम मध्यमका स्थान वाचावाच है । साथ ही-भाष्य इसका सम्बन्ध खुले तारक स्वर [म] से है इसलिए यह ‘अनाशी’ है । फिर म से [म] तक पली मूच्छना है इसलिए म-पमसे मूच्छनाका आरम्भ होता है । मध्यम से निपाद तकका मूच्छनाएँ मन्द्र मध्य-यापी हैं और पञ्चमसे गांधार तकका तार-मध्य-यापी । इस तरह स्थानका प्राप्ति होती है । मध्यम ग्रामक लिए पकी एक श्रुति कोमल करना होगा । यदि इसके लिए एक नयी सुरदरी बढायी जाय तो सुरदरियाका मस्या १४ हो जायगा ।

आधुनिक वाद्यामं भी यही १४ सु दरियावाला प्रबंध प्रचलित है। इनमें भी मध्यमका स्थान ठीक बीचमें होता है। मध्यम ग्राम 'प' की जगह तीव्र मध्यमकी सुररी रहती है। यह आगे बताया जायेगा कि मध्यम ग्राम 'प' ही मयकालमें मधु प मा तीव्र म के रूपमें बदल गया है (अनुच्छेद १४)। फिर मद्र यापी और तारव्यापी मूर्च्छनाआकी तरह हिन्दुस्तानी पद्धतिमें मद्र यापी रागा और तारव्यापी रागाका अभी भी प्रचार है।

ऊपरका स्वर समुदाय चार चतु सघाता (चार स्वराके सघात) से बना है। प्राचीन यूनानी स्वर सस्थान भी ऐसे ही चार चतु सघातोंका बना होता था और वाद्याम इसीका व्यवहार होता था। वाद्यके बीचके तारको प्रधान माना जाता था जिस 'मेसा' कहते थे। यह मेसा मध्यमका पर्याय है। इस स्वर प्रबंधमें सबसे नीचे एक स्वर 'मद्र मेसा [म] और जोड़ दिया जाता था। इसे 'ग्रेट पफैक्ट सिस्टम' या 'बहुतूण समुदाय' कहा जाता था।

यह एक नियम है कि 'यास' स्वर तार स्थानमें कभी न हो। यह यास स्वर सदा मूर्च्छनाके स्वरसे चार स्वर नीचे होता है (अनुच्छेद ८८)। ऊपरके स्वर सस्थानमें सबसे ऊँचा मूर्च्छना ग की है इसलिए सबसे ऊँचा यास स्वर मध्यस्थानका 'न' होगा जो ग-मूर्च्छनाका यास है। इससे भी ऊपरके स्वर सस्थानकी पुष्टि होती है।

ऊपर दो हुई मूर्च्छनाआस जातिकी उत्पत्ति हुई। भरत पद्धतिमें जातिका वही स्थान है जो आधुनिक पद्धतिमें रागका। जैसे ठाठसे राग पदा होता है वस ही मूर्च्छनासे जाति उत्पन्न होती है। जिस रागका भेद ठाठ, सघादी वाणी आदिपर निर्भर है वस ही जातिका भेद मूर्च्छना, ग्रह, अक्षर, यास आदिपर निर्भर है। 'ग्रह' वह स्वर है जिससे जाति गानका आरम्भ होता है और 'अक्षर' वह है जो सबसे प्रधान है अर्थात् 'जीव' स्वर है। 'यास' वह स्वर है जिसपर गानको समाप्ति होती है। जैसे एक

ठाठम अनक राग हो सकते ह वस ही एक मूच्छनामें अनेक जातियाँ हा सकती ह ।

जातियाँ कई भूँ ह । जस—(१) शुद्ध, (२) विकृत और (३) समगजात । शुद्ध जातियाँ व है जिनका यास, अश, ग्रह एक ही स्वर हो और जो सम्पूर्ण हा । यासका स्वर ही जातिकी सजा होती ह । जब यासको छोडकर ग्रह, अश आदि बल जाये या ओडवता या पाडवता आ जाय ता विकृत जाति बनती ह । पर यास कभी विचलित नही होता । जो जातियाँ दा या अधिक शुद्ध जातियाँक भलस बनती ह उन्हे समगजात जातियाँ कहत ह । शुद्ध जातिया ७ ह, समगजात ११ ह और विकृत अनक ह ।

प्रतिनिधि रूपम ७ शुद्ध जातियाँकी सारिणी नीच दी जाती ह—

सारिणी १२

क्रम	जाति	अश	यास	मूच्छना	पाडव विद्वेषी स्वर	आडव विद्वेषी स्वर
१	पाडजी	स ग म प ध	स	उत्तरायता (ध)	न	०
२	अपभी	र ध न	र	शुद्ध पडजा (प)	स	स प
३	गांधारी	स ग म प न	ग	पीरवी (ध)	र	र ध
४	मध्यमा	स र ग म प ध	म	कलोपनता (र)	ग	ग न
५	पञ्चमी	र प	प	(र)	ग	ग न
६	धवती	र ध	ध	अभिरुद्गता (र)	प	स प
७	नयादी	स न ग	न	(र)	प	स प

ऊपरकी सारिणीसे जातियाकी प्रवृत्ति प्रत्यक्ष ही जाती है। जैसे गुद्ध पाडजीका यास, अक्ष आदि स ह और यह सम्पूर्ण ह। विकृत पाडजीम अगर अग विकृति हो तो स की जगह ग म प घ म मे कोई एक अग हागा पाडव विकृति हो तो न का लोप हागा। आडव भद इसम नही हाता। इसी प्रकार गुद्ध आपमाका यास, अक्ष र हागा और यह सम्पूर्ण हागा। विकृतिकी दशम अग घ या न होगा, पाडवमें स का लोप और आडवम स प का लोप होगा।

इन जातियापर ध्यान देनेसे कई बातें मालूम हातो ह। एक ता यह कि जातियामें सभी मूच्छनाआका उपयोग नही हुआ ह। शुद्ध विकृत जातियामें ता ५ ही मूच्छनाआमे काम लिया गया ह। मगजात जातिया मिलाकर १० मूच्छनाआका प्रयाग हुआ ह। स-ग्रामकी दो मूच्छनाए उत्तर म-द्रा (स) और रजनी (न) और म-ग्रामकी दो मूच्छनाएँ, मार्गी (न) और हृष्यका (प)—ये नही पायो जातों। (यहा यह बतना बना उचित ह कि प्राचीन यूनानी पद्धतिमें भी सभी 'पाड' कामम नही आते थे विशेष रूपस उत्तरम-द्रा आदिकी तरह म का माड, जो युरोपका आधुनिक गुह ग्राम ह, बहुत दिना तक बहिष्कृत रहा।) दूसरी बात यह ह कि पाडव विकृतिमें प्राय यामके नीचेका स्वर वजित ह। पञ्चमी और नयागामें मूच्छनाकी समतास ग और प वजित हुआ हैं। पञ्चमोम तो म के अविलोपी होनेस यह वजित हा ही नहा सकता। फिर आडव विकृतिम तो नियमित रूपसे पाडव विह्वपी स्वर और उसका पञ्चम सवादी वजित हुआ ह। इससे भरतकी पद्धतिम सवादका महत्त्व मालूम हाता ह, और ओडव-पाडवविकृति भी नियमबद्ध जान पडता है।

तीसरी बात यासरू सम्बन्धकी ह। जातियाम यासका प्रधानता ता प्रत्यक्ष ह, क्याकि याम-स्वरके नामपर ही जातिका नाम चलता ह। पर यासम और भी गुण ह। यह पहले बताया जा चुका ह स्वराका एक तो अपन निकटतम पञ्चमिमास अंतरालका पारस्परिक सम्बन्ध होता ह,

ठाठम अनेक राग हो सकते ह वम ही एक मूच्छनामें अनेक जातियाँ हा सकती हैं ।

जातियाक कई भेद ह । जैसे—(१) गुद्ध (२) विकृत और (३) ससगजात । गुद्ध जातियाँ व ह जिनका यास, अग ग्रह एक ही स्वर हो और जो सम्पूण हा । यासका स्वर ही जातिकी सना होती ह । जब यासका छोडकर ग्रह, अश आदि बदल जाय या ओडवता या पाडवता आ जाय तो विकृत जाति बनती ह । पर यास कभी विचरित नही हाता । जा जातियाँ दो या अधिक गुद्ध जातियाक मेलस बनती ह उन्हें ससगजात जातियाँ कहत ह । गुद्ध जातिया ७ ह, ससगजात ११ ह और विकृत अनेक ह ।

प्रतिनिधि रूपम ७ गुद्ध जातियाकी सारिणी नीच दी जाती ह—

सारिणी १२

क्रम	जाति	अग	याम	मूच्छना	पाडव विद्वेषी स्वर	आडव विद्वेषी स्वर
१	पाडजी	स ग म प ध	स	उत्तरायता (ध)	न	०
२	अपभी	र ध न	र	गुद्ध पडजा (प)	स	स प
३	गांधारी	स ग म प न	ग	पौरवी (ध)	र	र ध
४	मध्यमा	म र ग म प ध	म	कलापनता (र)	ग	ग न
५	पञ्चमी	र प	प	(र)	ग	ग न
६	धवता	र ध	ध	अभिरुद्गता (र)	प	स प
७	नपानी	स न ग	न	(र)	प	स प

ऊपरकी मारिणीसे जातिपाकी प्रकृति प्ररम्य हो जाती है। जसे शुद्ध पाठजीका 'यास, अग आदि स ह और यद्ग सम्पूर्ण है। विकृत पाठजीमें अगर जग विकृति हा ता स की जगह ग म प घ में-म कोई एक अग हागा पाठव विकृति हा तो न का लोप हागा। आठव भेद इसमें नही हाता। इसी प्रकार शुद्ध आयभाता 'यास, अर र हागा और यद्ग सम्पूर्ण हागा। विकृतिकी द्वागम अग घ या न हागा, पाठवम स का लोप और आठवम स-य का लोप हागा।

इन जातियापर ध्यान दनसे कई बातें मालूम हाती ह। एक ता यह बि जातियामें सभी मूच्छनाआका उपयोग नही हुआ ह। शुद्ध विकृत जातियामें ता ५ ही मूच्छनाआसे काम लिया गया ह। ससगजात जातियाँ मिलाकर १० मूच्छनाओंका प्रयोग हुआ ह। स-ग्रामकी दो मूच्छनाएँ उत्तर मद्रा (स) और रजनी (न) और म-ग्रामकी दो मूच्छनाएँ, मार्गी (न) और हृष्यका (प)—ये नग पायी जाती। (यहाँ यह बात देना उचित ह कि प्राचीन गूनाकी पद्धतिमें भी सभ माड' काममें नही आत थ विशेष रूपसे उत्तरमद्रा आदिकी तरह स का माड, जो युरोपका आधुनिक गुरु ग्राम ह बहुत दिना तक बहिष्कृत रहा।) दूसरी बात यह ह कि पाठव विकृतिमें प्राय 'यासके नाचके स्वर वजिन ह। पञ्चमी और नपादामें मूच्छनाका समनास ग और प वजिन हुआ ह। पञ्चमीमें तो म क अविलोपी हानेसे यह वजिन हा ही नही सकता। फिर आठव विकृतिमें ता नियमित रूपसे पाठव विद्वेषी स्वर और उमका पञ्चम मवाणी वजिन हुआ ह। इससे भरतकी पद्धतिमें सवादका महत्त्व मालूम हाता ह और ओठव-पाठवविकृति भी नियमबद्ध जान पडता ह।

तीसरी बात 'यासके सम्बन्धकी ह। जातियामें 'यामकी प्रधानता तो प्रत्यक्ष ह, क्याकि 'याम-स्वरके नामपर ही जातिका नाम चलता ह। पर 'यासमें और भी गुण ह। यह पहल बताया जा चुका ह स्वराका एक ता अपने निकटम पनीमियास अन्तगलका पारस्परिक सम्बन्ध होता ह,

दूसरा इनका अलग अलग एक आधार स्वरस सम्बन्ध होता है। इस आधार स्वरका, जिसमें सभी स्वर अलग-अलग गाये जाते हैं सुर स्वरित या अप्रेजोम 'टोनिक' कहते हैं। आधुनिक कालमें इस स्वरितकी भावना बड़ी प्रबल है। पाश्चात्य सगातमें सगातके गुण इस 'टोनिक' पर ही निर्भर हैं। भारतीय सगीतमें गाना या बाजाके साथ सुर भरनेकी अनिवार्य प्रथा है। इससे सभी स्वर गूढ़ निकलते हैं राग बेसुरा या स्थान भ्रष्ट नहीं हो पाता। स्वरितका प्रभाव एक दृष्टांतसे स्पष्ट हो जायेगा। किसी बाजेमें यमनके स्वर बाधकर बजाया जिसका स्वरित स हो। अब मद्र न की स्वरित बाधकर उँटा पटरिया या मृत्त्रियास राग निकालो। शीघ्र पड़ेगा कि बातकी-बातमें राग यमनसे भरवीमें बदल गया। स्वरिका स्थानमें कोई अंतर नहीं पया फिर भी स्वरित बल्लनमें रागका सारा रंग बदल गया। स्वरिका प्रभाव इतना प्रबल पात हुए भी प्राचीन कालमें इसकी भावना दुबल थी। फिर भी विद्वानों वहाँ भी इसका कुछ आभास पाया है। जम हेल्महाजन बताया है कि अरिस्टॉटलने अपने प्रश्नाम 'जा मेसा' के गुणकी जोर संकेत किया है वह 'टोनिक' का ही परिचायक है। प्राचीन कालमें चार आधेष्टिक स्वर' या आप्त ग्राम' प्रचलित थे जिनकी मूच्छनाएँ क्रमशः र, ग, म और प थी। इन ग्रामोंका 'यह पुराना नियम था कि पहली मूच्छनाके गातकी समाप्ति र पर दूसरीकी ग पर, तीसरीकी म पर और चौथीकी प पर होना चाहिए'। हेल्महाजन कहते हैं—

यह (नियम) इन स्वरोंको हम लोगोंके ही अथवा टानिक निर्दिष्ट कर देता है।' पर प्राचीन भारतीय सगीतके विषयमें हेल्महाजन कहा है— 'भारतवर्षामियामें भी स्वरितकी धारणा थी, यद्यपि उनका सगीत भी ऐसा ही (प्राचीन यूनाना सगीतका तरह ही) व्यक्तिक एकवृत्ता था।' वे स्वरितका जग कहते थे। हेल्महाजनकी धारणाका आधार जोसका

१ पाश्चात्य पण्डितोंका विश्वास है कि स्वरित (टानिक) का धारणा षट्सुश्रुत-सगात या सहनि-सगातमें ही प्रस्फुटित होता है।

विचार है जिहान रागाम जशको प्रवाननाके कारण हो इसे स्वरित मान लिया है। आज भी रागम वादीका वही महस्व है जो पहले जशका था। पर वाणी स्वरित नहीं होता। जातियोंके निरीक्षणसे यह स्पष्ट है कि यदि कोई स्वर स्वरित हो सकता है तो वह 'यास' ही है। 'याम' ही ऐसा है जो जातिको सजा देता है। और 'यास' ही ऐसा है जो सबके विकृत होनेपर भी अचल रहता है। हेल्महाडने भी प्राचीन आप्त ग्रामके प्रसंगमें 'यास'को ही स्वरित माना है। पर भारतीय मधोतके सम्बन्धमें वे जो 'स'के विचारसे भ्रममें पड़ गये हैं। जातियाँपर ध्यान देनेसे पता चलता है कि 'याम' प्रायः मूच्छनाके स्वरमें कमसे कम चार स्वर नीचे होता है। जैसे, आपभीकी मूच्छना 'प' और 'यास' 'र' है, गा'घारीकी मूच्छना 'घ' और 'यास' 'ग' है। 'यास'का यह नियम प्राचीन यूनानी पद्धतिमें भी पाया जाता है। अब अगर बोणाका ऊपर बनाया हुआ ग-म स्वर स्थान (जनुच्छेद ८७) माना जाये जिसमें साता मूच्छनाएँ आ जाती हैं तो यह नियम भी सिद्ध हो जाता है कि 'यास' तार स्वर कभी नहीं हो सकता। मूच्छना प्रबन्धका सबसे ऊँचा स्वर ग है जिससे चार स्वर नीचे न मध्य मत्कमें पड़ता है। इन प्रकार किमी भी मूच्छनामें जातिका 'यास'तार सप्तकमें नहीं हो सकता। इसका अतिरिक्त 'यास' स्वर मूच्छनाके बीचका स्वर होता है जिसमें 'मध्म' स्वर को विशेषता आ जाती है और यह म की तरह ही अविलापा हो जाता है।

ऊपरके विवरणसे यह स्पष्ट है कि भरतको पद्धतिमें बड़े ही सरल नियमोंके द्वारा श्रुतिसंस्वर, स्वरसंघाम, ग्रामसे मूच्छना और मूच्छनासंजातिका प्रादुर्भाव हुआ है। इस पद्धतिकी प्राचीन यूनानी पद्धतिके साथ समता भी ध्यानमें रखनेकी बात है।

[ग] शाङ्गदेव पद्धति

८६ भरतकी पद्धतिके सरल होनेपर भी उनका जातिगान अनात है। गताश्रित्यों तक जिन जातियोंका प्रचार नहीं रहा, आज उनकी रूपरेखाकी कल्पना भी सम्भव नहीं। भरतके बाद, मतङ्गके समयमें ही जानियाँ

बदले राग पद्धतिका प्रचार हो गया था। मत्तङ्गने अपने बहूद्देशी नामक ग्रन्थमें पहल-पहले प्रचलित रागा की विवेचनाकी और यह भी स्पष्ट कर दिया कि भरतादि प्राचीनाने रागाकी चचा नहीं की है। पर दगी रागा का वणन अपनी कृतिका मुख्य उद्देश्य मानकर भी मत्तङ्गन भरतकी ही पद्धतिका अनुकरण किया। मत्तङ्गके बाद शाङ्गदेवने भी माग और दगीका भेद बताकर मत्तङ्गकी भाँति ही दगी रागाका वणन किया है। पर संगीत शास्त्रका जहाँ तक सम्बन्ध है शाङ्गदेवक संगीत रत्नाकरका भरत पद्धति पर महाभाष्य समझना चाहिए। ऐसा जान पड़ता है कि कि शाङ्गदेवक समयमें ग्राम जातियाका प्राय रूप हो गया था। ऐसी स्थितिमें शाङ्गदेव जस जाचाय यदि भरत-पद्धतिका मोह छाडकर प्रचलित मगीतका ही स्वतंत्र रूपसे नियमबद्ध करनेका प्रयत्न करत, जसा कि भरतन किया, ता शाङ्गदेवकी पद्धति इतनी दुष्ट न हानी। यह ध्यान देनेकी बात है कि भरतन तो गांधार ग्रामका चर्चा न की परगनिया वादक आचार्योंने गांधार ग्राम का महान और इसका मूच्छनाशक नाम तक बताय है। शाङ्गदेवन भी इसका वणन किया है पर अन्तमें कह दिया है— त नारदो मुनि प्रव्रतते स्वर्गलोकं ग्रामाऽसौ न महीतले ॥” इम प्रकार प्रचलित और अप्रचलितक मलके कारण रत्नाकरक राग भरतकी जातियास भी अधिक दुर्बोध हो गये है। भरतकी पद्धति यदि अनान है तो शाङ्गदेवकी पद्धति दुर्बोध है। पर आचाय शाङ्गदेवकी विद्वता निर्विवाद है। विस्तारमें और संगीतक सागापाग वणनमें रत्नाकरका तुलना दूसरा कोई भी ग्रन्थ नहीं करता। इसीसे रत्नाकरक मगीतका सच्चा रूप आज पूरी तरह अनान ज्ञानपर भी स्पष्ट और उत्तरके सभी संगीतापाय रत्नाकरकी मगीत बलाका बद ही मानते चले जाये है। शाङ्गदेवकी

१ रागमागस्य यद्वेष यस्मान् भरतादिभिः ।
निष्पद्यत तदन्मामिल इत्यलक्षणमयुतम् ॥

—रागलक्षण-बृहद्देशी ।

श्रुतिके बाद ऐसा शायद ही कोई ग्रन्थ रचा गया जिसका आधार रत्नाकर न हो ।

६० शाङ्गदवने पहले नादके अनाहत और आहत नामक दो भेद करके आहत नादकी उत्पत्तिकी विवेचना गम्भीर ब्रह्मिक विधिस की है । उद्दान शरीरक आधारपर नादकी उत्पत्ति बताया है यहाँतक कि २२ श्रुतियाँ लिए २२ नाटिकाकी भी कल्पना की है । यह ठीक है कि आज शाङ्गदवकी धारणा निराधार प्रतीत होती है । पर शाङ्गदवकी विवेचना उस युगके मवमाय शरीर और तन्त्रक सिद्धान्तापर निर्भर है । फिर आहत नादके पाँच भेद बनाये गये हैं । जम पुष्ट अपुष्ट, सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म और कृत्रिम । ये पाँच नाद पाँच भिन्न भिन्न स्थान या तारताके हैं (परिशिष्ट २ ग २) । इस भेदका आधार व्यक्तिके कण्ठकी स्वाभाविक वृत्ति है । पाश्चात्य पद्धतिमें भी कण्ठनादक साधारणतः ये ही पाँच भेद माने गये हैं । जम—

बास — पुष्ट—	} पुरुष कण्ठ
टेनर — अपुष्ट—	
आल्तो — सूक्ष्म—	} स्त्री कण्ठ
साप्रेनो — अतिसूक्ष्म—	

फा सटो—कृत्रिम—जब ध्वनि ऊँची होकर कण्ठसे विस्तारक बाहर चली जाती है तब जो एक धनावटी महौन आवाज निकलती है ।

प्रत्येक व्यक्तिके कण्ठ-स्वरका विस्तार तीन सप्तका तक माना गया है । ये मन्द्र, मध्य और तार नामक स्वरक तीन स्थान हैं । हृदयमें मन्द्र, कण्ठमें मध्य और मस्तकमें तार पदा होता है जो उत्तरोत्तर दूना होता जाता है । (परिशिष्ट २ ग ३) । पाश्चात्य पद्धतिमें मन्द्रका 'बेस्ट वायस' कहते हैं और तारका 'हेड वॉयस' । मन्द्र मध्यक स्वरकी आवृत्तिसे मध्य सप्तकके स्वरकी दूनी, और तारके स्वरकी चौगुनी जानी है । तारकी लम्बाईसे

स्वरके सम्बन्ध निम्नलिखित भौतिक विधि पहले-पहल अहोबलने बताया है।
पर ऐसा जान पड़ता है कि कम्मे-कम तीन स्थानों में स्थापनमें शाङ्गदेवने
भी इस विधिसे काम लिया था।

६१ भरतके माने हुए दो ग्रामों अतिरिक्त रत्नाकरमें गांधार-
ग्रामका भी बणन मिलता है। गांधार ग्रामकी चर्चा अथ प्रायामें भी
पायी जाती है। यही तब कि कई पुराणों में भी इसका प्रसंग आया है। पर
भरतकी पद्धतिमें इसका उक्त भी न होना एक महत्वकी बात है। रत्ना-
करके अनुसार गांधार ग्रामका स्थान इस प्रकार है (परिगणित २ ग ४)—
स २ र ४ ग ३ म ३ प ३ घ ४ न ३ म
और ग्रामकी तरह गांधार ग्राम भी गांधारसे ही आरम्भ होता है।
इसलिए इसका प्रकृत रूप या होगा—

ग ३ म ३ प ३ घ ४ न ३ स २ र ४ (गं)
इस ग्रामके नामकरणके सम्बन्धमें भी विद्वानों का कल्पना लगायी है।
पर और ग्रामोंकी तरह सवादाधिक्यके आधारपर इस ग्रामका नाम गांधार
ग्राम अनुचित नहीं है। क्योंकि इसमें गांधार ही ऐसा स्वर है जिसके दो
सुखा और अलाप के सात मूच्छनाएँ हैं। पर सभी प्राचीन शास्त्रकार
मूच्छनाया समेत इस ग्रामकी सात मानते हैं।

६२ मूच्छनाकी धारणामें शाङ्गदेवके समयसे ही परिवर्तनका उक्त
मिलता है। यह बताया जा चुका है कि भरतकी मूच्छनामें स्वरोंकी मना
और स्थान नहीं बरूत। पर शाङ्गदेवकी पद्धतिमें मूच्छना उक्त चिसवाकर
मौलिक पद्धत लायी जाती है। और इस प्रकार सभी मूच्छनाएँ मध्य
सप्तकस्थानी होती हैं (परिगणित २ ग ५)। इसी दृष्टिसे मनङ्गन भी कहा है
कि— मध्यमसम्बन्ध मूच्छनानिर्देश कार्य रत्नाकरके आधार पर
नामने भी इस परिवर्तनकी ओर उक्त किया है। वह कहते हैं कि 'मध्य
मग्रामान्यत्र मध्यमसिंहादी प्रभृति मध्य स्थानके मध्यमको छोटकर मध्य

पडज स्थानस ही आरम्भ करना लक्ष्य-लक्षणके विरुद्ध है।" अर्थात् माग पद्धतिके विरुद्ध है। यह भेद उगाहरणस स्पष्ट हो जायेगा। भरतकी पद्धतिमें धवतकी मूर्च्छना मध्य घ से मद्र घ तक व्याप्त होगी पर शाङ्ग देवकी पद्धतिमें मद्र घ खिसककर मध्य पडजपर और मध्य घ तार पडज पर जायगे। धवत मूर्च्छना होनेस स्वराका अन्तराल अब पडज मूर्च्छनासे भिन्न हो जायेगा। यद्यपि शाङ्गदेवकी मूर्च्छनाआके उपग्राम कहना चाहिए। यही बात नीचे सक्तमें बनायी गयी है।

प-ग्राम स ३ र २ ग ४ म ४ प ३ घ २ न ४ स

ध-मूर्च्छना भरत ध २ न ४ स ३ र २ ग ४ म ४ प ३ घ

शाङ्गदेव —> म २ र ४ ग ३ म २ प ४ घ ४ न ३ स

इस भेदम यह जान पडता है कि भरतके समयमें स्वरित या आधार 'सुर' की भावना अङ्कुरित नु हो पायी थी, यद्यपि 'यास' स्वरमें उसका बीज पड गया था। उनके 'यास, अग, पडज, मध्यम और मूर्च्छनाक आधार स्वर, ये सबक सब प्राय बराबर मूय रहते थे। पर शाङ्गदेवके समयमें स्वरितकी भावना प्रस्फुटित होत लगी थी और इसीस सभी मूर्च्छनाआका आरम्भ पडजस होता था। इससे मध्य सप्तक और पडज स्वर प्रधान होता हुआ प्रतात होता है।

६३ मूर्च्छनाक भावमे इस परिवर्तनका फल यह हुआ कि शाङ्गदेवने पहल पहल भरतक अन्तर गाधार और काकली निपादके अतिरिक्त्त अनेक विरुद्ध स्वराकी कल्पना की। क्योंकि जब सभी मूर्च्छनाएँ खिसककर मध्य मन्त्रकम आ गयीं ता एक एक स्वरके भिन्न भिन्न अन्तराल स्पष्ट दीखने लगे। जस अगर ऊपर दिये हुए पडज और धवत मूर्च्छनाओका एक-दूसरेपर इस प्रकार रखें—

प-मूर्च्छना—

म	र	ग	म	प	घ	न	स	
ध-म	स	र	ग	म	प	घ	न	स

तो यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि प-मूच्छनामें हा र और घ को एक एक श्रुति और प को दा श्रुति उतारकर तथा ग और न को एक एक श्रुति चढ़ाकर घ-मूच्छना बनायी जा सकती है। अर्थात् अब गुट्ट स्वरके अलावा कामल र तीव्र ग, कोमल प कोमल घ तीव्र न ये पाँच विकृत स्वराकी कल्पना करनी पड़ती है। इस प्रकार मूच्छनाआको एक सप्तकमें लानेका स्वाभाविक परिणाम विकृत स्वराकी उत्पत्ति है।

गाङ्गदवने १२ विकृत स्वराका निरूपण किया है जाआगेकी सारिणी में श्रुति सना और श्रुति जातिक साथ किया जाता है।

गाङ्गदवक इस वारह विकृत स्वराक विधानस यह मालूम होता है कि उनके समयमें 'स्वर' से दो पड़ोसी नादोंके बीचका अन्तराल समझा जाता था। तारता या स्थानकी भावना भी स्वरक साथ थी अवश्य पर निरपेक्ष रूपमें नहीं थी। यह बात स्वरकी परिमायासे भा प्रकट होता है जहाँ इसे स्निग्ध और अनुरणनात्मकके साथ साथ श्रुत्यन्तरभावी भी कहा गया है (परिगिष्ट २ ग ६)। यह इस विचारका पुष्ट करता है कि गाङ्गदवक समयमें स्वरितकी भावना प्रस्फुटित हाकर भी प्रबल न हा पायी थी। क्योंकि जबतक स्वरितकी भावना प्रबल नहीं हाती तबतक प्रत्येक स्वरका अपने पड़ोसी स्वरास अन्तराल ही मुख्य रहता है। स्वरितकी भावना प्रबल होनेपर प्रत्येक स्वरकी तारता स्वरितकी अपेक्षा निश्चित हा जाती है। स्वरके साथ इस द्वयभावक संयोगस जसे किसी स्वरक स्थानच्युत होनेपर वह विकृत समझा जाता था वस ही अपने स्थानपर स्थिर रहकर, अन्तराल बल्लन पर भी वह विकृत समझा जाता था। जस, 'कावली निपाद अच्युत पडज' में पडजका स्थान नहीं बल्ला पर निपादक दो श्रुति ऊपर चढ़ जानस पडजका अन्तराल अब दा श्रुति रह गया। इसीस यह विकृत समझा गया। इसी प्रकार च्युत पञ्च ऋषभ भी विकृत माना गया यद्यपि ऋषभन अपना स्थान नहीं छोडा। दूसरी ओर 'मध्यम-ग्राम प च्युत मध्यम' है जिनका अन्तराल तापहन ही जसा चार श्रुतियाका ही है पर प क अपने स्थानस विचलित होनेस यह

सारिणी १३

नि	सना	शुद्ध स्वर	विकृत स्वर	विकृत स्वर सना	
१	तोत्रा		न (१)	(१) कणिको निपाद	
२	कुमुदती		न" (२)	(२) काकलो निपाद	
३	मदा		म	(३) च्युतपडजव नि	
४	छदोवती	१ म	} (४) } } (५) }	(४) अच्यु प का नि	
५	दयावती			(५) च्युतपञ्जकपभ	
६	रञ्जनी				
७	रक्विका	२ र			
८	रोद्री				
९	क्रोधा	३ ग			
१०	वञ्जिका		ग' (६)	(६) धाधारण गा धार	
११	प्रमरिणी		ग" (७)	(७) अतर गा धार	
१२	प्रीति		म	(८) सा ग च्यु म	
१३	मार्जनी	४ म	} (९) } } (१०) } } ११ }	(९) अ ग अ म	
१४	क्षिनी				
१५	रक्ता				
१६	सदीपनी			प	(१०) म ग्रा पथ म
१७	आलापिनी	१ प			(११) म ग्रा प च्यु म
१८	मन्ती		} (१२) }		
१९	रोहिणी				
२०	रघ्या	६ घ			
२१	उप्रा				
२२	दाभिणी	७ न			(१२) मध्यम ग्राम घ

विकृत समझा गया। रामामात्यक समयमें स्वरितकी भावना प्रबल हो गया थी। इसीलिए उन्होंने चार अच्युत विकृतिवाले स्वर और मध्यम ग्राम प की दा विकृतियोंमें-स एकको त्यागकर सात ही विकृत स्वर माने ह। जो स्वर अपन स्थानसे विचलित हुए ह उहीको उतान विकृत माना ह (अनुच्छेद १०५)।

विकृत स्वराकी सारिणासे एक वान और प्रकट होती ह। वह यह कि सप्तकक मभी स्वर विकृतिम विचलित हुए ह पर र और घ अपने स्थानपर अचल ह। इनमें अंतराल विकृति पायी जाती है परस्थान विकृति नही पायी जाती। इन दा स्वराको अचल माननस त्रिश्रुतिक र और त्रिश्रुतिक घ स छोटा इनका कोई विकृत रूप नही दीगता जिनका अस्तित्व मूच्छनाआ में पाया जाता ह। पर इन दा स्वराका श्रुतिमान अब भी अनिश्चित सा ही ह क्वाकि कर्णाटकी पद्धतिम, जो आज तक भरत गान्ग देवके प ग्रामका ही शुद्ध ग्राम मानती रही ह एक ही शुद्ध ऋषभको कई शास्त्रकार त्रिश्रुतिक और कोई द्विश्रुतिक मानत ह। यहाँतक कि कर्णाटकी शुद्ध ग्राम को गणितकी भाषामें व्यवन करनेवाले आधुनिक विद्वानाम भी मनभेद मालूम होता ह। पर र और घ में स्थान विकृति न हाना इस बातका पिष्ट करता ह कि ये स्वर दा-दो श्रुतिके ह। र और घ की अचल प्रतिष्ठा गान्ग देवके ग्राम और आधुनिक कर्णाटकी ग्राम, दोना हीमें पायी जाता ह। हमग यह परिणाम निकलना ह कि कर्णाटकी ग्राम शाङ्ग देवका अनुकरण करता ह। भरतका ग्राम इन दानासे ही भिन्न ह (अनुच्छेद १०८)।

पर इन मार विकृत स्वराकी कल्पना करन भी गान्ग देवने अपने रागा की व्याख्या भरतका प्रणालीमें मूच्छनावे द्वारा ही की ह। यन्ि वे विकृत स्वराका उपयोग करत ता आज उनकी राग-पद्धति इननी दुर्बोध न हाती। आगेके शास्त्रकारान भी दसी मागका अवलम्बन किया ह जिनस आधुनिक प्रचलित राग पद्धति अपन अतीतस विलकुल कटा हुई सी जान पता ह। क्वाकि इसका आधार परम्पराक णिवा कोई ऐसा ग्रन्थ नही जिसकी राग

पद्धतिको सम्यक्कर अतीत और वर्तमानकी तुलना को जा सके ।

इन विकृत स्वराकी प्रकृतिसे और ध्रुति-बीणामें रत्नाकरकी स्वर स्थापनासे यह सिद्ध है कि भरत शाङ्गदेवके स्वर भी ग्रामकी तरह ही अवरोही थे । अर्थात् पङ्क आदिकी श्रुतियाँ नीचेकी जाती थी—ऊपरकी नहीं, जसा कि कुछ आधुनिक विद्वानाने मान लिया है । दा हुई सारिणोमें तीव्र, कुमुदती, मद्रा और छन्दोवती इन चार पङ्ककी निर्धारित ध्रुतियाम पङ्क स्वर छन्दोवतीपर स्थित ह ताव्रापर नहीं ।

६४ शाङ्गदेवके शुद्ध विकृत स्वरमय ग्रामका एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि भरतके दा ग्रामामें से मध्यम ग्रामके परिचायक निश्चितिक प को पङ्क ग्रामम ही विकृत स्वरक रूपम ग्रहण कर लिया गया । यही मध्यम ग्राम प आगे चलकर भारतीय सगीतमें ताव्र म या प्रति म क रूपमें प्रकट हुआ । मध्यम ग्राम प के तीव्र म में स्थापनाकी प्रगतिकी ओर रत्नाकरके टीकाकार कल्लिनाथन साफ तौरसे संकेत किया ह । रागविवक्षा ध्यायमें उहाने बताया ह कि दोगी रागोंमें दोना ग्रामाका भेद मिट गया और रामक्रिया जस क्रियाङ्गामें मध्यमने पञ्चमके दो ध्रुतियापर अधिकार कर लिया । इससे यह प्रतीत होता है कि मध्यम ग्रामका पञ्चम ही आगे चलकर दा ध्रुति उतरा हुआ तीव्र मध्यम हाकर एक स्वतंत्र विकृत स्वर बन गया है । भारतीय सगीतके विकासके इतिहासम यह एक महत्त्वकी घटना ह ।

६५ यद्यपि शाङ्गदेवने ध्रुति, स्वर, ग्राम, जाति आदिके वर्णनम भरतका ही अनुकरण किया ह, फिर भी इनकी पद्धतिमें प्रगति और विकासके लक्षणका अभाव नहीं ह । मूच्छनाआकी मध्य सप्तकमें स्थापना, विकृत स्वराकी कल्पना, मध्यम ग्रामका लोप और प्रति मध्यमकी उत्पत्ति ये सारी बातें रत्नाकरकी मौलिकता प्रकट करती ह । इसी विकास क्रममें

ग्राम-जातियो विलीन हो गया और राग-पद्धतिका प्रादुर्भाव हुआ जिसका वर्णन साङ्गदेवन विस्तारक साय किया ह ।

रत्नाकरक रागाका रूप आज अज्ञात ह, पर इसका यह अर्थ नही कि भारतीय सगीतपर रत्नाकरका कोई प्रभाव नही । रत्नाकरक राग चाहे दुर्बोध हा पर उसकी राग पद्धति आज भी प्रचलित है । साङ्गदेवक बताय हुए आलाप-आलप्ति, गमक, अल्कार, तान, कूटतान, वण, धातु आदिक नियम और प्रयोग आज भी उसी रूपमें प्रचलित ह । रत्नाकरका निबन्ध गान आज भी ध्रुपद (ध्रुवपद) के रूपमें जीवित ह । रत्नाकरकी गायकी ही भारतीय सगीतकी गायकी ह । इसालिए भारतीय सगीतके आचार्यों और उस्तादाका जितना तृप्ति सगीत रत्नाकरस मिलती ह उतनी और किमा दूसरे ग्रन्थस नही ।

[घ] श्रुति-स्वर विचार

६६ भरत और साङ्गदेवकी श्रुतियाका मान क्या था और उन श्रुतियासे बने हुए स्वर और ग्राम कस थे इसकी विवचना बहुतर विद्वानाने की ह । इसीलिए यहाँ भा इस विषयपर कुछ विचार करना आवश्यक ह । श्रुति विचारमें दो पक्ष प्रधान ह, एक पक्ष असमानवाणी ह, दूसरा समानवाणी । असमानवादी पक्षमें प्राय सभी पाश्चात्य विद्वान ह जो २२ श्रुतियाका समान नहीं मानत । व भरतक चतुःश्रुतिक त्रिश्रुतिक और द्विश्रुतिक स्वराका क्रम मजर टान (गुरु स्वर) माइनर टोन (लघु स्वर) और समी टोन (अर्ध स्वर) मानकर चलत है (अनुच्छेद ४७) । समानवाणी पक्षमें प्राय सभी विद्वान् ह जो सभी श्रुतियाको समान मानत ह । व २२ श्रुतियास बन हुए स्वर प्रबन्धका, आपुनिन १२ समान अर्ध स्वरावाल स्वर प्रबन्धम अपनाकृत अधिक सूच्चा पाकर मन्तुष्ट हाते ह । पर यद्वा ता मानना हा पन्ना ह कि भरत साङ्गदेवका श्रुति-स्वरविचार कानिसे सूक्ष्म अनुभव और विलेपणपर निर्भर था, कुछ गणितका जम्बिल क्रियाभा पर नही ।

उन्होंने कही भा ध्रुति-स्वराके नाप-टाकका तरीका नहीं बताया है जिससे उनका स्वर और रागाका ठीक-ठीक पता चल सक। इसलिए ध्रुतियाँके प्रसंगमें मनभेद हाना स्वाभाविक है। पर आधुनिक गणितके साधनमें यह गुरयो नहीं मुल्यमायी जा सकती।

६७ यह बताया जा चुका है कि प्राचीन शास्त्रकारोंने स्वराका स्थान पञ्च-गणियोंकी ध्वनिसं निधारित किया है (अनुच्छेद ८१)। रत्ना करमें भी यह प्रसंग पाया जाता है (परिशिष्ट २ ग ७)। पर आधुनिक पण्डित स्वर निधारणके इस सकेतसे सबथा उदासीन रहे हैं। इसका कारण यह है कि आधुनिक परिपाटीमें ग्रामक प्रत्येक स्वरकी तारता एक ही स्वरितकी अपेक्षा निश्चिन होती है। इसलिए किसी जीवकी ध्वनिकी गाधार और किसीकी ध्वनिकी मध्यम तभी माना जा सकता है जब इन दानाका माप किसी एक ही स्वरितसे हो। ऐसे सवनिष्ठ स्वरितकी सम्भावना नहीं होनेसे स्वर निधारणकी यह प्राचीन प्रणाली उन्हें अयोग्य जान पड़ता है। पर प्राचीनके स्वर, कमसे-कम गान्धर्व देवके समय तक दो ध्वनियोंके अंतरात् मान जाते थे। स्वरके माप एक सवनिष्ठ स्वरितकी धारणा नहीं थी। गाधारका मतलब किसी विशेष तारताके स्वरसे न था बल्कि पडज और गाधारके बीचके अन्तरालमें था, चाहे गाधार और पडजकी तारता कुछ भी हो। यह बताया जा चुका है (अनुच्छेद ७२) कि पञ्च-गणियोंके शब्द एक ही ऊँचाई या तापताके नहीं होने, उनमें उतार चढ़ाव या अंतराल होता है। अर्थात् इनकी आवाज नीचे से शुरू होकर बढ़त-बढ़ते किसी स्तर ऊँचाईपर पहुँचकर रुकती है। और यह क्रिया हर जातिक पञ्च-गणियोंमें सदा एक-सी पायी जाती है। यह सारी बातें सामान्य अनुभव और वैज्ञानिक निरीक्षणसे सिद्ध हैं। दृष्टान्तके लिए पञ्चमका निरूपण ले लें। सभी शास्त्रकारान कोकिलकी ध्वनिकी पञ्चम माना है। कोकिल जब बोलता है तो इसकी आवाज एक निम्नतम स्थानसे शुरू होती है और धार धार ऊपर उठकर एक उच्चतम स्थानपर पहुँचता है। कोकिल

स्वरा यह विस्तार निश्चित मानका और स्वाभाविक होता है जो सभा कानिलोंमें सदा एक मा पाया जाता है। प्राचीन शास्त्रकारोंका कथन है कि कानिकाकी ध्वनिका यह सारा विस्तार षट्ज-मञ्चमके विस्तार या अन्तरालका बनाता है। इसी प्रकार अन्य जीवोंके स्वरोंकी भी व्याख्या की जा सकती है। यदि पशु-श्रियाकी ध्वनिक द्वारा स्वरोंका मान निर्धारित करनेमें शास्त्रकारोंका यही तात्पर्य हो तो प्राचीन स्वर-ग्रामक नियमका सूत्र मित्र सकता है।

प्राचीन शास्त्रकारोंका इस निश्चयकी जितना अनगुण समझा जाता है सम्भवतः यह उतना नहीं है। यह वैज्ञानिक तथ्य है कि जो अन्तराल नादक आवृत्तिकापर निर्भर है व अस् मनुष्यके गलेस स्वाभाविक रूपस निकलते है वस हा पशु-श्रियाके गाम भी। फिर मनुष्य मनुष्यके बीच ता परिस्थिति और अभ्यासके वदुत विभिन्नता आ जाती है। पर एक जातिके जन्तुओंमें इस आवृत्तक अन्तराल या प्रकृत स्वरोंका उच्चारण सदा एक मा पाया जाता है। डॉ. विन्ने हेमहाइक सिद्धान्तके आधारपर बताया है कि हमारे ग्रामक कि-हीं भी दो स्वरोंके वदुनेर आवृत्तक उपस्वर एक ही हैं। इसलिए यह बहुत हा स्पष्ट प्रतीत होता है कि यदि किनी जन्तुका मदा एक ही गान गानेका इच्छा हा ता वह इसकी पूरिका प्रयाम उहीं स्वरोंका एक-बाए एक उच्चारण करके करेगा, जिनके वदुतर उपस्वर एक ही हा। अतः वह अपन गानके लिए उहीं स्वरोंका चुना जा हमारे संगान ग्रामक है।" इसलिए इसमें सन्देह नहीं कि पशु-श्रियाकी ध्वनि मनुष्यके लिए स्वर नियमोंका प्रमाण मानी जा सकता है। पर बिना वैज्ञानिक अनुसंधानके यह निश्चित स्पस नहीं बना जा सकता कि प्राचीन आचार्यों का यना तात्पर्य था जो यन्त्रि या ता उनका निराकरण करीतक टोक गा। इस विषयके नियमके लिए यह आवश्यक है कि जिन पशु-श्रियाका प्रसंग म्नाया है उनका ध्वनियोंका रकॉर्ड लिया जाय और फिर वैज्ञानिक विधिस उनका अन्तराल निकाला जाय।

६८ जसे भरतने प्रमाण श्रुतिका निर्देश किया है वसे ही शाङ्गदेवने भी श्रुति वीणाके द्वारा श्रुति-स्वरका सिद्ध करनकी विधि बताया ह । पर दानाकी प्रक्रियाम मौलिक अंतर ह । भरतने पहल ग्रामक स्वराकी स्थापना का है जोर उसस प्रमाण श्रुति निकाला ह । पर शाङ्गदेवने पहले २२ श्रुतियाकी स्थापना की ह और फिर उनस स्वराका मान निकाला ह । भरत का निर्देश सन्धेपम या ह—दो एक मी वीणाआका पहले पडज ग्राममें बाधो । फिर इनम से एकके पञ्चमको एक प्रमाण श्रुति उतारकर इसे मध्यम ग्रामका बना दो । इम उतरे टूए पञ्चमको स्थिर रखकर अब इसे फिर पडज ग्राम बनाओ । इस प्रकार दूसरी वीणाका हर एक स्वर पहली वीणाके स्वराकी अपेक्षा एक एक श्रुति नीचे उतर जायेगा । फिर इसी तरह उतारनेसे दूसरी वीणाके गाघार जोर निपाद पहलीके २ और ध स मिल जायगे । तीसरे उतारम दूसरीक ऋषम और धवत पहलीक पडज और पञ्चमम और चौथे उतारमें दूसरीके पडज, मयम और पञ्चम पहलीके निपाद, गाघार और मध्यममें मिल जायेंगे । (परिशिष्ट २ ख ४) इस प्रकार दोना ग्रामाकी २२ श्रुतिया जानी जा सकती है । मतलब यह कि भरतने २२ श्रुतियाकी सिद्धि 'स्वर वीणा के द्वारा की ह । दूसरी आर शाङ्ग देवने 'श्रुति वाणा'का प्रयोग किया ह । शायद उनका अभिप्राय भरतकी अस्पष्टताका दूर करना हा । उनकी भी दो वीणाएँ ह जिनमे से हर एकम २२ २२ तार ह । उनका निर्देश ह कि हर एक अगले तार की ध्वनि पिछल तारसे बहुत ही घाटी ऊँची हो, इतनी घोडी कि दोनाके बीच और काइ ध्वनि सुनायी न दे । (परिशिष्ट २ ग ८) यही शाङ्गदेवकी प्रमाण-श्रुति ह । इस प्रकार २२ तारकी ध्वनिया लगातार एक एक श्रुति चढती जायेंगी । अब चौथे तारपर पडज, सातवेंपर ऋषम, नवेंपर गाघार, तेरहवेंपर मध्यम, सत्रहवेंपर पञ्चम, बीसवेंपर धवत और बाईसवें पर निपादकी स्थापना करनेसे षडज ग्राम तयार हो जाता ह । इसके बाद शाङ्गदेवने अचल वीणाकी अपेक्षा चलवीणाके स्वराकी सारित करके भरत

की तरह ही २२ श्रुतियाँ सिद्ध किया है। पर यह क्रिया भरतका अनुकरण मात्र है। क्योंकि जब २२ श्रुतियाँ पहले ही निश्चित हो गयीं तो फिर उनकी सिद्धिका कोई भी प्रयाजन नहीं रहता।

इन दोनों भाचार्योंकी विधियाँकी तुलनासे यह परिणाम निकलता है कि भरतकी पद्धतिमें श्रुतियाँका समान होना आवश्यक नहीं है। पर शाङ्ग देवने निश्चय ही श्रुतियाँको समान माना है। इसीलिए असमान वादोंक आधार भरत हैं और समानवादीके शाङ्ग देव।

६६ अब इन दोनों पक्षाके अनुसार श्रुतिरवरका क्या मान निकलता है और प्राचीन ग्रामवा ५ सा रूप खड़ा हाता है इसका विचार आवश्यक है। यदि शाङ्ग देवके मकेतपर श्रुतियाँका मान एक डूगरके बराबर माना जाये, तो एक सप्तक अर्थात् सप्तक अन्तराल २२ बराबर भागाम बँट जाता है। भिन्न-पद्धतिमें सप्तक अन्तराल दो होना है। इसलिए २२ श्रुतियाँको परस्पर गुणा करनेसे दोके बराबर होना चाहिए अर्थात् यदि एक श्रुति के मानको 'स' मान लिया जाये तो

$$(१ \times २ \times \dots \times २२वाँ स) = २$$

$$\text{या } (स)^{२२} = २$$

$$\text{या } स = २^{\frac{१}{२२}} \sqrt[२२]{२}$$

(अनुच्छेद ४८)

अर्थात् एक श्रुतिका अन्तराल दोके बराबर मूलक बराबर हुआ। मूल

निकाःनेपर

$$स = १.०३२ = १.३३१$$

पर सेवटकी पद्धतिसे यह सारी गणना बड़ी सरल हो जाती है। इस लिए ऊपर भिन्नका संवत् करके अब आगे सेवटमें ही गणना का जायगी। अन्तु, स-स अन्तराल ३०१ सेवट हाता है। इसलिए एक श्रुतिका अन्तराल,

$$१ = ३०१ = १.३३७ संवट।$$

प्राचीन स्वर ग्राम

इस हिसाबसे

$$\text{चतु श्रुतिक स्वर} = १३७ \times ४ = ५४८ \text{ सेवट}$$

$$\text{त्रिश्रुतिक स्वर} = १३७ \times ३ = ४११ \text{ "}$$

$$\text{द्विश्रुतिक स्वर} = १३७ \times २ = २७४ \text{ ,}$$

आधुनिक स्वरांके साथ तुलना करनेपर पता चलता है कि चतु श्रुतिक स्वर गुरु स्वर (मेजर टोन) से लगभग चार सेवट ऊँचा है त्रिश्रुतिक स्वर लघु स्वर (माइनर टोन) से लगभग ५ सेवट नीचा है, और द्विश्रुतिक स्वर अथ स्वर (सेमी टोन) के लगभग बराबर है (अनुच्छेद ४९)।

इस हिसाबसे शाङ्गदक्का गुद्ध ग्राम ऐसा निकलता है—

स र ग म प ध न स
० ४११ ६८५ १२३३ १७८१ २१९२ २४६६ ३०१

इसमें म इष्ट मध्यम लगभग २ सेवट नीचा और प इष्ट पञ्चमसे २ सेवट ऊँचा है। ग और न भी आधुनिक कोमल ग और कोमल न से लगभग १० सेवट उतरे हुए हैं। ये गूँ ३३ और नूँ ३३ से भी लगभग ५ सेवट छोटे हैं।

इस स्वर प्रबंधमें, जो किसी भी गान स्वर प्रबंधसे नहीं मिलता, विचारनेकी मुख्य बात यह है कि इसका चतु श्रुतिक अन्तराल गुरु स्वरसे भी ३८ सेवट या लगभग एक कामा ऊँचा है। यह गुरु स्वर मध्यम और पञ्चमका अन्तराल है, और ये दाना ही स्वर प्राकृतिक हैं जो सभी देशों और सभी कालोंमें एक ही पाये जाते हैं। इसलिए यह मानना पड़ता है कि शाङ्गदक्का आचार्य इसका मानमें त्रुटि नहीं कर सकते। जो हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि शाङ्गदक्की श्रुतियाँ गुद्ध गणितकी दृष्टिसे बराबर नहीं हैं और न उनका लक्ष्य मम साधुत ग्रामकी रचना ही था जो आधुनिक पादचार्य सगातमें सहनिकी एक विशेष समस्या लेकर बलिपत हुआ है।

१०० भरतक मागपर चलनस स्वराका मान पहले निश्चित करना हागा फिर श्रुतिका मान निकालना हागा । इस सम्बन्धमें अनेक विद्वानान भरतक चतु श्रुतिक स्वरको गुण स्वर, त्रिश्रुतिकको लघु स्वर और द्विश्रुतिकको अथ स्वर मान लिया ह । ऐसा मान लेनेपर अनायास ही भरत का पडज ग्राम इस तरह तयार हो जाता ह—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१	$\frac{१०}{२}$	$\frac{३३}{२७}$	$\frac{४}{३}$	$\frac{३}{२}$	$\frac{५}{३}$	$\frac{१६}{२}$	२
$\frac{१०}{६}$	$\frac{१६}{१५}$	$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$	$\frac{१६}{१५}$	$\frac{१}{२}$	

यह बताया जा चुका ह कि—

$$\text{गुरु स्वर } \frac{१}{२} = ५१ \text{ सवट}$$

$$\text{लघु स्वर } \frac{१०}{२} = ४६ \text{ सवट}$$

$$\text{अथ स्वर } \frac{१६}{१५} = २८ \text{ सवट (अनुच्छेद ४९)}$$

भरतकी पहली सारणामें चलवीणाका प्रत्यक स्वर अचलवीणाके प्रत्यक स्वरस एक श्रुति उतरता ह । यह बताया गया ह कि पहली सारणा पडज ग्राम प और मध्यम ग्राम प क अन्तरके बराबर होती ह । इस ही प्रमाण श्रुति कहत ह । इस साधणा-स मध्यम ग्राम प ऋषभका सवाणी हो जाता ह, इसलिए मध्यम ग्राम प का मान $\frac{१०}{२} \times \frac{४}{३} = \frac{२०}{३}$ हुआ । इस प का पडज ग्राम प स अन्तर $\frac{३}{२} - \frac{२०}{३} = \frac{९}{६}$ हुआ या ५ सेवट हुआ । यह गुरु-स्वर और लघु स्वरका अन्तर ह जिस एक कोमा कहत ह । जब चलवाणाक गाधार और निपाद भी एक एक कोमा उतर गये । दूसरी सारणामें चल वीणाक दोना स्वर अचलवीणाक र और ध म मिल जाते ह । इसलिए यह दूसरा उतार २३ सवटका हुआ जिसे लीमा कहत ह । इसलिए दूसरी श्रुति एक लीमा $\frac{३३}{२७}$ के बराबर हुई । इन दोना उतारामें चल वीणाक र और ध एक अथ स्वर या २८ सवट उतर गये । इसलिए ये स्वर अचल

बीणाक स और प से १८ सेवट ऊँचे रहे। तीसरो सारणामे र और घ, स और प से मिल जात है। इसलिये तीसरी श्रुति एक लघु अघ स्वर $३\frac{१}{४}$ या १८ सेवटके बराबर हुई। अब स, म और प के कुल ४६ सेवट उत्तरतस इनमें एक कामा या ५ सेवट रू ग गया। चौथी सारणामे ये तीना स्वर न ग और म म मिल जात है। अर्थात् चौथी श्रुति एक कामाके बराबर हुई। सन्नेपम—

$$\begin{aligned} \text{चतु श्रुतिक स्वर} &= \text{कामा} + \text{लीमा} + \text{लघु अघ स्वर} + \text{कामा} \\ &= \frac{५}{४} \times \frac{३\frac{१}{४}}{३} \times \frac{३}{२} \times \frac{६}{४} \\ &= ५ + २३ + १८ + ५ \\ &= ५९ \text{ सेवट} = \text{५} \end{aligned}$$

$$\begin{aligned} \text{त्रिश्रुतिक} &= \text{काम} + \text{लीमा} + \text{लघु अघ स्वर} \\ &= ५ + २३ + १८ = ४६ \text{ सेवट} = \frac{१९}{४} \end{aligned}$$

$$\begin{aligned} \text{द्विश्रुतिक} &= \text{कामा} + \text{लीमा} \\ &= ५ + २३ = २८ \text{ सेवट} = \frac{१४}{४} \end{aligned}$$

सभा श्रुतियोंको यदि प्रामम मज दिया जाये तो नीच दिया हुआ चित्र तयार होना है—

स	र	ग	↓	म	प	घ	न	↓	म
ल ना का ला वा वा ल ली वा वा ल ला का न ला वा लो वा वा ल ली को									

जहाँ—

को—कोम ५ सेवट ($\frac{५}{४}$)

ल—लघु अघ स्वर १८ सेवट ($\frac{३१}{४}$)

ली—लीमा २३ सेवट ($\frac{३५}{४}$)

इस चित्रके अनुसार अठर ग और काकली न बाणचिह्नित म्यानपर हाथ जिनका अन्तराल म और म से एक अघ स्वर ($\frac{१९}{४}$) होगा। अर्थात् इनका मान क्रमशः $\frac{१९}{४}$ और $\frac{३८}{४}$ होगा।

१०१ श्रुतियाका यह मान निणय भरतक सारणा निर्देशपर हुआ ह । पर बहुतेरे विद्वानाने स्वतन्त्र रूपस २२ श्रुतियाका निरूपण किया ह । इम निरूपणमें किन्हीन चक्रिक प्रक्रियाका उपयोग किया ह, किन्हीने सक्रमिक प्रक्रियाका (अनुच्छ ६५, ६६) । दोना ही प्रक्रियाआमें अनेक प्रकारक श्रुति प्रबन्ध बन सकत ह । और इसका कोई भी उचित कारण नही दीयता कि एक श्रुति प्रबन्धका दूसरसे श्रेष्ठ या अधिक उपयुक्त क्या समया जाये । चक्रिक प्रक्रियाम यन्ि मध्यमस आरम्भ करके पञ्चम (३) की कडीस आरोहण करत जायें और वाइसवों कडीपर रुक जाय तो एक विशेष प्रकारका श्रुति प्रबन्ध निकलता । पर यन्ि पञ्चमक प्रमाणसे ही अवरोहण करें ता दूसरा ही श्रुति प्रबन्ध प्राप्त हागा । और यदि दानाका मिश्रण करें तो अनेक प्रकारक श्रुति प्रबन्ध सिद्ध किये जा सकते ह । एस ही सक्रमिक प्रक्रियाक द्वारा भी अनेक प्रकारके श्रुति-समुदाय तयार किये जा सकत ह । नीचे उदाहरण रूपमें मध्यमस आरोहो-चक्रक द्वारा प्राप्त श्रुति स्थानाका सारिणीमें दिया गया ह । साथ-ही साथ तुलनाक लिए, सक्रमिक प्रक्रियास प्राप्त स्थानाको भी दिया गया ह जिसका निरूपण स्टडवेज आदि विद्वानाने और जिसका अनुमादन श्रीनिवास आयंगर, सुब्रह्मण्य अय्यर आदि भारतीय मगीत पण्डितान किया ह ।

ऊपरकी सारिणीमें दिये हुए सक्रमिक स्वराका निरूपण स्टडवेजन पञ्चम-सवाद (आरोहा और अवरोहो) और गांधार सवाद (४) के प्रयोगस किया ह । क्लेमण्टक सशोधनमें $\frac{3}{2}$ और $\frac{5}{4}$ गांधार-सवाली और $\frac{3}{2}$ और $\frac{3}{2}$ साप्टिक सवादी अथात् ध्वनिके सातवें आवर्तकस निकल हुए स्वर ह । इन स्वराका निरूपण उन्हान पूना निवासी देवल्क प्रयोगावे आधारपर किया ह । श्रीनिवास आयंगरक कथनानुसार अक्लडून $\frac{3}{2}$ (१२० स) और $\frac{3}{2}$ (२९६) और मान ह अथान २४ श्रुतियां माना हैं ।

इस सारिणीको देखनस यह मुख्य बात निकलती ह कि चाहे चक्रिक स्वराको लें या सक्रमिक स्वराका तीन ही प्रकारके अंतराल उपयोगमें आये

प्राचीन स्वर प्राम

सारिणी १४

व्यक्ति प्रक्रिया			सक्रामिक प्रक्रिया			
स्वर	स्थान (सेवट)	अत राल	भिना	सेवट	विकल्प	
					स्टडवेज	वलेमिष्ट
स	०		स	०		
म	२८		र	२३		
म	३३		ग	२८		
म	३३		म	४५		
र	५५		प	५९		
स	५५			७४		
म	५५			७५		
म	७०			९७		
म	७०			१०२		
म	१०			१२५		
म	१०			१३०		
म	१२			१४८		
म	१२			१५३		
म	१५			१७५		
म	१५			१९९		
म	२०			२०४		
म	२०			२२२		
म	२३			२२७		
म	२३			२५०		
म	२५			२५५		
म	२७			२७३		
म	२७			२७८		
म	३०			३०९		
					२४०	१७९
						१५०
						१९७
						३५५
						२७१

है—एक कामा (५ सें), दूसरा लघु अध स्वर (१८ से) और तीसरी लीमा (२३ सें) । यह ध्यान देनेकी बात है कि भरतक तात्पर्यानुसार निकले हुए श्रुति प्रबंधम भी य ही तीना अन्तराल पाय जात है । (अनुच्छेद १००) इससे यह स्पष्ट है कि समश्रुति प्रबंधको छाडकर २२ श्रुतियाकी अन्य सारी पाटियाँ मूलत समान है इसमें अंतर केवल श्रुतियाक क्रम में है ।

१०२ इन श्रुति नियाम चाहें ता यह मान लिया गया है कि भरतका स्वर ग्राम आधुनिक प्रकृत ग्राम ही है जिसके अंतराल $\frac{1}{2}$, $\frac{3}{4}$ और $\frac{1}{2}$ है या यह कि भरत ग्राम चक्रिक प्रक्रियासे बना है पर २२ श्रुतियाकी निष्पत्तिके लिए चक्रका बाईसवी कडापर ही खण्डित हो जाना आवश्यक है पर ऐसा माननेका कोई कारण नही बताया गया है ।

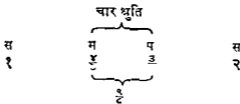
इसलिए यह आवश्यक है कि बिना किसी उत्प्रेक्षाके भरतके निर्देशा पर विचार किया जाये और यह देखा जाय कि ठीक ठीक उन निर्देशापर चलकर हम कहातक आगे बढ़ सकत है ।

पहले यह विचार करना है कि प्राचीन शास्त्राम २२ श्रुतिया क्या मानी गयी । या ता यदि पडज ग्रामकी साता मूच्छनाओको, बिना श्रुतिमानका विचार किय हुए केवल यह मानकर कि तीन प्रकारके स्वर एक-दूसरसे बडे है स और स के बीच स्थापित कर दिया जाय ता यह दख पडगा कि स-स के बीचके २० स्थान धिर जाते है । इससे अतिरिक्त स से लगा हुआ आरोही अन्तराल और स स लगा हुआ अवरोही अन्तराल बीचके अन्तरालोसे बहुत बडा रह जाता है । यदि इन अन्तरालोको दो दो हिस्सामें बाँट दिया जाये तो स स के बीच अनायास २२ अन्तराल या श्रुतिया मिल जाती है । पर यह नही माना जा सकता कि भरतकी धारणा सभी मूच्छनाओको एक स्थानमें लानेकी थी (अनुच्छेद ८७) ।

भरतने तीन प्रकारके स्वर माने है जिनका अन्तराल एक दूसरसे बडा है— एक सबसे छोटा, दूसरा इससे बडा और तीसरा सबसे बडा । यह उनकी

वतायी हुई वक्षमें तीना प्रकारके स्वर निकालनकी विधिसे विदिन हाता ह । (परिशिष्ट २ ख ५) । ये तीना स्वर सगीतोपयोगी ह । इनमें से सबसे छोटे स्वरस भी छोटा स्वर गलम या यत्रसे स्पष्ट निकाला जा सकता ह पर स्वतंत्र रूपमें ऐस स्वरका सगीतमें उपयोग नही हाता । म अनुपयुक्त, फिर भी सुसाध्य, अणु स्वरक मानका यदि एक श्रुति मान लें ता, जनायास हो सगातापयोगी लघुतम स्वरका दा श्रुति इससे बडे स्वरको तीन श्रुति और सवम वत्र स्वरका चार श्रुति मानना पडेगा । इसमें श्रुतिके किसी निश्चित मानकी स्वीकृति नही ह । इस प्रकार जत्र स्वर्गको द्विश्रुतिक त्रिश्रुतिक और चतु श्रुतिक सनाएँ निधारित हो जाती है ता एक सप्तकमें २२ श्रुतिया का अन्ति व मामांय गणनासे ही सिद्ध हा जाता ह ।

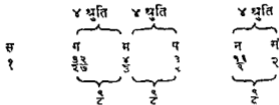
जब भरतक स्वराका विचार करना ह । भरतने मध्यम सवाद और पञ्चम सवादका बडी प्रधानता दी है । मवात्रक अथमें काट सशय नहीं उठता । कल्लिनायने जा रत्नाकरकी टीकाम सवादका अथ लगाया ह नि सद्दह बही भरतको भी मांय था ।^१ अथात दो स्वराक साथ साथ उच्चारणकी इष्टताको ही सवाद क्त है । इसलिए यह सिद्ध है कि भरतका मध्यम और पञ्चम प्रकृत ह जिसका मान क्रमश ५ और ३ ह । म और प के अन्तरालको चतु श्रुतिक माना गया ह जिसका मान २ निश्चित है । मत्कम इन दोना स्वराकी स्थापना इस प्रकार होगी—



यह बताया गया ह कि गायार और मध्यमक बीचका अन्तराल चार

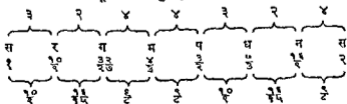
१ मध्यमम्याविलापित्त्र चाधस्तनाना सरिगाणामुपरितनाना पध नीना च द्वयाद्वयोरकत्र सन्या वदन सनात्ति इति ।

ध्रुति का और उसी प्रकार निपाद और पङ्क्त का बीच का अंतराल भी चार ध्रुति का है। इसलिए इन दो स्वरा का स्थान भी निश्चित हो जाता है। अर्थात् ग का मान $\frac{3}{2} \times \frac{2}{3} = \frac{2}{3}$ और न का मान $2 \times \frac{2}{3} = \frac{4}{3}$ है। अब इन दो स्वरा का भी ममावग होना पर सप्तक में चार स्वर इस प्रकार बैठेंगे—



इन चार स्वरा का स्थानों में का भी सगात नहीं है। र और ध का अंतर ग और न से दो-दो ध्रुति का है। इनकी स्थापना एक महत्वपूर्ण सवतके आधार पर की जा सकती है। भरतन दो ध्रुति अन्तर वाले र ग और ध न स्वरा को परस्पर विवादी बताया है। यदि यह विवाद भी सवात का ही भाँति व्यापक अनुभव पर निर्भर है तो अवश्य ही इसका आधार प्राकृतिक है। प्राकृतिक अनुभव, निरीक्षण और प्रयोगक द्वारा हेतम हो जाने यह सिद्ध कर दिया है कि दो स्वरा में सवत अधिक विवात तभी होता है जब इनका पारस्परिक अंतर अध स्वर या $\frac{1}{2}$ होता है (अनुच्छेद ५६)। यदि भरत का विवाद भी अनुभवसिद्ध अतएव प्राकृतिक है तो नि सदेह र-ग और ध-न का अंतर $\frac{1}{2}$ है। इस प्रकार र का मान $\frac{2}{3} \times \frac{3}{2} = 1$ और ध का मान $\frac{4}{3} \times \frac{3}{2} = 2$ सिद्ध होता है।

अब भरत का सम्पूर्ण ग्राम प्रस्तुत होता है—



यह ग्राम मस्थान बिल्कुल वमा ही ह जसा अनुच्छेद १०० म दिया गया है । यदि 'सवाद' और 'त्रिवाद' क प्राकृतिक आचारको मान लिया जाये तो भरत ग्रामका यह सस्थान निर्विवाद सिद्ध हो जाता ह ।

अन्तम इस ग्रामक व्यावहारिक रूपपर भी षाडा विचार करना आवश्यक ह । इम ग्रामका रूपम प्रचलित ग्रामाके रूपमस एक कामा उत्तरा हुआ ह । पर भरतका ग्राम अवराही था । और यह अनुभवसिद्ध ह कि स्थिर स्वराको छोड शेष स्वराकी प्रवृत्ति अवरोहणम आपसे जाप नीचे उतरनका और आराहणम रूपर चढनेका होती ह । इसलिए यदि भरत ग्रामका आधुनिक प्रथाक अनुसार आरोही क्रमम उपयोग किया जाये ता यह ग्राम जापस आप काफी ठाठम या मध्ययुगीय शुद्ध ग्रामम (अनुच्छेद ११३) बदल जाता ह । इस विषयपर आगे भी प्रकाश डाला जायेगा ।

१०३ यहां एक बातपर और विचार करना उचित ह । कुल पाश्चात्य पण्डिताका मत ह कि प्रकृत अव स्वर ($\frac{1}{2}$) की धारणा तभी होती ह जब प्रकृत गांधार ($\frac{2}{3}$) का प्रयोग होने लगता ह । और तभी लघु स्वर ($\frac{1}{4}$) का भी प्रादुभाव हाता ह । पाश्चात्य देशम प्रकृत ग्रामका उपयोग, विज्ञानके प्रभावस और पहल पहल जालिना (१५८०-१५९४) क विधानपर होने लगा ह । इसस यह अनुमान लगाया जा सकता ह कि भरत ग्रामम लघु स्वरका अस्तित्व कष्ट कल्पना मात्र ह । पर भारतीय सगीतमें लघु स्वर ($\frac{1}{4}$) और अव स्वर ($\frac{1}{2}$) परम्परासिद्ध है । आधुनिक विज्ञान तथा पाश्चात्य पद्धतिसे पूरी तरह अनभिन्न अहाबलने जा तारकी लम्बाईस स्वराका निर्धारित किया ह उनम य दोःा अ तराल निश्चित रूपम मौजूद ह, यद्यपि प्रकृत गांधार ($\frac{2}{3}$) की उहाने चषा नही की ह । पूर्वाङ्गमें उनक स्वराका स्थान अतरालके साथ, इस प्रकार ह—

स	र	ग	म
१	$\frac{2}{3}$	$\frac{4}{5}$	$\frac{3}{2}$
┌──────────┴──────────┐			
$\frac{1}{4}$	$\frac{3}{4}$	$\frac{1}{2}$	

(अनुच्छेद ११३)

इसमें दोना ही प्रकृत अंतराल मौजूद है, सिर्फ उनके क्रम भेद है। बात यह है कि लघु स्वर ($\frac{1}{2}$) की उत्पत्ति लिए प्रकृत गांधार ($\frac{5}{4}$) सेना ही उपयोगी है जितना कामल गांधार ($\frac{6}{4}$)।

जब भारतीय परम्परामें इन स्वरका अस्तित्व पाया जाना है तो भरत ग्राममें इनका होना असम्भव नहीं है। फिर भरत ग्राममें यदि लघु स्वरका अस्तित्व न होना तो व भी ग्रामका २४ ध्रुतियामें बाँटत जमा कि प्राचीन यूनानी पद्धतिमें किया गया है। इस पद्धतिमें ग्रामका २४ ढाण्डिममें बाँटा गया है जस—

४ ४ २ ४ ४ ४ २

भरतका २२ ध्रुतियाका निष्पन्न ही इस बातका सिद्ध करता है कि उनके ग्राममें लघु स्वरका अस्तित्व है।



१५ मध्यकालीन स्वर-ग्राम

१०४ भारताय सगीत-कलाके विकासम जिस परिवर्तनका उपक्रम मतङ्ग शाङ्गदेवके कालम दीख पडता ह वह मध्यकाल (१६वीं सदी) म पूरी तरह चरिताय हा गया । इसके अतिरिक्त इस कालमें स्वर, ग्राम आदि निरूपणकी नयी विधियाका आविष्कार हुआ जिससे इस युगकी धारणाएँ और आधारभूत सिद्धांत आज सामान्यतः सुबोध जान पडते हैं । भारतीय सगीतम इस नये युगके प्रतिनिधि, दक्षिणम रामामात्य और उत्तरम अहोबल माने जाते हैं ।

इस युगमें मध्यम-ग्रामका निश्चित रूपस लोप हो गया और केवल पञ्च ग्राम ही सगीतका आधार रहा । शाङ्गदेवकी परिभाषामें स्वरके साथ जो अंतरालकी धारणा थी वह अब बदलकर स्वरित द्वारा निर्धारित स्थान या तान्ताकी धारणा प्रबल हा गयी । अर्थात् पडजका आधार स्वर या स्वरित माना जाने लगा । पडज और पञ्चम सदाके लिए नियत स्वरनिर्दिष्ट हुए जिनमें किसी प्रकारकी विकृति नही हा सकती । मध्यम ग्रामके अवगोप तीव्र मध्यम या प्रतिमध्यमका भारतीय सगीतम स्वतंत्र स्वरक रूपम ग्रहण हुआ । मूच्छनाआका चाहे तो लोप हो गया या नये अर्थमें इसका प्रयोग हाने लगा । रागाके वर्गीकरणके लिए विकृत स्वराके उपयोगस मेलोका निरूपण हुआ । पर सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि स्वर-ग्रामका भरत शाङ्ग देव द्वारा निर्दिष्ट अवराही क्रमका लोप हाकर आरोही-क्रमकी प्रतिष्ठा हुई ।

[क] दाक्षिणात्य पद्धति

१०५ मध्यकालीन स्वर ग्रामकी विवचनानें पहल रामामात्यकी दाक्षिणात्य पद्धतिका सम्प्लिष्ट विवरण आवश्यक ह । रामामात्यन शाङ्ग देव

क १२ विकृत स्वराम-स सातका रगकर पाँचका परित्याग कर लिया ।

गुड और विकृत मिलाकर उनक १४ स्वर ये हैं—

स, गुड र, गुड ग (पञ्चश्रुति र), साधारण ग अन्तर ग, च्युत मध्यम ग, गुड म च्युत पञ्चम म गुड प, गुड ध गुड न (पञ्चश्रुति ध) कण्ठी न, काकला न और च्युत षड्ज म। अच्युत षड्ज (काकली निपाद) च्युत षड्ज ऋषभ, अच्युत मध्यम (अन्तर गाधार), मध्यम ग्राम प (च्युत मध्यम) और मध्यम ग्राम ध, इन पाँच स्वराका स्थान नहा बदलता इसलिए रामामात्यने इन्हें विकृत नहा माना ह । इसमें यह सिद्ध ह कि उहाने स्वरका प्रयोग नियत तारताकी ध्वनिके अधम किया ह । आरोही ग्राम और षड्जका स्वरित माननका यह स्वाभाविक परिणाम ह । मध्यकालम स्वरितका भावना प्रबल हो गयी थी जो आधुनिक भारतीय सगीतकी मुद्रा भित्ति समयी जा सकती ह (अनुच्छेद ११७) ।

रामामात्यक अनुयायी मोमनाथन स्पष्ट दादामें कहा ह कि पूव आचार्यों द्वारा कल्पित ५ विकृत स्वर सब ध्वनि होनके कारण विकृत नही मान जा सकत । उहाने यह भी बताया ह कि दगा रागाम पञ्चमका विकार प्रचलित नही ह (परिगिष्ट २ च) । पर मामनाथने रामामात्यक ७ विकृत स्वराकी जगह १५ मान ह ।

गुड ग और गुड न विकल्पसं पञ्चश्रुति र और पञ्चश्रुति ध मेल रचनाक लिए हा कह गय ह । मेल रचनाके इन दो सामाय नियमाका मेलकत्ताके सभा प्रवक्तकान माना ह—एक स्वर-सस्थान ७ स्वराका सम्पूर्ण हो दूमरा, एक स्वरक दो भेद मलम एक साथ नही आ सकत । जस, किसो मलम गु ग और सा ग या अ ग एक साथ नही आ सकते । ऐसा हानस मेलमें छह ही स्वर रह जात ह । इसलिए एसा दगामें गु ग को पञ्चश्रुति र कहा जायगा यद्यपि दानाक स्थानम कोई भेद नही ह । इसी तरह जिस मलम शु र हो उसमें वह गु ग ही कहा जायेगा, पञ्चश्रुति र नही । कल्पिक स्वर सगाका यही तन्व ह ।

रामामात्यन १४ शुद्ध विवृत स्वराम से सात-सात स्वराको लकर २० मेलाकी रचना की। ये जनक मेल कहे गये जिनमें से प्रत्येक स ओडव पाडव आदि भेद करके अनेक जय राग निकाले जा सकते हैं। यह मेल आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिके ठाठ' का पयाय है (अनुच्छेद १२४)। या ता मेल' 'मेलन' आदिका प्रयोग पहले भी हुआ है पर मेलके द्वारा रागा के विधिवत वर्गीकरणके प्रवक्तक रामामात्य ही समझे जा सकने ह। साम नाथने जनक मेलाकी सख्या बढ़ाकर २३ की। पर अन्तम वेंकटमखीने ७२ मेलकत्ताआक विज्ञानके द्वारा जनक मेलाकी सख्या चरम सीमा तक पहुँचा दी, जिसस बड़ी सख्या किसी भी गणनासे नहा प्राप्त हा सकती। यह ७२ मेलकत्ताका विज्ञान आज भी दाक्षिणात्य पद्धतिम माना जाता ह।

रामामात्यने प्रयोगमें 'च्युत मध्यम गाधार और च्युत पड्ज निपाद' को अ नर गाधार' और 'काकली निपाद' का प्रतिनिधि मान लिया ह (परिशिष्ट २ घ २) इसस 'यक्हारमें शुद्ध विवृत मिलाकर १२ स्वर रह गय। यह १२ स्वरका ग्राम केवळ भारतीय-दक्षिणात्य और उत्तरीय-सगीतका हा आधार नहीं ह वरन प्राय सावभौम ह। प्राय सभी दशाम अब सप्तक १२ स्वरामें बाँटे जाते ह। पाश्चात्य देगामें भी इसी क्रामेटिक स्केल का प्रचार ह। इसी कारणस १२ स्वरावाले सममाधृत ग्रामका भा दतना अधिक प्रचार हुआ। इससे यह न ममयना चाहिए कि प्रत्येक पद्धतिम इन बारह स्वराका मान भी एक ही ह। पर अब स्वरक ग्राम आधुनिक विश्व मगीतका मव'यापी अग-सा जान पडता ह। वेंकटमखीने भी १२ स्वराका मानकर ही ७२ मेलकत्ताआकी सृष्टि की ह (अनुच्छेद १०९)।

१०६ रामामात्यने व' ही मौलिक ढगसे स्वयभू स्वरा की कल्पना की ह। स्वयभू स्वरकी व्याख्यामें बहुतेरी कल्पनाए दीडायी गयी ह। रामामात्य इसकी परिभाषा बड ही सरल शब्दामें दते ह। व कहते ह—
"स्वयभुज स्वरा ज्येत न स्वबुद्ध्या प्रकल्पिता।" इसका मोषा अथ यह ह कि स्वयभू स्वराकी कल्पना बुद्धिके द्वारा नहीं की गयी ह, अतएव ये

कृत्रिम नहीं है। इनका आधार प्राकृतिक है। आगे व कहते हैं कि रत्ना करत ८ मा १२ ध्वनि अल्लरवाले स्वरोंका परस्पर सवाणी माना है। अब व स्वरोंका प्रमाणित करनेके लिए दूसरे माग (नियम) का निहण करते हैं। फिर व अंगत गूढ मल नामक सूत्रनाणक चार तारक नाच ६ सारियों पर स्वराका स्थापना करके इन सभी स्वरोंका स्वयं प्रमाणित करते हैं। उनकी स्वयं स्वरोंका इस निश्चिति यह सिद्ध है कि रामाभायन उन स्वरोंका स्वयं प्रमाणित है या किसी दूसरे प्राकृतिक स्वरस परम-व्यंघम या पद्म मध्यम भावस निकाल जा सकें। उन्होंने बताया है कि पट्ट और वंघम तथा पट्ट और मध्यमको ता रताकर आदि भी परस्पर सवाणी माना है। इसलिए रामाभायन सिद्धान्तस ५ और ६ स्वयं १। अब ५ और गूढ ग (हिन्दुस्तानी र) और फिर गूढ ग और गूढ न (हिन्दुस्तानी घ) में भी म-म सम्बन्ध ही है इसलिए गूढ ग और गूढ न भी स्वयं प्रमाणित है। इसी तरह यह श्रुत्या वागे बानी है। अतः रामाभायन चरित्र प्रक्रियास स्वरोंका निष्पत्ति किया है और इस प्रक्रियास निष्पत्ति स्वराका ही उतोंन स्वयं प्रमाणित है।

मौलिकतः रामाभायन स्वयं स्वरोंका स्वतंत्र व्याख्या करनेका प्रयास किया है। व कहते हैं कि सवाणी स्वरोंका समाज (सति) रञ्जनकारी होता है। म-म म मध्य सवाणी है जिनका उत्तर १२ मा ८ ध्वनिका का है। अब म-म-म का स्वयं प्रमाणित लिए नियत ध्वनिका की कल्पना जिना क्रिये या सुन्दर और तारक म-म-म बिना इनकी निश्चिति बताया है। फिर व उनकी विधि बताया है कि बाणाक चौथ मन्द्र म क तारक नीच दूसरे सुन्दर म-म व का है जिसेपर तारका संगीत बिना भा अंगुली गणनस वसा १ म-म व का स्वर निकलता है जसा कि तारका सुन्दरस संगीतपर। सामनायन इस मौलिक युक्तिस सभी स्वयं स्वरोंका प्रमाणित करनेका चष्टा की है। इस व्याख्याका दाना अंग ता ममीचोन है कि जिन स्वरोंमें १२ मा ८ ध्वनियोंका म-म है व स्वयं प्रमाणित है। पर तारका सुन्दरमें

बिना सटाये स्वयंभू स्वर निकालनेकी युक्ति असंगत ही नहीं, पूरी तरह भ्रात ह। गायद सामनायका इसी युक्तिस प्रेरित होकर रामस्वामीने स्वरमेलक गानिधिकी भूमिकाम स्वयंभू स्वरका आवत्तक उपस्वरसिद्ध करने का प्रयास किया ह। पर उनकी यह कल्पना निराधार प्रतीत हाती ह। उहाने रामामात्यक सरल और सुस्पष्ट अवकी उपगा करवे ध्वनि विधान के आवत्तककी धारणा म्वाच निकालनकी चेष्टा की ह। आवत्तकका गान सगीतके पण्डितक लिए आवश्यक नही ह। पर रामामात्यक लिए यह प्रगसाकी बात ह कि उहाने सम्भवत भारतीय सगीतके इतिहासमें पहले पहल चक्रिक प्रक्रियाका प्रयाग ग्रामकी रचनामें इस दक्षतास किया है।

१०७ स्वयंभू स्वराका कल्पनाके आधारपर रामामात्यद्वारा स्वराका निरूपण चित्रमें दिखाया जाता ह जिसस इस विचारकी भी पुष्टिहाती ह कि उनका स्वयंभू स्वराका तात्पर्य पञ्चम (या मध्यम) चक्र द्वारा प्राप्त स्वरास था। चित्रम शुद्धमल रुद्रवाणाक चार तार स प स, म, के नोचे ६ सारिथा पर रामामात्यद्वारा निर्दिष्ट स्वराकी सना दी गयी ह और साथ साथ सरल गणनासे निकला हुआ मान भी दिया गया ह। स्वराकी उत्तरात्तर उत्पत्ति की सीढियां काष्ठकमें अङ्क दकर और वाणाक द्वारा सूचित की गयी है।

तार → ?				
सारी स३		२ प ३	३ (१) स १	४ म ३
↓				
१ (३३) शु र	(२३) ग	प (५)	(१) शु ग	(३) प म ३३
२ (३३) शु ग	(३३) शु न (२)	(३) शु ग	(१) शु प ३	
३ (३३) सा ग	(३३) के न (४)	(३) स ग	(३) शु ष (५) ३३	
४ (३३) म ग	(३३) शु प (३)	(३) शु म ग	(३) शु न ३३	
५ (३) स म	(३) शु ष	(३) शु म	(३) के न (४) ३३	
६ (३) ३३ उप म	(३) शु र	(३) शु प म	(३) शु प न (३) ३३	
↓	↓	↓	↓	
१	२	३	४	

एह गारियापर स्वराकी स्थापनाके बाद रामामात्य स्वराको प्रमाणित करत हैं । वे कहत हैं (परिगिष्ट २ ष ३) कि चौथे तारके नीचे दूसरी सारोपर मन्द्र पञ्चम, [प (१)] स्वयभू ह [स (१) की अपगा] इसलिए दूसरा सारोपरक सभी स्वर स्वयभू हैं । दूसरी सारोपर दूसर तारके नाच अनुमन्द्र गुड निपाद [गु नि (२)] क प्रमाणस चौथे तारक नीचे चौथी सारोपरका मन्द्र गुड निपाद [गु न (२)] स्वयभू ह इसलिए चौथी सारोपरक सभी स्वर स्वयभू हैं । चौथी सारोपर दूसर तारक नीचे अनुमन्द्र व्युत्पञ्ज निपाद [व्यु प-न (३)] क प्रमाणस चौथे तारक नीचे छठी सारोपरका मन्द्र [व्यु प-न (३)] स्वयभू ह इसलिए छठा गारोपर सभी स्वर स्वयभू हैं । पाचवी सारोपर स जीर म स्वयभू हैं इसलिए इसपरक सभी स्वर स्वयभू हैं । चौथे तारक नीचे पाँचवा सारोपर मन्द्र कणिक निपाद [क न (४)] क प्रमाणस दूसरे तारक नीचे तानरा सारोपरक [क न (४)] को मानयुक्त करनपर इसम उत्पन्न सभी स्वर स्वयभू हैं अर्थात् तीसरा सारोपरक सभी स्वर स्वयभू ह । तीसरी सारोपर चौथे तारके नीचे मन्द्र गुड धवन [गु ध (५)] के प्रमाणस दूसर तारक नीचे पहली सारोपरक अनुमन्द्र गुड धवन [गु ध (५)] के प्रमाणस दूसरे तारके नीचे पहला सारोपरक अनुमन्द्र गुड धवन [गु ध (५)] मानयुक्त होनेपर सभी प्राणाणिक स्वर उत्पन्न हते हैं अर्थात् पहली सारोपरक सभी स्वर स्वयभू ह ।

इस प्रकार रामामात्यन एह गारियापर स्थापित सभी स्वराका प्रमाणित किया ह । इन प्रमाणित स्वराका मान अब बड़ी सरलतास निकाला जा सकता ह । जैसे स १ से दूसरी सारोके गु प का मान $\frac{3}{2}$ हुआ इसलिए दूसरी सारोके अन्य स्वराका मान—

गु प $\frac{3}{2}$ → गु गाघार (गु ग) = $\frac{3}{2} \times 2 = 3$ → गु नू = $\frac{3}{2} \times 4 = 6$
 गु-न $\frac{3}{2}$ → गु-न (२) $\frac{3}{2}$ इसस चौथा सारोके स्वराका मान गु-न (२) $\frac{3}{2}$ → व्युम मध्यम गाघार (व्यु म ग) = $\frac{3}{2} \times \frac{3}{2} = \frac{9}{4}$ → व्युत्प पञ्ज निपाद (व्यु प न) = $\frac{9}{4} \times \frac{3}{2} = \frac{27}{8}$ । इस प्रकार कटा-कड़ी

आगे बढ़ते जानेसे सभी स्वराका मान निकल आता है। रामामात्यने यथाथ कहा है कि इन स्वराकी प्रामाणिकताको कोइ 'अथवा नही कर सकता'। यहा तात्पर्य रामामात्यन 'न स्वशुद्धया प्रकल्पिता' का है। इस विधिमें प्रत्येक स्वरका मान निकालकर चित्रमें स्वराक साथ द दिया गया है।

चित्रक सभी स्वराके मानका मध्य सप्तममें लाकर नीच दिया जाता है—

स	गु र	गु ग	साधारण ग	च्युत मध्यम ग
१	$\frac{216}{81}$	$\frac{216}{72}$	३७	$\frac{216}{81}$
गु म च्युत पञ्चम म गु प			गु ध	गु न
$\frac{216}{96}$	$\frac{216}{96}$	$\frac{216}{72}$	३५	$\frac{216}{96}$
वैशिकी न च्युतपड्ज न			स	
१	$\frac{216}{72}$		२	

इनमें गु र और च्यु प म क दो दो मान है। गु र का पहला मान $\frac{216}{81}$ एक लीमा (२३ से) है और दूसरा $\frac{216}{72}$ एक एंपाटाम (२८ ६ सेवट) है। यह एक अक्ष स्वरका मान है। इसलिए $\frac{216}{81} = \frac{8}{3}$ लिया जा सकता है। इसी तरह च्यु प म का पहला मान $\frac{216}{96} = 2.25$ है और दूसरा मान $\frac{216}{72} = 3$ है। इसलिए इसका मान क्रमग $\frac{8}{3}$ और 3 लिये जा सकते हैं। इस सशोधनन बाद ऊपरका स्वर समुदाय इस प्रकार लिखा जायगा—

स	गु र	गु ग	सा ग	च्यु म ग	गु म
१	$\frac{216}{81}$	$\frac{216}{72}$	$\frac{216}{36}$	$\frac{216}{81}$	$\frac{216}{72}$
च्यु प म	गु प	शु ध	गु न	क न	च्यु प न
$\frac{216}{96}$	$\frac{216}{96}$	$\frac{216}{72}$	$\frac{216}{36}$	$\frac{216}{81}$	$\frac{216}{96}$
स					
२					

गु र और च्यु प म क दोना मानामें एक-एक कोमाका अन्तर है। इसका कारण यह है कि गु र ($\frac{8}{3}$) और च्यु प म ($\frac{8}{3}$) आराही

पञ्चम चक्रम निक्ला है और गु र ($\frac{3}{2} \frac{5}{4}$) और ध्यु प म ($\frac{5}{4}$)
 अवराही पञ्चम चक्रम । इन दो स्वरोंक दो-दो मानामें स कोई भा एक
 आवश्यकतानुसार प्रयागम भा सकता ह । किसी एक्को या ही ग्रामस
 निकाल देनेका कई कारण नही बयाकि रामामात्यके इस ग्राममें आरोही
 और अवराही लोना ही प्रकारक चक्रम निकले हुए स्वर मम्मिलित है—
 स स आरोही चक्रक $\frac{2}{1}$ $\frac{3}{2}$ $\frac{4}{3}$ $\frac{5}{4}$ और $\frac{3}{2} \frac{5}{4}$ ये पायथागोरसके ग्राम
 क स्वर तथा $\frac{4}{3}$ और $\frac{5}{4}$ ह और स म अवरोहा चक्रक $\frac{3}{2} \frac{5}{4}$ $\frac{3}{2}$, $\frac{5}{4}$,
 $\frac{3}{2}$, $\frac{1}{2}$ और $\frac{1}{2}$ ह । रामामात्यका गुद्ध ग्राम—

स	र	ग	म	प	ध	न	स
१	$\frac{3}{2} \frac{5}{4}$	$\frac{4}{3}$	$\frac{5}{4}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{1}{2}$	$\frac{3}{2}$	२

निकलता ह । यही र ध सवाक उददेश्यम र $\frac{3}{2}$ क बदल र $\frac{3}{2} \frac{5}{4}$
 रवा गया ह । इस गुद्ध मेलको मुखारी या बनकाङ्गी कहत ह । आधु
 निक दक्षिणात्य पञ्चतिमें भा सिद्धान्त रूपमें यही गुद्ध मल माना जाता
 ह । स्वयभू स्वरक सिद्धान्तपर इन १२ स्वराका निरूपण हुआ ह । इस
 समुदायमें रामामात्यद्वारा स्वोक्त अंतर गांधार और वाकली निपादका
 अस्तित्व नही पाया जाता । सम्भवत ये दा स्वर क्रमग प्रवृत्त ग ($\frac{5}{4}$) और
 इसका सवादी न ($\frac{1}{2}$) हैं । ये पञ्चमचक्र (आरोही और अवराहा)
 की प्रक्रियास नही निक्ल सकत । ये ता गांधार-सवा या पञ्चम आवस्तक
 के उपयागम ही पैदा हात हैं । इसलिए इनका रामामात्यक स्वर-समुदायमें
 नही पाया जाना आश्चर्यकी बात नही । इसीलिए उलान ध्यु म ग और
 ध्यु प न को इनका प्रतिनिधि मान लिा ह । पर इन दा स्वराका अभाव
 भी इस धारणाको पुष्ट करता ह कि स्वयभू स्वरका अथ चक्रिक क्रियास प्राप्त
 स्वर हा हैं । यदि स्वयभूका तात्पर्य रामस्वामीके कथनानुसार, उपस्वरास
 होता ता रामामात्य ग $\frac{5}{4}$ को कभी न छोडत बयाकि यह तारक उपस्वरम
 स्वभावत स्पष्ट पाया जाता ह । आधुनिक हिन्दुस्तानी म्वरोंस दक्षिणात्य
 स्वराकी तुलना नाचे दा जाती ह—

दाक्षिणात्य— स र ग म प घ न स

हिन्दुस्तानी— स र र म प घ घ स

इस ग्रामकी विशेषता यह है कि इसके दोना अगामें पहले लगातार दो अथ स्वर आते हैं फिर एक बड़ा अन्तराल $\frac{3}{2}$ (ग) का आता है । यह प्राचीन यूनानी अथ स्वरक जातिका ग्राम है (अनुच्छेद ६७) ।

१०८ यहाँ एक वानपर विचार करना आवश्यक है । रामामात्यने विकल्पम अपने गुरु र $\frac{3}{2}$ और ग $\frac{1}{2}$ का त्रिश्रुतिक र और पञ्चश्रुतिकर कहा है । उन्होंने ऐसा इसलिए किया है कि उनके मतानुसार यह ग्राम भरत गान्धर्वका गुरु ग्राम है । दाक्षिणात्य पण्डित आज भी इस बातको मानते हैं कि दाक्षिणात्य प्रचलित गुरु मेलमें ही भरत गान्धर्वका परम्परा पायी जाती है । पर भरतका जो पडज ग्राम पहले निर्धारित हुआ है उससे यह दाक्षिणात्य गुरुमेल बहुत ही भिन्न है । जिन आधुनिक दाक्षिणात्य विद्वानाने उपयुक्त भरत ग्रामको माना है और साथ-ही-साथ आधुनिक दाक्षिणात्य गुरु स्वरके ऊपर लिये हुए मानाका भी स्वीकार किया है वे भी यह धोषित करते हैं कि दाक्षिणात्य गुरुमेल प्राचीन भरत ग्राम ही है । यह प्रत्यक्ष विरोध मान्य नहीं हो सकता । भरत ग्राम दाक्षिणात्य गुरुमेलमें निस्सन्देह भिन्न है । इस विरोधकी आशङ्का ही कुछ दाक्षिणात्य पण्डिताने ग र का द्विश्रुतिक र, ग ग का चतुश्रुतिक र और साधारण ग का षटश्रुतिक र माना है । ऐसा माननेसे दाक्षिणात्य मेलका भरत-ग्रामसे विभिन्नता स्पष्ट हो जाती है । भरतक निर्देशानुसार म प और ग म अन्तराल समान है, जो चतुश्रुतिक माने गये हैं । कनकाङ्गा म ग म अन्तराल म-प अन्तरालमें बहुत बड़ा है । म म $\frac{3}{2}$ और म-प $\frac{1}{2}$ है । इस प्रत्यक्ष विरोधके कारण कनकाङ्गाका भरतका गुरु ग्राम मानना उचित नहीं है ।

दाक्षिणात्य ग्राम और गान्धर्व-ग्राममें समता स्पष्ट है । दाक्षिणात्य पद्धतिमें स्वराकी विकृति केवल वाद्योंका कारण होता है । इसका उत्तराय

पदतिसे यही भेद है जिममें विकृति तीव्रता और मद्धता दाना आर हान्ती है । दाक्षिणात्य पदतिमें स र और र-ग अन्तराल आध आध स्वरक है । इसलिये न तो 'र' को उतारा जा सकता और न ग का । क्याकि अत्र स्वरस छोटा अन्तराल समोतापयोगी नहीं होता । इसीलिए ऋषभकी विकृति चतु श्रुतिव या पञ्चश्रुतिव ऋषभमें और गाधारकी साधारण गाधार आदिम जाता है । पर तथ्य यह है कि दाक्षिणात्य पदतिमें र और घ का कोई विकृति नहीं हाती । चतु श्रुतिव र और पञ्चश्रुतिव र गुद्ध ग और साधारण ग क हा दूसरे नाम है । एस ही चतु श्रुतिव घ और पञ्चश्रुतिव घ गुद्ध न और कश्चिकी न स भिन्न नहीं है । यह मात विकल्प भिन्न भिन्न मलाकी रचनाके लिए काममें लाया जाता है (अनुच्छ १०५) । र स स और ग तथा घ स प और न एक-एक अत्र स्वरक अन्तरालपर है । इस तरह र और घ, दाना क्रमग स और ग तथा प और न क बीच एस फस है कि इधर उधर विचलित नहीं हो सकत । अर्थात् दाक्षिणात्य पदतिमें र और घ में काँ विकार नहीं हाता और ग और न की विकृति तादृशता आर होता है । शाङ्गदेवक गुद्ध ग्रामम भी र और घ अवल रहत है और ग और न तीव्रताकी आर विकृत हात है (अनुच्छ ९३) । इस समतास यह सिद्ध हाता है कि शाङ्ग देवका गुद्ध ग्राम दाक्षिणात्य गुद्ध ग्राम बनवाङ्गोस भिन्न नहीं था । अर्थात् दाक्षिणात्य गुद्धग्रामम भरतकी नहीं वरन शाङ्गदेवकी परम्परा पायी जाती है । शाङ्गदेवक पितामह भास्कर पण्डितका आदि निवास काभार था । पर आँका ये देवगिरिके यात्रव राजाके दरवारमें चल गये थे । शाङ्ग देवक यही तरहकी शास्त्रीक अन्तमें रत्नाकरका रचना की है । इसलिए इनका कर्नाटकी पदतिका विषयायक हाता स्वाभाविक है ।

१०६ सप्तहो शताब्दीमें वैकटमखान अपने ग्रन्थ चतुष्टय प्रकाशिकामें ७२ मेलका निरूपण किया है । उहान पाँच विकृत स्वर माने है, जस, साधारण गाधार (ग'), अन्तर गाधार (ग') बराहो मन्त्र (म'), कणिका निपाद (न') और काफलो निपाद (न') ।

इस प्रकार इनके ग्राममें १२ स्वराके स्थान ह । जमे—

स र ग ग' ग' म म' प ध न न' न' स ।

हिन्दुस्तानी स्वर सकेतके अनुसार इहें इस प्रकार लिखेंगे —

स र र ग ग म म' प ध व न न स ।

इनम ग जोर ग' तथा न और न क दो दो नाम ह जैसे, ग क शुद्ध गाधार और पञ्चश्रुतिक ऋपम, ग' क साधारण गाधार और पटश्रुतिक ऋपम, न के शुद्ध निपाद और पञ्चश्रुतिक धवत और न क कशिकी निपाद और पटश्रुतिक धवत । मेलम तीन प्रकारके ऋपना, गाधारा धवता और निपादाका भेद दिखानेके लिए वैकटमखीने इनक क्रमश र, रि रु, ग गि गु ध धि घु जोर न नि नु सकत मान है । जैसे—

(१) शुद्ध ऋपम	र	}	(३) साधारण गा धार	} गि
(२) शुद्ध गाधार	ग		पटश्रुतिक ऋपम	
पञ्चश्रुतिक ऋपम	रि	}	(४) अन्तर गाधार	गु
			(परिशिष्ट २ छ १)	

इन १२ स्वराम-स भिन्न भिन्न 'मैला का रचनाके लिए कोई ७ स्वर लिये जान ह जिनम स प जोर दा मे स एक म का होना आवश्यक ह । शेष चार स्वराम पूवाङ्ग और उत्तराङ्गके अवशिष्ट चार चार स्वरामें स कोई दो-दो सम्मिश्रित किये जाते ह । इस नियमक अनुसार यह गणितस सिद्ध किया जा सकता ह कि ७२ मैलसे अधिक नहीं बनाय जा सकत । यहा दृष्टा त रूपमें पूवाङ्ग (म-म) क ६ सम्भव समुदाय दिय जाते ह जिनम ऊपर वैकटमखीकी स्वर सना और नीचे हिन्दुस्तानी स्वर मनाका पवटार किया जाता ह । (परिशिष्ट २ छ २) जम—

(१) स	र	ग	म
	स	र	म
(२) स	र	ग'	म
	म	र	ग
(३) स	र	ग	म
	स	र	ग

(४)	स	ग	ग'	म
	स	र	ग'	म
(५)	स	ग	ग''	म
	स	र	ग	म
(६)	स	ग	ग''	म
	स	ग	ग	म

इसी प्रकार उत्तराङ्ग (प स) व भी ६ समुदाय बन सकते हैं । अथ पूर्वाङ्गवे ६ समुदायों से किसी एकको उत्तराङ्ग व किमी समुदायस जोड़ दिया जाय ता ७ स्वराका पूरा मेल तयार हो जाता ह । इस प्रकार पूर्वाङ्ग व एक एक समुदायस छट छट मल तयार हाते हैं और इस तरह गुद्ध म बाल मलाका कुल सख्या ३६ होनी ह । फिर इसी क्रियास तीस म बाल मलाकी सख्या ३६ हागी अतएव मलाकी चरम सख्या ७२ हागा । बेंकट मयान इन ७२ मलकताओकी भिन्न भिन्न सजाव दा ह जिनमें अब कुछ परिवर्तन हुआ ह । (परिशिष्ट १ क)

इन ७२ मेलका रचना बेंकटमखीन बबल गणितज्ञ बीतूहल्की तप्लि के लिए नहीं की थी । इन मलाक आधारपर अनक नय रागाकी रचनाएँ भी हुई जो आज भी प्रचारम पाव जात ह यद्यपि सभा मल वाममें नहीं आत (परिशिष्ट २६३) ।

यह माना जाता ह कि यह ७२ मलकताओकी व्यवस्था बेंकटमखीकी हा उद्भावना ह । पर १९३४ ई० में मद्रास म्युजिक एक्डमीक सम्मलन म इन्डोरके नासिह्दोन खान बताया था कि मह पद्धति बेंकटमलास प्रोप ३०० वष पत्त भी प्रचलित थी । प्रमाणमें उान बजुनायकक चार ध्रुपद बताय जिनम ७२ मेलकताओक नाम आय ह ।

१ गया जान पड़ता है कि बरुमखाने उत्तराय संगीतकी भा शिक्षा ग्रहण का थी । वे अपने गुरुका नाम 'तानप्पा' बतात हैं (परिशिष्ट २ छ ४) । मम्मन है कि ये तानप्पा तानसन हा हों । इसका पुष्टि इस बातस भा हाता है कि बेंकटमखान गोपाल नायककी दा स्थानामें चचा की ह जो तानसनकी गुरु परम्पराक आदि आचार्य थे (परिशिष्ट २ छ ५) ।

[ख] उत्तरीय पद्धति

११० मध्यकालीन उत्तरीय पद्धतिके प्रतिनिधि अहोबल, हृदयनारायण, लोचन और श्रीनिवास समझे जाते हैं जो प्रायः समकालीन हैं। इनके यथाक्रमशः सगीतपारिजात, हृदयकीतुक, रागतरंगिणी और रागतत्त्व विभाग हैं। इनमें अहोबल प्रमुख मान जाते हैं क्योंकि अथ यथाकार इही क अनुयायी हैं।

इस युगकी उत्तरीय पद्धतिमें भी वे सारे परिवर्तन पाये जाते हैं जिनका प्रसंग पीछे दाम्बिणात्य पद्धतिमें आ चुका है। बल्कि रत्नाकरकी पद्धतिमें जिन परिवर्तनाका दाम्बिणात्य पण्डिताने सकोचके साथ ग्रहण किया है, अहोबल आदिने उनका निश्चयके साथ निरूपण किया है। जस, व्यवहार में पञ्चम और षड्जको नियत स्वर मानकर भी रामामात्यने स्वर-सप्तमों च्युत षड्ज न और च्युत पञ्चम म का प्रयोग किया है। ऐसे ही सोमनाथने यह बताकर भी कि पञ्चमकी विकृति नहीं होती, मडु प' का व्यवहार किया है। अहोबल आदिकी पद्धतिमें पञ्चमको कोई भी विकृति नहीं पायी जाती।

१११ भरतक निर्रेशके अनुसार ही अहोबलने भाग्रामके स्वरां पञ्ज-पञ्चम सवादको महत्त्व दिया है। वे कहते हैं—“पञ्ज-पञ्चमभावेन पञ्जनेया स्वरा बुधैः।” अर्थात् बुद्धिमान पञ्जग्राममें पञ्ज-पञ्चम भावस स्वराको जानते हैं। इस स्पष्ट करते हुए श्रीनिवासने कहा है—

“सपयो रिधयोश्चैव तथैव गनिपात्यो ।

सवात् समतो लोका मसयो स्वरयोमिध ॥”

यहाँ मन्स में पञ्ज पञ्चम भाव निर्धारित होनेसे यह सिद्ध है कि अहोबल श्रीनिवासका ग्राम आठ स्वरावाला अष्टक था, न कि सात-स्वरावाला सप्तक। इसका निष्कर्ष यह है कि ये भी स्वरके साथ स्थानकी धारणा मानते थे अंतरालकी नहीं। यह सामान्य अनुभवकी बात है कि ८ सप्तमात्रे

धीच ० ट्रां होते हैं । अब यदि इस सार क्षेत्रको द्वारासे व्यक्त करें तो ७ मानना पडेगा और यदि सम्भसे व्यक्त करें तो ८ मानना पड़ेगा । भरत शास्त्रदेवके स्वरकी तुलना द्वारासे भी जा सकती है और मध्यवालीन स्वर को सम्भसे ।

११२ अहोबल श्रीनिवामने १२ मुख्य स्वर माने हैं—७ गुड और ५ विवृत । इहा स्वराकी श्रुतियाका साधक मानकर इहान गण १० श्रुतियाका निराकरण किया है । श्रीनिवासन साक तौरसे कहा है—

“श्रुतयो द्वादशैवाग्र स्वरस्थानतयादिता ।
सथोक्तवारिता सर्वा स्वरस्थानतयादिशेत् ॥”

अहोबलन गौण रूपम अतिविवृत स्वराका भी कहा है—यहाँतक कि उहाने २२ को २२ श्रुतियाका उपयोग किया है और विकल्प रूपम स्वरक कोमल और तीव्र दोनों ही भेदाका निरूपण किया है । यह अहोबलनकी विशेषता है । इनके स्वर ये हैं—

स, पूव र कामल र, गुड र (पूव ग), कामल ग (तीव्र र), गुड ग (तीव्रतर र) तीव्र ग, तीव्रतर ग, तीव्रतम ग, दण्ड म (अति तीव्रतम ग), तीव्र म, तीव्रतर म, तीव्रतम म, गुड प पूव ध, कोमल ध, गुड ध (पूव न), कामल न (तीव्र ध) गुड न (तीव्रतर ध) तीव्र न, तीव्रतर न, तीव्रतम न ।

यहाँ यह देवनेम आता है कि अहोबलन भरतके स्वराका श्रुतिमान ज्योका त्या रसा है ।

विवृत स्वराका बहूनरी अहोबली सनाका व्यवहार आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीतमें भी होता है । अतितीव्रतम और पूव, ये सनाए प्रचारम नहीं है । ऊँचाईकी निशामें तीव्र तीव्रतर और तीव्रतम तथा निचाईकी निशामें, कोमल, अतिकोमल और सहकार माने जाते हैं ।

११३ अहोबलने भारतीय संगीतम पहले पहल तारकी लम्बाईसे स्वराका मान निणय किया ह । इमम स देह नही कि अहाबल और उनके अनुयायी पण्डिताने इस विधिको महत्त्व नही दिया ह । थानिवासने कहा ह कि "यह विधि उनके लिए बताया गयी है जिन्हें स्वरज्ञान नही ह । स्वर स्थापनाका असल साधन ता स्वर सवादित्वका ज्ञान ह ।"^१ पर ऐतिहासिक दृष्टिसे अब इसका मूल्य बहुत अधिक ह । क्याकि इसीसे मध्यकालीन स्वर ग्रामका पता निश्चित रूपसे मिलता ह । प्राचीन कालमें पाययागारसने इस साधनका उपयोग किया था ।

यह विधि पूरी तरह वचानिक आधारपर अवगम्बित ह । यह बताया गया है कि तारकी लम्बाई और उसकी जावत्तिमें व्युत्क्रम (उलटा) अनुपातका सम्बन्ध ह (अनुच्छेद १२) और दो नादाका अन्तराल उनकी आवृत्तियांके अनुपातसे मापा जाता ह । इसलिए स्वराका निर्धारण तारकी लम्बाईमें सट्टज हो जाता ह ।

अहाबलके आदर्शानुसार वीणाके पूरे तार (स) के आधेपर तार स (स) और दाना स के बीच म होना चाहिए । पूरे तारकी त्रिभाग करके पहले भागपर प, स और प के बीच ग और स प को त्रिभाग करके पहले भागपर र की स्थापना हानी चाहिए । फिर प और स क मय दशमें ध और प स का त्रिभाग करके अंतिम भागपर न की स्थिति हानी चाहिए (परिगण्ट २ ज०) । ये अहाबलके शुद्धस्वर ह । श्रीनिवासन भी बिलकुल यहा व्यवस्था बताया ह । स्वराकी यह व्यवस्था तारकी पूरी लम्बाई ३६ इञ्च मानकर, लम्बाईक अंश और मान तथा अंतरालक माप चित्रम दिखायी जाती ह—

१—' स्वरज्ञानविहीनेभ्यो मार्गोऽथ दर्शितो मया ।

स्वरसवादिताज्ञान स्वरस्थापनकारणम् ॥”

स्वर	अन्तराल	अंश	लम्बाई
स	१ (०)	१	३६ इञ्च
र	← ३ (५१ से)	६	→ ३२
ग	← ६ (७९)	९	→ ३०
म	← ५ (१२५)	३	→ २७
प	← ३ (१७६)	३	→ २४
ध	← ३ (२२७)	३	→ २१ १/२
न	← ६ (२५५)	६	→ २०
म	← २ (३०१)	३	→ १८

यहाँ धवतका स्थान शास्त्र बचनकी अष्टम विवादग्रस्त है। अहाबल तो ध की स्थिति स प के 'मध्यदेश' या क्षेत्रमें बतायी है पर थीनिवासने स्पष्ट कहा है कि 'पञ्चमोत्तरपट्ट्यात्पमध्य धैरतमाचरत्'। अब यदि धवतको स-प क बीचोबीच मानें तो इसकी लम्बाई २१ इञ्च और अन्तराल $\frac{3}{2}$ या $\frac{3}{2}$ निकलता है। इस धवतका अन्तराल प से $\frac{3}{2}$ या ५८ से है। यह अन्तराल अनात नहीं है और न असगत है। यह सप्तम आवृत्तकसे बना है और 'बहुत्स्वर' के नामसे इसका प्रयोग अरबी और प्राचीन यूनानी सगीतमें हुआ है। हिन्दुस्तानी सगीत भी सप्तम आवृत्तकम अपरिचित नहीं है। पर यहाँ यह अहाबल आदिक मान हुए पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गके सवाण सिद्धान्तके विरुद्ध पड़ता है।

इसीलिए आधुनिक पण्डिताने र घ सवाके आधारपर ध का मान $\frac{3}{2}$ माना है ।

यह अहावल आदिका गुड ग्राम आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिका काफी ठाठ या दक्षिणात्य पद्धतिका खरहरप्रियमेल है ।

यहां यह एक ध्यान देनेकी बात है कि एक ओर रामामात्य आदि दक्षिणात्य पण्डिताने अपने गुड र $\frac{3}{2}$ को त्रिश्रुतिक माना है और दूसरी ओर अहोवल आदिने भी अपने शुद्ध र $\frac{3}{2}$ का त्रिश्रुतिक माना है । इसमें दोनों पद्धतियाके पण्डितोंका भरत परम्पराका अक्षुण्ण रखनेका आग्रह दोख पडता है । पर विचारसे यह जान पन्ता है कि भरतका शुद्ध ग्राम अहावल के गुड ग्राममें ही रक्षित है । भरत ग्राम अवरोही है इसलिए उसमें नियत और प्रकृत स्वराको छोड़, चल स्वराका एक-एक श्रुति उतर जाना स्वाभाविक है । पर आरोही क्रमका प्रचार होते ही भरत-ग्रामका काफी ठाठमें बल्ल जाना अनिवाय है । यह प्रत्यक्ष है कि भरतके स्वर-ग्रामको ही आरोही क्रमम व्यक्त करनेसे अहोवलका गुड ग्राम निकल आता है ।
जस —

$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$							
~~~~~														
भरत—म	४	न	२	घ	३	प	४	म	४	ग	२	र	३	स
अहोवल—स	४	र	२	ग	३	म	४	प	४	ध	२	न	३	स
१	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$
~~~~~														
$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$	$\frac{3}{2}$							

इस विचारसे यह परिणाम निकलता है कि व्यावहारिक रूपमें भरतका ग्राम उत्तरमें ही जीबिन रहा है दक्षिणमें नहीं । इतना ही नहीं, भरतने जो षड्ज-पञ्चम मवादको महत्त्व दिया था उसको प्रतिष्ठा उत्तराय पद्धति में जितनी दृढ़ दीख पडती है उतनी दक्षिणात्य पद्धतिमें नहीं ।

गुद्ध स्वराको भीति ही विकृत स्वराका स्थान निरूपण भी धोणाक तारक द्वारा हा किया गया ह । नीच श्रीनिवासक निर्देशानुसार (परिशिष्ट २ हा) विकृत स्वराका मान लिया जाता ह—

सारिणी १५

स्वर	तारकी लम्बाई (इञ्च)	अन्तराल
रू	३३ $\frac{३}{४}$	$\frac{३३}{३२} \rightarrow$ ३४ स
ग	(क) (घ $२१\frac{३}{४}$) \rightarrow २८ $\frac{३}{४}$	$\frac{२८}{२७} \rightarrow$ ९९ "
म'	(ख) (घ २१) \rightarrow २८ $\frac{१}{२}$	$\frac{२८}{२७} \rightarrow$ १०१ "
	(क) (ग' २८ $\frac{३}{४}$) \rightarrow २५ $\frac{३}{४}$	$\frac{२५}{२४} \rightarrow$ १५६ "
ध	(ग) (ग' २८ $\frac{१}{२}$) \rightarrow २५	$\frac{२५}{२४} \rightarrow$ १५८ ,
		$\frac{२५}{२४} \rightarrow$ १९४ ,
	न'	(क) (घ $२१\frac{३}{४}$) \rightarrow १९ $\frac{३}{४}$
	(ख) (घ २१) \rightarrow १९	$\frac{१९}{१८} \rightarrow$ २७९ ,

यहाँ ग', म और न क (क) और (ख), य दा दो भेद दिए गए ह । इनम (क) ऋषभ मवाणी अनुमित धवतके और (ख) श्रीनिवासमाक धवतक आधारपर निकाला गया ह । दोनों ग' ब्रमश दोना न क सवादो ह । म' (ख) का र क साथ म'यम सवाद ह । पर रू और ध में सवाद नहा होख पडता । विकृत स्वराक नियम श्रीनिवासन सम्भरत स्वराक परम्परागत श्रुतिमानका ध्यान रखा ह । सर क्षेत्रको त्रिभाग करनक आदशस ही यह जान पडना ह । पर मुरय बात यह ह कि इस प्रबन्धका उद्देश्य 'स्वरानां विहीन' यकितयाका माग लिखाना ह । इसलिए स्वराके मानम त्रुटि होनपर भी तारक सरल अशापर ध्यान रखा गया ह । इस स्वभावत श्रीनिवासके वचनस

मध्यकालीन स्वर ग्राम

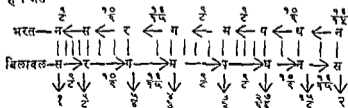
निर्दिष्ट स्वर अपेक्षाकृत अधिक इष्ट हो गये ह। पर श्रीनिवासन पूवाङ्ग-उत्तराङ्ग सवादकी अवना नही की। इन स्वराके निर्देशके बाद वे कहते ह कि 'उन स्थानपर स्थित शुद्ध-कोमल स्वरामें यदि परस्पर सवाद न होतो चतुराको चाहिए कि स्वराको एक यव या आधा यव उतार दें।' यहाँ यह भी ध्यान देनेकी बात ह कि श्रीनिवासने सवादित्वके लिए स्वराको उतारनेकी बात कही ह, चढानेकी नहीं। इससे सिद्ध ह कि वे अपने धवत को चढा हुआ समझते थे अतः उसके आधारपर निर्दिष्ट स्वराको भी चढा हुआ मानते थे। इसलिए ऊपरके स्वराके (क) भेदको ही ग्रहण करना उचित ह। ऐसा करनेमें श्रीनिवासका गाधार ऋगमग प्रकृत ग (५) हा जाता ह। धू की भी र के सवादसे निकालनेपर इसकी लम्बाई २२ = क बदले २२ $\frac{3}{4}$ इ हो जाती ह।

११४ उत्तरमें रागाका वर्गीकरण उतना नियमित नही दोख पडता जितना दक्षिणमें। जनकमेलकी धारणा उत्तरके मध्यकालीन पण्डिताकी पद्धतिमें नहीं पायी जाती। जहाँरूने मेलाका वणन स्वराके सम्यान विशेषके ही अर्थमें किया ह पर इसका उपयोग वर्गीकरणमें नहीं किया। उहान ओडव पाडव सम्पूर्ण भेदम मेलाकी ११३४० सख्या बतायी ह जिससे स्पष्ट ह कि उनके मेल और रागमें कोई अंतर नही था। श्रीनिवास भी इसी मागपर चल ह। लोचन और हृदयनारायणने १२ राग सस्थितिपाकी चर्चा की ह जा जनकमेलकी छोटक है। उहान रागिनियाका भी प्रसंग दिया ह। फिर भी उत्तरके पण्डिताने इस दिगामें कोई नियमित, सवमाय पद्धतिका निरूपण नही किया ह।

११५ सम्भवत इसी युगमें अहोबल आदिकी शास्त्रीय पद्धतिक साथ साथ उत्तराखण्डमें एक दूसरी धारा भी चल रही थी। उहान बताया गया ह कि अहोबल आदिका शुद्ध मेल आधुनिक काफ़ी ठ

१ सवादिनी न चेतुस्तस्थानगौ शुद्धकोमलौ।
तौ यवाधयवाभ्या या कार्यौ न्यूनी त्रिचक्षणौ ॥

उसी समय प्रचारम बिलावल ठाठ, शुद्ध मेलके रूपमें, आ गया था। शायद इसक प्रवक्तक अमीर खुसरू ह जिनके द्वारा उत्तरीय संगीतपर फारसी संगीतका प्रभाव पडा। जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि शुद्ध मेलमें यह परिवर्तन पाश्चात्य मुसलमानों संस्कृतिके सपनसे ही हुआ। यूनानी पायथागोरसका ग्राम और अरबी फारसी ग्राम सदासे आधुनिक बिलावल ठाठ-जसा ही रहा है। आधुनिक पाश्चात्य गुरु ग्राम भी पायथागोरसकी परम्परासे ही पदा हुआ ह। पर ऐसा जान पडता है कि फारसी संगीतका प्रभाव केवल शुद्ध मेलक सस्यानपर ही पडा। और बाताम उत्तरीय संगीत पद्धति पूरी तरह भारतीय बनी रही। बल्कि या कहना चाहिए कि मध्य कालीन मुसलमान गायका और नायकान भारताय संस्कारको बनाय रखा। यह हम बातस प्रकट होता ह कि मुसलमान शास्त्रकारान भी इस शुद्ध ग्रामको फारसी संगीतसे नहीं जाडकर भरत पद्धतिके आधारपर ही इसका निरूपण किया ह। भरतका ग्राम अवरोही होनेसे प्रत्येक स्वरकी ध्रुतियाँ नीचेकी ओर चलती हैं। अब यदि स्वराका ध्रुतिमान भरतके आशानुसार ही मानकर केवल प्रत्येक स्वरकी ध्रुतियाँ ऊपरकी ओर जाता हुआ मानें तो बिलावल ठाठका रचना हाती ह। पडजकी तीस कुमुदती, मदा और छन्दोवती ये चार ध्रुतियाँ मानो जाती हैं जो उत्तरोत्तर ऊँची होती जानी ह। भरत गान्धर्वा देवक पडजका स्थान छान्दोवतीपर है। पर यदि पडजका ताप्रापर मान लें और इसी तरह और स्वराके स्थानको निम्नतम ध्रुतिपर मान तो भरतका ग्राम आपस आप बिलावल ठाठम बदल जाता ह। जैसे—



यह भी कहा जा सकता है कि यह बिलावली गुद्ध ग्राम भरतके पड्ड ग्रामकी नयादी या रजनी मूच्छना है ।

इस प्रकार यह देखा जाता है कि यह गुद्ध ग्रामविशेष जो फारसी संगीतक सम्पर्कसे ही हिन्दुस्तानी संगीतम आया था भारतीय परम्परा बनाये रखनेके लिए भरतकी पद्धतिसे जोड़ दिया गया है । यह ग्राम हरिनास-तानसेनके समयमें भी प्रचलित था । पीछे उत्तरीय संगीतकी बहुत मो गटबन्धियाकी दूर करनेके लिए जयपुरके महाराज प्रतापसिंह देवने (१७७९-१८०१ ई) संगीत-पण्डितोंका एक सम्मेलन किया जिसके विचार विनिमयके फलस्वरूप संगीत मार ग्रन्थकी रचना हुई । इस ग्रन्थम बिलावली ग्रामको ही गुद्ध ग्राम माना गया है । फिर १८१३ ई म पटना निवासी महम्मद रजाने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'नगमात आसफी' की रचना की, जिसका गुद्ध ग्राम बिलावल ही है ।

आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिमें भी बिलावल ठाठकी ही गुद्ध ग्राम माना जाता है । पर मरुप बात यह है कि गुद्ध ग्रामके प्रबन्धमें यह परिवर्तन अहोबल आदिके समयमें ही सम्पन्न हो गया था ।

११६ जम मध्यकालके प्रचलित संगीतम अणोवली ग्राममें भिन्न बिलावली गुद्ध ग्राम चल रहा था वैसे ही रागाक वर्गीकरणकी भी मेलकर्तास भिन्न राग रागिनीकी प्रणाली चल रही थी । इस प्रणालीका सामान्य प्रबन्ध था सभी रागाकी ६ पुरुष रागा, ३० या ३६ रागिनिया और उनके पुत्रा तथा पुत्रभायाआम बाटना । इस प्रणालीके भी कई मत थे जैसे—शिव मत, वृणमत, भरतमत, हनुमानमत, कल्लिनायमत, सोमेश्वरमत, इन्द्र प्रमथमत इत्यादि । पर इनमेंम भरत और हनुमानमतका ही प्रचार अधिक रहा है । आधुनिक कालमें हनुमानमत ही माना जाता है ।

संगीत-दपणकार दामोदरने (१६२५ ई०) वर्गीकरणकी इस प्रणाली का प्रसंग दिया है । उहाँन तीन मताकी चर्चा की है । जस—

- (क) शिवमत—६ राग और ३६ रागिनियाँ ।
- (१) श्रीराग—मालश्री, त्रिवणी, गौरी, बदारी, मधुमाधवी, पहाडिका ।
- (२) वसन्त—दगो, देवगिरी, वराटी, टोडिका, ललिता, हिन्दाली ।
- (३) भरव—भरवी, गुजरी, रामकिरी, गुणकिरी बगाली, सघवी ।
- (४) पञ्चम—विभाषा, भूपाली, कर्णाटी, नटहसिका, मालवी, पट मञ्जरी ।
- (५) मेघ—मल्लारी सारठी, गावरी, बीगिनी, गाघारी, हरश्रृङ्गारा ।
- (६) बहनाट—कामोदी, कयाणी अमौरी नाटिका, सारणी, नट्टम्बोरा (या नटनारायण) ।
- (ख) रागाणव—६ राग और ३० रागिनियाँ ।
- (१) भरव—बगाली, गुणकिरी, मध्यमादि, वसत, घनात्री ।
- (२) पञ्चम—ललिता, गुजरी दगा, बराडी, रामक्री ।
- (३) नाट—नट्टनारायण, गाघार सालग, बदार कणाट ।
- (४) मालार—मेघमल्लारिका, मालकीणिक, पटमञ्जरी, आगावरी ।
- (५) गौडमालव—हिंदोल त्रिवण, गाघारी, गौरा, पटहसिका ।
- (६) दश (दशाक्ष्य)—भूपाली, कुडाली, कामादी नाटिका बेलावली ।
- (ग) हनुमानमत—६ राग और ३० रागिनियाँ ।
- (१) भरव—मध्यमादि, भरवा बगाली, बराटिका, सघव ।
- (२) कौशिक—तोडी, खम्बावती, गौरी गुणव्री, ककुभा ।
- (३) हिन्दोल—बेलावली रामकिरी दशाक्ष्या, पटमञ्जरी, ललिता ।
- (४) दीपक—केदारी, कानडा, दगो, कामोती, नाटिका ।
- (५) श्री—वामती, मालवी, मालश्री, घनासिक, आशावरी ।
- (६) मेघ—मल्लारी, दशकारी, भूपाली, गुजरी, टड्का ।
- राग निरूपण' में, जिसक प्रणेता नारद कहे जाते ह दसपुराग और हर-एककी पाँच पाँच स्त्रियाँ, चार-चार कुमार और चार चार स्तुपाएँ बतायी गयी ह । इस प्रकार १४० रागके नाम आवे ह । इन दस रागामें

६ ता हनुमानमतके और गेप चार वसन्त, पञ्चम, नटनारायण और हमक ह । इन चाराम-स तीन उपर आ चुके ह । पर इन सभीकी स्त्रिया उपयुक्त रागिनी विभागस भिन्न ह ।

ये वर्गीकरण प्रनिनिधि रूपस दिय गये ह । इस याड उदाहरणास ही यह सिद्ध हो जाता ह कि उत्तरीय पद्धतिमे वर्गीकरण विषयक किनने मत मनान्तर प्रचलित थे । फिर किमी भी वर्गीकरणका कोई नियमित आधार नही जान पड़ता है ।

जा हा, पर हनुमानमतकी परम्परा प्राचीन कालस आज तक चली आया ह । प्राचीन पद्धतिमे हिन्दू मुसलमान गायक आज भी इसी वर्गीकरणको मान रखते ह । उनके लिए परिवार महित थे छठ राग स्थूल ऐतिहासिक मध्य है जिनमे नियम या रीति नीति डैल निकालनकी उहे आकाशा नही होती । भरवरागकी मध्यमादि भरवी आदि रागिनिया क्या ह, यह प्रश्न उनके लिए उतना ही असगत ह जितना यह प्रश्न कि दुष्यत की रानी दमयंती क्यों हुई । इन रागाक माध युग-युगका प्रभाव ह, महिमा है, साम्प्रकारिक इतिहास ह—वस ही जम पौराणिक महापुष्पाक साथ ह । इसीलिए एक विन्ध्य कलाकारक द्वारा इन रागाक प्रस्तारमे इतनी श्रद्धा भक्तिका गाम्भीर्य प्रकट होता ह । दा गानमें कह सकते ह इस वर्गीकरणका आधार पौराणिक ह, वचानिक नही ।

इन रागामें एक बात देखनेमे आती ह । इनकी स्वर रचनापर विचार करकेस पता चलता ह कि इनमे कौणिक (मालकास), हिंदाळ और मेघ ता निश्चय ही ओडव जातिक ह । आ ओडव सम्पूर्ण ह, और भरवका भा पहल ओडव ही नाना जाता था । जा हा, आ और भरवमे काल ऋषभ और तीव्र गाधारके प्रयोगस रू-ग अंतराल, वम ही घ-न अन्तराल, बहुत बढा हा जाता ह । दीपक लुप्त समझा जाता ह । पर दीपककी जो एक-दो चीजें बतायी जाती हैं उनमें भी र-ग और घ-न अन्तरालका प्रयोग होता ह । ऊपरके ओडव रागामें भी वजित स्वरक कारण बड अन्त

राल पदा हा जाते ह । यह सामान्य अनुभवकी बात ह कि इस प्रकारका बडा अंतराल शान्त रसको प्रस्फुटित करता ह । इस बातम इन छह रागा की गति एक सी ह । इन रागाकी आठव प्रवृत्तिसे यह भा धारणा होनी ह कि सम्भवत उत्पत्तिकी दृष्टिसे रागाका काल पहले हो ।



[क] स्वरित

११७ आधुनिक भारतीय सगीतका, विशेष रूपसे उत्तरीय सगीतका आधार 'स्वरित' है। इसे उत्तरके गवये 'सुर' या 'खरज' (पडज) कहते हैं, दक्षिणके गवये 'श्रुति' कहते हैं। पाश्चात्य विद्वानाको यह धारणा है कि एक कण्ठ सगीतमें स्वरितको चेतना बड़ी दुबल होती है। हेमहाजके ऐसे ही विचार थे। यह बात चाहे प्राचीन ग्राम्य सगीताके लिए ठीक हो पर कलापण, सांस्कृतिक भारतीय सगीतके लिए बिल्कुल गलत है। बल्कि बान उलटी है। हिन्दुस्तानी सगीतमें स्वरितका अधिकार जितना प्रबल स्पष्ट और अनिवार्य है उतना पाश्चात्य सगीतमें नहीं। पाश्चात्य संहति सगीतमें स्वर सघाताका प्रयोग होता है जिनकी रचना और गुण उन सघाताके 'टोनिक' या स्वरितपर निर्भर है। गायक इसीलिए पाश्चात्य विद्वानाका ऐसी धारणा हुई जो कि जहाँ संहति-सगीतका प्रचार नहीं वहाँ टोनिकको प्रधानता नहीं दी जाती। पर संहतिमें जो स्वर सघाताके प्रयोगस तीन भिन्न भिन्न स्वराका एक साथ ही उच्चारण होता है। इसलिए स्वराके समूहमें से स्वरितका चुन लेना इतना आसान नहीं होता। इसमें स्वराका सम्बन्ध प्रत्यक्ष होनेपर भी स्पष्ट नहीं होता। इसके विपरीत, जहाँ स्वराका उच्चारण एकके-बाद एक होता है वहाँ स्वराके सम्बन्धकी अनुभूति म्यक्तिक द्वारा होनेसे पराम्प होती है पर यह अनुभूति बड़ी ही स्पष्ट है। और यह स्पष्टता स्वरितके ऋड सस्कारपर ही निर्भर है। फिर संहतिकी पद्धतिमें स्वरिनान्तरकी मुक्तिका प्रयोग होनेसे आधारस्वरितकी प्रधानता नष्ट रहन पाती। इसलिए मुख्य स्वरितको चेतय रखनेके लिए आधार स्वर-सघातका बार-बार उपयोग होता है। भारतीय सगीतमें यह उपद्रव

नही होना । इसमें तो स्वरितका उच्चारण लगातार जाता रहता है जिससे तब तो स्वरित भ्रष्ट होना पाना और न दूसरे स्वर अपने उपयुक्त म्यानम विचलित होने पाते । स्वरितक सतत चैतन्य रहनाम अथ स्वराका स्वरितक सम्बन्ध भी बहुत ही स्पष्ट बना रहता है ।

स्वरितकी एगो ऋध धारणा आधुनिक संगीतकी विगणना ह, पर इसका विकास भरत-नालस ही हाता चला आया ह । पिछल अध्यायमें यह बताया जा चुका ह कि जस-जस स्वरितकी धारणा प्रबल होती गयी ह वम-ही-वस स्वरका अथ और ग्रामका सस्थान भी बदलना चला गया ह । ग्रामक प्रथम स्वरकी पडज गणना ही संगीतक आम्बिकामें भी स्वरितके अस्तित्वका पता चाना ह । इमोजिण आज भी उत्तरज स्वरितक अथमें ही प्रयुक्त होता है । प्राचीन कान्ये ही संगीत शिक्षाकी यह प्रथा ह कि शिक्षार्थी महीना तक 'पञ्जसाधन' करता ह । इसकी विधि यह ह कि शिक्षार्थी अपनी आवाजका एक स्थानपर बाँध लगातार स्वरका उच्चारण करता ह जिससे धीरे धीरे वह स्वर उमक न्येमें बठ जाता ह । कहा उसक कण्ठका स्वरित या 'पडज' हाता ह ।

११८ आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीतम स्वरितकी इतनी प्रधानता है कि कोइ भी सस्कारी संगीत इसक बिना नही हाता । गान हो या वाद्य, स्वरितकी लगातार संगति आवश्यक ह (अनुच्छे ८८) । शहनाई या बासुरीके गिरोहमें भी एक सुर भरनवाला अवश्य रहता ह । यहाँतक कि तबला या पल्लावज भी सुरमें मिला रहता ह जो स्वरितका काम देता ह । पर उत्तरज स्वरितकी संगतिक जिण सबसे मुख्य बाजा तमूरा ह । उत्तरके गवयाक लिण इसका अग्रहार अनिवाय ह । कुछ लोगोंने मत ह कि यह पौराणिक गायक तुम्बरू गंधवका आविष्कार ह । पर प्राचीन ग्राममें इसका चर्चा नहीं पायी जाती । यह भी हा सकता ह कि यह खुरामानी तम्बूरका ही (मुसलमानी कालमें आया हुआ) रूपांतर हो । पर खुरामानी तम्बूरमें बीणाकी तरह ग्रामक स्वर बंधे हाते ह और इसलिए

इसका उपयोग रागके लिए होता है, स्वरितकी संगतिके लिए नहीं। इससे तो यही मानना पड़ता है कि यह हिन्दुस्तानी संगीतका मन्थयुगीय आविष्कार है। यह सम्भव है कि इसका नाम सुरासानी तम्बूरके ही तौलपर रखा गया है। इस बाजेमें जवारीका प्रयाग जो प्राचीन वाद्यक 'जीवा' का ही स्वरूप है इसकी भारतीय परम्पराको प्रमाणित करता है। इस यंत्रका प्रधान अंग लोकीका तूमा होता है। सम्भव है इसीमें इस बाजेका नाम तमूरा पड़ा है। ऐतिहासिक दृष्टिमें तमूरा एकतारका विकसित रूप है। जिसका आज भी निगुण गानेवाले गोमाई स्वरित और लयन लिए व्यवहार करते हैं।

तमूरमें चार तार हाते हैं जिनमें पहला मद्र पञ्चम (प) म चौथा मद्र पञ्ज (स) में और बीचके दोना तार मध्य पडज (स) में मिले हाते हैं। इस पञ्चम मेल कहते हैं। कभी कभी प' वाल तारको 'म' में मिलाकर मध्यममेल का उपयोग किया जाता है। पर ऐसा उपयोग उही रागाक साथ हाता है जिनमें पञ्चम वजित हो और शुद्ध मध्यमका प्रयोग हो। व्यापक रूपसे ऐसी अवस्थाम भी पञ्चम मेलका ही व्यवहार हाता है क्योंकि 'प स योग मध्यमका ही संस्कार पञ्ज करता है। पञ्चम वजित म' वाले रागाम भी यहाँ मेल काम आता है। यही पञ्चम म' क स्थान निणयमें सहायक हाता है। इसलिए पञ्चम मेल ही प्रधान हानस इसपर थोडा विचार करना आवश्यक है।

प्राचीन कालमें प्रत्येक वीणामें जीवाका प्रयाग होता था। अब यह 'जवारी' क नामसे सिर्फ तमूरमें ही लगायी जाती है। तमूरमें चार तार नीचे तूमेपर बढाया हुई लकड़ी या हड्डीकी धोटीपर हाकर आते हैं। उस धोटीपर ताराक नीचे राग या ऊनके धागे लगा दिये जाते हैं जो ताराक लिए गद्दीका काम देते हैं। इस ऊन या रेशमके धागेकी ही 'जवारी' कहते हैं। इसके कारण तार धोटीकी कोरसे कुछ उठ जाना है। परिणाम यह होता है कि जब तार छेदनेपर काँपता है तो धोटीकी कोरपर टाकर

छाता ह । या ठोकर यदि तारम ठीक उस समय लगे जब वह कम्पनम अपनी दिशा बदलता ह तो कम्पनका विस्तार बढ़ता जायगा और ठोकरसे बार बार नयी शक्ति मिलत रहनेसे कम्पन दर तक होता रहेगा (अनुच्छेद ३७) । इस ही प्राचीन शास्त्रकारान स्वरका 'अनुरणनात्मकत्व' गुण कहा ह । ठोकरका विस्तारके अन्तमें लगना अर्थात् ठाकरकी आवृत्ति और कम्पनकी आवृत्तिका एक हाना आवश्यक ह, इसीसे घोड़ीके सार तलपर एक ही स्थान ऐसा ह जहा जवारी ठाक बठती ह । तमूरा मिलानेवाल्को जवारी घीर घीर खिसकाकर उस स्थानपर लाना होता ह । उस स्थानपर जवारीके पहुँचते ही तारम भन्नाहट होन लगती ह । जवारी न हा तो एक तारका ध्वनि बन्द होनेपर ही दूसरे तारकी ध्वनि सुनायो पड़ेगी । जवारी ठीक होनेपर चारा तारकी ध्वनि एकमें मिलकर 'सहति' का गुण पदा करती ह ।

जवारीकी क्रियाकी विवचना कार और गुन्नयाने वनानिक मोमासा और प्रयागके द्वारा की ह । इनका विचार ह कि जवारीके कारण कोरक समकालिक अभिघातसे केवल मौलिक ही नहा उपस्वर भी तीव्र हो उठत ह । पर एक बातमें दोना वनानिकोमें मतभेद ह । कारके प्रयागम सम आशिक ही प्रस्फुटित हाते है और विषम आशिक नब जाते ह । गुन्नयाक प्रयोगमें सम विषम, सार आशिक तीव्र हा जात ह । यह मत भेद, सम्भवत जवारीके प्रयोग भेदके कारण ही हुआ ह । एकमें आधे कम्पन पर ही ठोकर लगती ह जिससे ठोकरकी आवृत्ति तारकी आवृत्तिसे दूनी हा जाती ह । दूसरेमें ठाकरकी आवृत्ति और कम्पकी आवृत्ति एक हाती ह । गुन्नयान पद्मह्वे आशिक तकका पता लगाया ह । यवहारमें सभी आशिका का अस्तित्व पाया जाता ह । यग हेल्महोजक नियम (अनुच्छेद ३२) के विरुद्ध छेउनक स्थानका इन आशिकापर कार्द अमर नो पडता । तारके डेहनक स्थानपर जिन आशिकाकी ग्रथि हाती ह उन्हें नियमानुसार दब जाना चाहिए पर बार बार अभिघातके कारण वे भी तीव्र हा जाते ह ।

इस प्रकार यह देखा जाता है कि जवारीके प्रयोगसे तारकी ध्वनि केवल तीव्र और लगातार ही नहीं होती बल्कि इसके जावत्तक बली हो उठते हैं ।

११९ तमूरेके इस सक्षिप्त विवरणके बाद इसका महत्त्वपर भी ध्यान देना आवश्यक है । सगतिके लिए तमूरेमें कई विशेषताएँ हैं । पहली तो यह कि पडज और पञ्चमका इतना घनिष्ठ सवाद है कि इन दोनोंका साथ साथ उच्चारण बड़ा ही दृष्ट होता है । बल्कि, पञ्चमक कुछ नये जावत्तका (अनुच्छेद ५७) के कारण इस स-प सघातमें नया रंग नयी रोचकता आ जाती है । दूसरी, सप्तकके पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्ग, दोनोंके आदि स्वर स्वरितम मौजूद होनेसे दोनों जगाका सामञ्जस्य और तौल बना रहता है । इस तौलका हिन्दुस्तानी सगीतम बड़ा मूल्य है (अनुच्छेद १३०) । तीसरी सभी आशिकाक तीव्र होनेसे ये स्वतंत्र रूपसे और अपने परिणामी स्वरा (अनुच्छेद ४४) के द्वारा प्राकृतिक (अनुच्छेद ६४) सप्तकके प्राय सभी स्वर उत्पन्न कर देते हैं जिससे तमूरेमें केवल स्वरितकी ही सगति नहीं बल्कि गलेके सभी स्वराकी सगति होती है ।

तमूरेके चार ताराम दो ता जोड़के हाते हैं इसलिए तीन ही स्वराकी 'सहति' हाती है—स $\frac{१}{२}$ प $\frac{३}{४}$ और स १ । इनके आशिक नीचे दिये जाते हैं—

स	१	२	३	४	५	६
प	$\frac{३}{४}$	$\frac{३}{२}$	$\frac{३}{४}$	३	$\frac{१५}{४}$	$\frac{९}{४}$
स	$\frac{३}{४}$	१	$\frac{३}{२}$	२	$\frac{५}{४}$	३

या ता एक ही ध्वनिके उपस्वरामें जावत्तक ग्रामके सभी स्वर निहित रहते हैं (अनुच्छेद ६४), पर यहाँ प और स के उपस्वरास २ ($\frac{१}{२}$), ग ($\frac{३}{४}$) और न ($\frac{१५}{४}$) को विशेष रूपसे पुष्टि होती है । फिर न ($\frac{३}{४}$) एक नया स्वर प्रस्फुटित होता है जो सामान्यतः व्यवहारमें नहीं आता ।

पर इन आवस्यकाके अलावा इनके परिणामी स्वर बड़े प्रबल होते हैं, क्योंकि 'जवारी की क्रियासे स्वराकी तीव्रता बहुत बढ़ जाती है। नीचे स्वराका विवरण दिया जाता है—

- (१) स—प—→ योगिक— $१ + \frac{३}{४} = \frac{७}{४}$ (क) न^०
 सापिक— $१ - \frac{३}{४} = \frac{१}{४}$ (ख) म
- (२) स—म—→ योगिक— $१ + \frac{३}{३} = \frac{३}{३}$ (ग) प
 सापिक— $१ - \frac{३}{३} = \frac{३}{३}$ (घ) स
- (३) प—स—→ योगिक— $\frac{३}{४} + \frac{३}{३} = \frac{५}{४}$ (च) ग
 सापिक— $\frac{३}{४} - \frac{३}{३} = \frac{३}{४}$ (छ) स

इस प्रकार परिणामी स्वर स, प ग और न^० को पुष्ट करते हैं। यह हिन्दुस्तानी गवयाका अनुभव है कि सच्चे मिल हुए तमूरमें गाधार साफ सुनायी पड़ता है। न^० कामल निपाद (१ $\frac{३}{४}$) स भी कुछ उतरा हुआ है। जहाँ स्वतंत्र रूपसे, बेबल स्वरितके साथ न^० का उच्चारण होता है वहाँ गायक इसी सापिक निपादका प्रयोग होता है। क्लेमेण्टने कहा है कि "सापिक अन्तराला अर्थात् सप्तम आवस्यक बन हुए स्वराका जो महत्त्व दिया गया है उसने हिन्दुस्तानके संगीतको संगीत कलाक बौद्धिक विकासमें सबसे ऊँचे स्थानपर पहुँचा दिया है।" दाक्षिणात्य संगीत-पण्डित सुब्रह्मण्य अय्यर लिखते हैं— फारम स्तम्बज आदिके इस (श्रुतिनिणय) विधानमें $\frac{३}{४}$, $\frac{७}{४}$ और $\frac{५}{४}$ ये तीन मुख्य स्वर नहीं पाये जाते, यदि हम अपनको स—म, स—प के आधारपर २२ श्रुतियाँके विधान तक ही सीमित रखें। म जब इन स्वराको बलमें निकालता हूँ तो इन्हें इनके अनुनाद और आशिकास पहचान लेता हूँ। ये सुन्दर स्वर हैं और निश्चित रूपसे दाक्षिणात्य रागामें प्रयुक्त होते हैं।" इनका विश्वास है कि ग $\frac{५}{४}$ का

भरवी (आसावरी) और आनन्द भरवमें म' $\frac{1}{2}$ का रामप्रियमें और न $\frac{1}{2}$ का सुरतिमें अवश्य प्रयोग हाता ह । ये सारे दक्षिणात्य राग ह । हिन्दुस्तानी रागापर इस दृष्टिसे किसीने विचार नहीं किया ह । पर यह सम्भावना अवश्य ह कि तमूरेक साथ गानेमें कमसे-कम न $\frac{1}{2}$ का प्रयोग हाता ह , क्योंकि यह स्वर स के आगिकामें और स-प के यौगिकमें मौजूद ह । यह माना जा सकता ह कि न $\frac{1}{2}$ न $\frac{3}{4}$ और न $\frac{1}{4}$ इन तीन प्रकारके कामल निपादामें न का प्रयोग ग $\frac{1}{2}$ के सवादमें न का प्रयोग म के सवादमें और न $\frac{1}{4}$ का स्वरित (स) के साथ होता ह । इस पसगपर आगे भी विचार किया जायेगा ।

[ख] स्वर ग्राम

१२० यह बताया जा चुका ह कि आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिम गुद्ध ग्राम बिलावल ठाठ (अनुच्छेद ५३) माना जाता ह । उत्तरमें सगातका पहला पाठ बिलावलके स्वर-साधनसे ही आरम्भ होता ह । हिन्दुस्तानी पद्धतिमें इस बिलावल ठाठका क्व प्रवेश हुआ इसपर भी विचार किया जा चुका ह (अनुच्छेद ११५) । तमूरके ध्वनि विरलपणके बाद यहा इतना और कहा जा सकता ह कि बनानिक दृष्टिसे तमूरके आविर्भाव और व्यवहारक साथ बिलावल ठाठका गुद्ध ग्रामके रूपम प्रकट होना स्वाभाविक ह । क्योंकि बिलावलके स्वरांनी ही तमूरके स्वराके साथ सर्वाङ्गीण सगति ह ।

दक्षिणात्य पद्धतिमें कनकाङ्गी (अनुच्छेद १०७) के म्वर ही गुद्ध माने जाते ह । इसमें दो अघ स्वर लगातार आते हैं । इनके अनुसंधानका प्रबंध या ह—

$$\begin{array}{ccccccc} \text{स} & \frac{1}{2} & \text{र} & \frac{1}{2} & \text{ग} & \frac{1}{2} & \text{म} \\ \underbrace{\hspace{1.5cm}} & & \underbrace{\hspace{1.5cm}} & & & & \\ & \frac{1}{2} & & & \frac{3}{4} & & \end{array}$$

१ यहाँ $\frac{1}{2}$ अघ स्वरके, १ णरु स्वरक और $\frac{3}{4}$ डड स्वरक अंतरालोंका अन्तान है ।

हिन्दुस्तानी स्वर-मगम इसका रूप स^२ र^२ र^१ म होगा। चतु सघात का ऐसा विभाग 'अध-स्वरक' (क्रोमेटिक) के नामसे प्राचीन यूनानी पद्धतिमें भा प्रचलित था (अनुच्छेद ६७)। पर दो अध स्वरका उच्चारण एकके बाद एक साधारणत कठिन है। संगीतकी दृष्टिसे इसमें कोई सुन्दरता भी नहीं जाती। फिर ये दाना अध स्वर समान भी नहीं हो सकत। यदि स-र को $\frac{1}{2}$ माना जाये तो र-ग $\frac{1}{3}$ या एक लीमा (२३ से) होगा और यदि ग को $\frac{1}{4}$ मानें तो दूसरा अध स्वर इससे भी छोटा $\frac{1}{8}$ अर्थात् १८ स होगा। इसीलिए सुब्रह्मण्य अय्यर कनकाङ्गीका स्वर प्रबन्ध

स	र	(ग)	म	प	ध	(न)	स
र	$\frac{1}{2}$	$\frac{1}{3}$	$\frac{1}{4}$	$\frac{1}{5}$	$\frac{1}{6}$	$\frac{1}{7}$	र
[स	र	र	म	प	ध	ध	स

दकर लिखते हैं ' यह कोई पूछ सकता है कि $\frac{1}{2}$ और $\frac{1}{3}$ इन दो अन्तरालका लगातार उच्चारण सम्भव है या नहीं। हाँ सम्भव है यदि स्वर को बीचमें तोड़ दिया जाये। ' पर ऐसी सम्भावना संगीतके कामकी नहीं। यह भी दवा जाता है कि दक्षिणात्य पद्धतिमें इस कठिनाईका दूर करनेके लिए आरोहा अवरोहोम दोनों-से एक स्वरका छोड़ देते हैं। यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि स्वरकी दो मुख्य प्रकृतियाँ हैं—एक गमक और दूसरा लीनक। फिर गमकके अनेक भेद हैं। गमकका सामान्य लक्षण है गति। जब ध्वनि किसी स्वरपर ठहरती नहीं और भिन्न भिन्न युक्तियाँ उस स्वरका स्पर्शकर दूसरेपर चली जाती हैं तो उसे 'गमक' कहते हैं। कम्पन, आन्दोलन, मोड़, वण आदि इसीके अन्तर्गत हैं। जब ध्वनि किसी एक स्वरपर दूर तक एकतान ठहरती है तो उसे ठहराव या 'मुकामके स्वरका

१ The grammar of south Indian (Karnatic) music pp 84

'लीनक' कहते हैं। तात्पर्य यह है कि त्रिनि उस स्वरमें लीन हो जाती है। गमक और लीनककी दृष्टिसे विचार कर तो यह मानना पड़ता है कि गमकम दो अथ स्वरका उच्चारण सम्भर है पर लीनकमें ऐसा प्रयोग अनायास नहीं हो सकता। इसीसे व्यवहारमें अब दक्षिणमें भी मालवगौडा (भरव) की ही गूढ मेल मानते हैं और सगीतकी गिना इसीसे आरम्भ होती है। दक्षिणात्य पद्धतिमें यह परिवर्तन बनाटकक मेधावी सत-नायक पुरंदर दामने किया। यह मालवगौडा मेल भी कनकाङ्गीकी तरह ही अब स्वरक है, पर दाना अथ स्वरोंको अलग अलग कर दिया गया है। जैसे,

स ३ र १३ ग ३ म
[स र ग म]

पर एक अम्बाभाविकता इसमें भी रह जाती है। स्वरितके बाद लगा तार अर्ध स्वरका उच्चारण आसान नहीं होना। इसीलिए हिन्दुस्थानीय गीतक भरव आदि रागमें 'न स ग म' तानका ही प्रयोग होता है। 'स र' उनना ही कृत्रिम है जितना 'म न'। इसके विपरीत आराहीमें 'न स' और अत्रोहीमें 'र स' अनायास आता है। यहाँ र और न का प्रयोग प्रवेगक स्वर (अनुच्छेद ८५) के रूपमें होना है। इन विचारसे मालवगौडा भी गूढ मेलके लिए बहुत उपयुक्त नहीं है।

पर महन्वकी बात यह है कि दक्षिणमें गकराभरण (विलावल) राग सबसे अधिक लोकप्रिय समझा जाता है। यह इस बातकी आर मकन करना है कि दक्षिणमें भी विलावलकी ही गूढ मेल माननेकी आर सुझाव है।

प्रश्न यह है कि 'गूढ' का तात्पर्य क्या है? कुछ लोगोंका विचार है कि साम-गानक ग्रामकी ही 'गूढ' कहते हैं। सामगानके ही ग्रामका भरतने स्वीकृत किया है इसलिए भरतग्राम 'गूढ' है। दक्षिणात्य पण्डितोंकी धारणा है कि अर्धस्वरक कनकाङ्गी मेल ही भरत-ग्रामका मन्त्रा रूप है। इसीलिए दक्षिणात्य पद्धतिमें कष्टसाध्य कनकाङ्गी मेलको ही गूढ मेल माना गया

जिसमें स्वराओं चार चार श्रुति तककी विकृति करनी पड़ी। पर यह सभी मानते हैं कि भरत ग्राम द्विस्वरक था जिसका बनवाङ्गीसे कोई सम्बन्ध नहीं। फिर 'गुद्ध का ठीक अर्थ है प्राकृत'। जो ग्राम 'प्राकृत' हो गल्लस बना यास निकल सके उसी ग्रामको गुद्ध कहना चाहिए। प्रत्येक सस्कारी संगीत पद्धतिका आधार हाता है ग्राम्य संगीत और इसलिए ग्राम्य संगीतका सरल प्राकृत स्वर प्रबन्ध ही सस्कारी संगीतम 'शुद्ध क' नामस गहीत हाता है। संस्कृति उही शुद्ध स्वराका नाना युक्तियास विवृत कर नाना कृत्रिम ग्रामाकी रचना करती है और इस प्रकार गुद्ध ग्रामके आधार-पटपर स्वराकी रोचक चित्रकारी हाती है।

इस दृष्टि दखा जाय तो बिलावलको शुद्ध मल मानना अनिवाय हो जाता है। इसीके स्वर सुसाध्य और प्राकृत हैं। इसीका आधार ग्राम्य संगीत है। प्रकृति इसका आधार है इसीलिए यह इतना 'यापक' है कि प्राय सभी देगाके प्राचीन और नवीन संगीतम यह पाया जाता है।

१२१ बिलावलम ही भरतकी परम्परा भी मौजूद है। भरतका संगीत पद्धति सीधे ग्राम्य-संगीतस निकली है। यह अनुभव सिद्ध है कि ग्राम्य संगीतका क्रम प्राय अवरोही हाता है। भरत-संगीत भी अवरोही क्रम ही है। अवरोही क्रमम प्राकृत ग्रामका काफी मेलम बल्ल जाना स्वाभाविक है क्योंकि अवरोहीम स्वर अनायास नीचे उतर जाते हैं। फिर स न क प्रयोगसे स न का प्रयोग अधिक सुदर होता है। भरत ग्रामकी इसी रातिसे रचना हुई है। सस्कारी संगीतम आराही क्रमका प्रवेश हात ही बिलावलका अधिकार आ जाना है। ये दोनों ही मल द्वि स्वरक है। भरत ग्रामस किस प्रकार बवल स्वर श्रुतियास क्रम बदल दनस बिलावल मल तयार हो जाता है यह बताया जा चुका है (अनुच्छ ११५)। प्राचीन यूनानी ग्राम भी भरत ग्रामकी तरह ही अवरोही था। इस ग्रामका प्रबन्ध हिन्दुस्तानी स्वराओं श्रुति-सम्बन्धक साथ दिया जाता है—

(८) (७) (६) (५) (४) (३) (२) (१)
 स २ र ४ ग ४ म ४ प २ घ ४ न ४ स ।



इसे 'डोरियन' कहत थे, जा हिंदुस्तानी भरवी-मेलक ही समान ह । पायथागोरमने इन्ही स्वराके अन्तरालका आरोही क्रममें बैठाकर नीचेका द्वि स्वरक ग्राम बनाया—

(१) (२) (३) (४) (५) (६) (७) (८)
 स ४ र ४ ग २ म ४ प ४ घ ४ न २ स

भरतका अवराही ग्राम भरवी और काफीक बीचका ह, क्योंकि उनका घ और २ प्राचीन यूनानी डोरियनके घ और २ स कुछ चढा हुआ है । इसलिए भरत-ग्रामका आरोही रूप एक तो अहोबलका काफी शुद्ध हुआ और दूसरा हिंदुस्तानी पद्धतिका विलावल शुद्ध । पर ध्यान देनेकी बात यह ह कि भरत ग्राम, अहोबल-ग्राम और हिंदुस्तानी ग्राम, ये तीना द्वि स्वरक ह ।

घाडे याडे अन्तरके साथ विलावलके कई रूप हा सकते हैं । इनमें सबसे सरल पायथागोरमका द्वि स्वरक ग्राम ह जिसका रूप नीचे दिया जाता ह—

(१) स र ग म प घ न स
 $\frac{1}{1}$ $\frac{2}{2}$ $\frac{3}{3}$ $\frac{4}{4}$ $\frac{5}{5}$ $\frac{6}{6}$ $\frac{7}{7}$ $\frac{8}{8}$
 ~~~~~  
 $\frac{1}{1}$   $\frac{2}{2}$   $\frac{3}{3}$   $\frac{4}{4}$   $\frac{5}{5}$   $\frac{6}{6}$   $\frac{7}{7}$   $\frac{8}{8}$

इसमें गांधार बहुत ही अनिष्ट ह । पर हिंदुस्तानी पद्धतिको दृष्टिसे इसमें एक गुण ह कि इसका पूवाङ्ग ( स-म ) और उत्तराङ्ग ( प-स ) में पूरा मात्प्य ह । इस सात्प्यको हम 'यमकत्व' कहेंगे । यमक' का अर्थ हाता ह एक ही रूपके दो वस्तुआका जाडा ।

तमूरका सगतिमें उपरके अनिष्ट गांधार और अनिष्ट धैवतका स्थान नहीं मिन्न सक्ता । इसलिए तमूरका विलावल ता शुद्ध आवराक ही हा

सकता है जिसे प्राकृतिक या वायविक ग्राम कहते हैं, उस—

(२) स र ग म प ध न स

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

२ १० १५ २ १० २ १६

पर तमूरके बिलावलम र-ध सवा नही रहता और इसलिए पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गका यमकत्व नष्ट हो जाता है। यह भारतीय परम्पराक प्रतिकूल है। यमकत्व बनाय रखनक लिए र को धाढा उतारा जा सकता है। जैसे—

(३) स र ग म प ध न स

१ १० ३ ४ ५ ६ ७ ८

१० २ १६ २ १६ २ १६

इस प्रकारमें र-ध सवा और ग्रामका यमकत्व स्थापित हो जाता है। पर र १० को तमूरका पञ्चम प्रस्फुटित न होने दगा। पञ्चमके साथ तो र २ ही आ सकता है। इसलिए धीवतको ही खाना आवश्यक है क्योंकि अनिष्ट हानपर भी र के सवादस इसमें इष्टना आ जाती है। इस प्रकार नीच दिया हुआ ग्राम ही गुद्घ बिलावल ग्राम माना जा सकता है—

(४) स र ग म प ध न स

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

२ १० १६ २ २ १० १६

इसका यह अर्थ नहीं कि और तीन रूपाके वक्लिव स्वर माय नहीं हैं। हिन्दुस्तानी रागमें भिन्न भिन्न सवाद और मगतिका आवश्यकताके अनुमार र १ ग १६ और ध ३ का मापक रूपसे प्रयोग हाता है।

१२२ यदि तमूरेके ही आधारपर चलें तो हिन्दुस्तानी-ग्रामके पाच विकृत स्वर भी निश्चित हो जाते हैं। कोमल गांधार ( ग्  $\frac{१}{३}$  ) इष्ट स्वरोंमें ह जिमका अस्तित्व तमूरेकी संहतिमें निर्विवाद है। इसका स से सीधा सवादा ह। कोमल गांधार ( ग् ) का सवादी न  $\frac{१}{६}$  का भी मानना आवश्यक ह। ग् का मध्यम सवादी कोमल धवत ( ध  $\frac{१}{६}$  ) ह। इम घ् का पूवाद्ग सवादी कोमल ऋषम ( र्  $\frac{१}{६}$  ) है। कामल ऋषमका मध्यम सवादी तीव्र मध्यम ( म' ) होता ह जिमका मा  $\frac{१}{३}$  है। इस प्रकार विकृत स्वराका मान क्रमः

|       |               |               |               |               |               |
|-------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|
| ( स ) | र्            | ग्            | म'            | घ्            | न्            |
| १     | $\frac{१}{३}$ | $\frac{१}{६}$ | $\frac{१}{३}$ | $\frac{१}{६}$ | $\frac{१}{६}$ |

होता ह। ये पाचो स्वर स र म प और घ (  $\frac{१}{६}$  ) को एक-एक अथ स्वर (  $\frac{१}{६}$  ) चटाकर भी निकाले जा सकते हैं। पूर्व स्वराको चटानके बदले यदि उत्तर स्वरोंका एक-एक अथ स्वर उतारा जाये ता दूसरे प्रकारके विकृत स्वर निकलेंगे। जैसे, प— $\frac{१}{६}$ —> म'  $\frac{१}{३}$ । हिन्दुस्तानी पद्धतिमें इस म' (  $\frac{१}{३}$  ) का भी प्रयोग होता है क्योंकि न (  $\frac{१}{६}$  ) इसका मध्यम सवादी ह। जहाँ र स सवादीकी आकाशा रहता है वहाँ म'  $\frac{१}{३}$  का व्यवहार हाता ह और न (  $\frac{१}{६}$  ) के साथ म'  $\frac{१}{३}$  का।

गुद्ध और विकृत मिलाकर १२ स्वर मारिणी ५ में दिये गये हैं। वनी म का मान  $\frac{१}{३}$  ह। इसकी जगह म'  $\frac{१}{३}$  भी रखा जा सकता ह। यन् बनाया जा चुका है कि १२ स्वरोंका ग्राम परम्पराप्राप्त और मार्वमौम ह। हिन्दुस्तानी मगोतकी आधार गिला भी ये ही बारह स्वर हैं।

हिन्दुस्तानी सगातमें अब 'गुद्ध और 'विकृत' विभेपणाका व्यवहार होन लगा ह, जहाँ 'विकृत' क दो भेद माने जाते हैं—एक कोमल और दूसरा तीव्र। पर प्रचारमें अब भी नीचे स्वराको कोमल और ऊँचेको 'तीव्र' या 'कची' फन्ते हैं। तारताकी दृष्टिसे यह मना अधिक उपयुक्त ह।

१२३ आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीतक पण्डित भातखण्डेने अभिनव रागमञ्जरीमें अहाबल-श्रीनिवासकी गलीम हिन्दुस्तानी संगीतके बारह स्वरा का स्थान निरूपण किया है। मञ्जरीके आधारपर स्वराकी गणना नीचेकी सारिणीमें दी जाती है ( परिशिष्ट २ ट ) —

## सारिणी १६

| स्वर | तारकी लम्बाइ<br>( इ० ) | अन्तराल                    |      |
|------|------------------------|----------------------------|------|
|      |                        | भिन्नाक                    | सेवट |
| स    | ३६                     | १                          | ०    |
| र    | ३८                     | $\frac{१८}{३६}$            | २४०  |
| र    | ३२                     | $\frac{२०}{३२}$            | ५११  |
| ग    | ४०                     | $\frac{२०}{४०}$            | ७९१  |
| ग    | $२८\frac{३}{४}$        | $\frac{३६}{२८\frac{३}{४}}$ | ९८९  |
| म    | २७                     | $\frac{३६}{२७}$            | १२५  |
| म'   | $२५\frac{३}{४}$        | $\frac{३६}{२५\frac{३}{४}}$ | १४९८ |
| प    | २४                     | $\frac{३६}{२४}$            | १७६१ |
| ध    | $२२\frac{३}{४}$        | $\frac{३६}{२२\frac{३}{४}}$ | २०१० |
| ध    | $२१\frac{३}{४}$        | $\frac{३६}{२१\frac{३}{४}}$ | २२७२ |
| न    | २०                     | $\frac{३६}{२०}$            | २५५२ |
| न    | $१९\frac{३}{४}$        | $\frac{३६}{१९\frac{३}{४}}$ | २७५० |
| स    | १८                     | २                          | ३०१० |

इस सारिणीमें र, ग म प और न तो अहोवर्लक स्वर हैं, जो सवमाय हैं। पर र, ग, म' धू और न नय हैं। सारिणी ५ के साथ तुलना करनेपर जान पडता है कि यहा ग और न लगभग २ सेवट

चढ़ हुए हैं। पर हिन्दुस्तानी सगीत-पद्धति ( मराठी ) में भातखण्डेने सच्चे गाधार (  $\frac{3}{8}$  ) और सच्चे निपाद (  $\frac{1}{4}$  ) को मान लिया है। र म' और घू का इन्होंने द्विश्रुतिक माना है इसीलिए इहे चतुश्रुतिक र, प और घ के आवेपर बैठाया है। स्वरको दो लगभग बराबर भागोंमें बाटनेकी यह प्रक्रिया ईरानी सगीत-पद्धतिमें भी प्रचलित थी। जिस अंतरालको दा सम भागाम बाटना हो उसके अश और हर, दोनोंको दासे गुणा करना चाहिए। फिर इस द्विगुणित अश और हरको जोड़कर दो स भाग देना चाहिए। भाग देनेपर जो एक निक्ल उसे जशके नाचे रखनेपर मूल अंतरालका पूर्वाव और हरके ऊपर रखनेपर उत्तराध निक्ल आता है। इन दो भागोंको परस्पर गुणा करनेपर मूल अन्तराल आ जाता है। जैसे, र के अंतराल  $\frac{1}{2}$  का दा सम भागाम बाटना हो ता इस रीतिसे बाटेंगे—

$$\frac{1}{2} = \frac{1}{2} \times \frac{2}{2} = \frac{1}{1} = \frac{1}{2} \times \frac{1}{2}$$

यहां  $\frac{1}{2}$  दो लगभग समभागाम विभक्त हो गया जिनमें एक  $\frac{1}{4}$  है और दूसरा  $\frac{1}{4}$ । सेवटम इनका मान क्रमश २५ और २६ है। दानाम केवल १ सवटका अंतर है। भातखण्डेने इसी प्रक्रियासे र, म' और घू का स्थान निणय किया है। पर गाधारको  $\frac{3}{8}$  मान लेनेपर ग-म अन्तराल (  $\frac{1}{4}$  ) प्रधान हो जाता है और यही द्विश्रुतिक कहा जा सकता है। इसलिए स्वराका इसी मात्रामें घटा बढ़ाकर विकृत करना उचित है। इस प्रक्रियाको हिन्दुस्तानी सगीत पद्धतिमें पण्डित भातखण्डेने भी माना है। जो हो, यदि पण्डितजी अहाबलका शली छाड़कर तारको सरल अंगामें बाटनेकी विधि ग्रहण करते तो कही अच्छा होता।

[ ग ] ठाट ( थाट )

१२४ यह बताया जा चुका है कि उत्तरमें मध्यकालम ही वर्गीकरण की राग रागिनी पद्धति प्रचलित है। पहले इसके कितने ही मत थे। अब हनुमन् मत ही प्रचारमें है ( अनुच्छेद ११६ )। इस मतका वर्गीकरण दिया



जा चुका है (अनुच्छेद ११६)। छह पुण्य राग, तीस रागिनियाँ, ४८ पुत्र और ४८ पुत्रमार्याएँ मिलाकर कुल १३२ प्रचलित राग इस पद्धतिमें मान गये हैं। महम्मद रजाने नभी प्राचीन मताका खण्डन करके नयी पद्धतिका निरूपण किया है। उहाने दोषणके अप्रचलित होनसे इसकी जगह नट माना है एक-एक रागकी छह छह रागिनियाँ मानी है। उनका विधान नीचे दिया जाता है—

- [१] भरव—(१) भरवी (२) रामकली (३) गूजरी (४) खट (५) गाधारी (६) आसावरी।
- [२] माल्कोस—(१) वागेश्वरी (२) सोडो (३) देशो (४) सूहा (५) सुधरार्द्ध (६) मलतानी।
- [३] हिण्डोल—(१) पूरिया (२) वसन्त (३) ललिन (४) पञ्चम (५) घनाश्री (६) मारवा।
- [४] श्री—(१) गौरी (२) पूर्वी (३) गौरा (४) त्रिवण (५) मालश्री (६) जेतश्री।
- [५] मेघ—(१) मधुमाघ (२) गौड (३) गुड्ड सारग (४) बहहस (५) सामन्त (६) सोरठ।
- [६] नट—(१) छायानट (२) हुमीर (३) बल्याण (४) वेन्गर (५) बिहागडा (६) यमन।

महम्मद रजाके इस वर्गीकरणके विषयमें भातखण्डे कहते हैं—'राग रागिनी विभागकी पद्धतिक लिए उन्हाने (महम्मद रजा) इम महत्त्वपूर्ण सिद्धांतका स्पष्टरूपस निरूपण किया है कि राग और उनकी रागिनियाँके बीच कुछ साम्य या साहचर्य होना चाहिए। उनके वर्गीकरणमें इस सिद्धांतका अनुसरण पाया जाता है, इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता।'

पर भातखण्डेका इस वर्गीकरणसे संतोष न हुआ इसलिए उहाने बैकटमस्त्रीके ७२ मेलोंक आधारपर हिन्दुस्तानी सगीतका फिरसे नियम-बद्ध

किया। रागाका वर्गीकरण अनेक प्रकारस हो सकता है। इन वर्गों करणामें परस्पर विरोध हाना आवश्यक नहीं ह। अपेक्षा सिफ इम बातकी ह कि प्रत्येक वर्गीकरणका आधार एक सामान्य लक्षण हो। रागाका समय, उनकी गति प्रकृति, उनका रस भाव, उनका स्वर वियास आदि इनमें-स प्रत्येक वर्गीकरणका आधार माना जा सकता ह। भातखण्डेन इनमें-से स्वर वियासको ही ग्रहण किया।

'ठाट या थाट' शब्दका प्रयोग उत्तरमें 'मेल क ही अथमें होता आया ह। यह सितार या इसराज-जसे बाजामें सुन्दरियाके किसी विशेष क्रमका नाम ह। इन बाजोंमें सुन्दरिया सरकायी जा सकती है। यदि सुन्दरियाका प्रबन्ध ऐसा ह कि उनपर विलावल राग बजाया जा सकता ह तो इम प्रबन्धको विलावल 'ठाट' कहेंगे। अब यदि गांधार और निषादका सरकाकर कामल बना दें ता यह 'काफी ठाट हा जायेगा। इसी तरह सुन्दरियाका सरकाकर आसावरी, भरवी आदिके ठाट तयार किये जाते है। वीणामें सुन्दरिया स्थायी रूपम बठी होती ह। इसीलिए वीणाक स्वरको 'अचल ठाट' कहते है। 'ठाट' या 'थाट' का यह लौकिक प्रयोग ह। अब विलावलको सुन्दरियापर जितने राग बजाये जा सकते है उहें विलावल ठाटके राग कहेंगे। इस प्रकार 'ठाट' का व्यवहार मेलक अथमें होने लगा।

स्वर प्रबन्धके अथमें ठाटका प्रयोग होत हुए भी उत्तरमें राग रागिनी विभागका ही प्रचार रहा। पण्डित भातखण्डेने पहले-पहल राग रागिनी पद्धतिका निराकरण कर उमक स्थानमें 'दस ठाट की पद्धतिका निरूपण किया ह। वे कहते ह कि "हम ७२ ठाटामें-स उन्हीं ठाटाका चुन लें जो उत्तर भारतक प्रचलित रागोंके वर्गीकरणके लिए आवश्यक है और फिर पूरी पद्धति तयार करनेका प्रयत्न करें।" "मैं ७२ मेलाम-स केवल १० अधिक प्रचलित मेलामें लूंगा और उन्हींमें प्रचलित रागोंको विभक्त करूंगा।" इस प्रकार पण्डित भातखण्डेने देखा कि उत्तरके चारों प्रचलित रागोंका दस ठाटा या मेलाम ही समावेश हो जाता है। ये ठाट, स्वर-

सस्या-समेत दिये जा चुके हैं (अनुच्छेद ५३)। यहाँ प्रसंगगत उनका स्वर प्रबन्ध फिर दिया जाता है—

(१) विलावल—स र ग म प ध न स।

(२) यमन—स र ग म' प ध न स।

(३) खमाज—स र ग म प ध न स।

(४) भरवी—स र ग म प ध न स।

(५) भरव—स र ग म प ध न स।

(६) पूर्वी—स र ग म' प ध न स।

(७) मारवा—स र ग म' प ध न स।

(८) काफी—स र ग म प ध न स।

(९) आसावरी—स र ग म प ध न स।

(१०) टोड़ी—स र ग म' प ध न स।

दक्षिणात्य मेलकर्त्ता पद्धतिमें इनके नाम क्रमगत ये हैं—(परिगिट

१ ख) { १ } शंकराभरण (२) मैत्र कल्याण (३) हरिकाम्भाजी (४) टोड़ी (५) मायामालव गोडा (६) कामवधनी (७) गमनप्रिया (८) खरहर प्रिया (९) नटभरवी (१०) गुप्त पन्तुवराडी।

१२५ इसमें कोई सन्देह नहीं कि उत्तरके प्रचलित राग उपयुक्त दस मेलामें ही समाविष्ट हो जाते हैं। पर महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इन दस मेलोंका ही प्रचार उत्तरमें क्या रहा? दक्षिणम इन दस मेलोंके अतिरिक्त अनेक मेल प्रचलित हैं जो उत्तरमें ग्राह्य नहीं। अतः पद्धतिमें इस विभेदका कोई मुख्य कारण होना चाहिए। पश्चिम भारतखण्डने इसपर विचार नहीं किया है। इसीलिए यहापर इसकी विस्तृत विवेचना आवश्यक है। इससे हिन्दुस्तानी पद्धतिक तत्त्व और मौलिक सिद्धान्तका भी स्पष्टीकरण होगा। उत्तरीय और दक्षिणात्य, दोनों ही पद्धतियोंमें पूरे सप्तकको १२ अथवा स्वराय बाँटा गया है। इन १२ स्वरासे मेलकी रचनाके लिए कुछ नियम उत्तर और दक्षिणम समान

रुडसे डलने डलते है । डसे—(क) १२ सुवरलडें से ७ सुवरलकु लेकर ही डेल डल ठलटकु रकनल हलनू डलहलए (ख) इन ७ सुवरलडें डडङ, डङुकड डलर गुरुड डधुड डल तीरु डधुड अवरदुड हूँनल डलहलए । (ग) डूललङुग डलर उतरलङुगके शेष डलर-डलर सुवरलडेंसे २ डूललङुगडें डलर २ उतरलङुगडें हूँने डलहलए ।

इहू ३ नलडडलडर डेंकडडललुके ७२ डेललकु रकनल हुरई ह ( डरलरलषुड १ ड ) ।

हलनुडुसुतलनू डडुडतलके डडलरलरस सुडषुड ह कल इसडे ऊडरक इन ३ नलडडल डे डतरलरकन नूडके ३ नलडड डलर डलने डलते है डू उतरूड डडुडतलकल डलशलषुड डुरकड डरते है—

१—कलसू सुवरके गुरुड डलर डलकृत डेडलड डे कलसू ँककल ही डुरडलड हू सकुतल ह ।

२—डूललङुगके डुरतुडेक सुवरकल डधुड डल डङुकड-सडलदू सुवर उतरलङुग डें अवरदुड हूँनल डलहलए ।

३—डलड ठलटडें तीरु डधुड हू उसडें गुरुड नलडलदकल हूँनल अलवरदुडक ह । सलड-हू डलड डहलं ड'न कल डुरड हू डहलं कलडल ऀडड डल गुरुड गलडलर डू अवरदुड हल ।

हलनुडुसुतलनू डडुडतलके इन तीनूँ नलडडूडे अूकलतुड डलर इनकु डलडल नलकतलकल डलडलर नूडे कलडल डलतल ह ।

१२६ (१) १२ सुवरलकु डलडूडें २ २ ग ग, डे ॡ सुवर डूललङुगडें है डलनडें से नलडड (ग) क अनुडलर २ हू ललडे डल सकुते ह । दलधलणलतुड डडुडतलडें इन डलरलडें से कुडू डू २ डुरलह ह डस, '२ २', '२ ग', '२ ग' '२ ग, '२ ग' डलर 'ग ग । डर हलनुडुसुतलनू डडुडतलडें नलडड (१) ड अनुडलर २ डलर २ डें-स १ डलर ग डलर ग डें-स १ डल हू डुरडलड हल सकुतल ह । २ २ डलर 'ग ग' डुरडूड डरडलन ह । डलडुडलनुतरुडडें दलधलणडें डू डह नलडड

माना जाता है । पर वहाँ यह नियम केवल नाममें लगता है, स्वरम नहीं । जस, दक्षिणम जब र और र दानाका प्रयोग होगा तो र को शुद्ध ऋपम और र को शुद्ध गाधार कहा जायेगा । पर 'र ग क प्रयोगम र को शुद्ध गाधार न कहकर, चतु श्रुतिक ऋपम कहेंगे और ग को साधारण गाधार । इसी प्रकार जब 'ग ग स मेल बनावेंगे ता ग को साधारण गाधारक बदल पटश्रुतिक ऋपम और ग को अंतर गाधार कहा जायेगा । इसीलिए र और ग में स प्रत्येककी दो दो सनाए ह । वस ही ध और न क भी दो-दो नाम ह । इन दा दा सनाआके वकल्पिक प्रयागसे 'सरगम' के उच्चारणम प्रत्येक मेलका पूर्वाङ्ग पडज, ऋपम, गा धार और मध्यमसे और उत्तराङ्ग पञ्चम, धवत, निपाद और तार पडजस पूरा हो जाता है ।

नोचे, उदाहरणस्वरूप, कुछ दाक्षिणात्य मलाक पूर्वाङ्ग टिडुस्तानी स्वर-सवेत और दाक्षिणात्य स्वर सजाके साथ दिये जाते हैं—

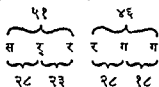
|              |     |    |    |      |    |       |
|--------------|-----|----|----|------|----|-------|
|              | स   | र  | र  | ग    | ग  | म     |
| १-कनकाङ्गी—स | रू  | र  | ५  | ×    | ×  | म     |
|              | पडज | गु | ऋ  | गु   | गा | मध्यम |
| २-नटभरवी—स   | ×   | र  | गु | ×    | ×  | म     |
|              | पडज | ×  | च  | श्रु | ऋ  | सा गा |
| ३-यागप्रिय—स | ×   | ×  | ग  | ग    | ग  | म     |
|              | पडज | ×  | प  | श्रु | ऋ  | अ गा  |
|              |     |    |    |      |    | मध्यम |

यहाँ एक ही र के शुद्ध गाधार और चतु श्रुतिक ऋपम और एक ही ग के साधारण गाधार और पटश्रुतिक ऋपम ये दो दो नाम दीख पडत है । इसी प्रकार उत्तराङ्गमें भी ध के शुद्ध निपाद और चतु श्रुतिक धवत और न क कक्षिकी निपाद और पटश्रुतिक धवत, ये दा दो नाम ह ।

वही चतु श्रुतिक ऋषभ और चतु श्रुतिक धवतको ही पञ्चश्रुतिक ऋषभ और पञ्चश्रुतिक धवत कहा गया ह ।

इन उदाहरणसे यह स्पष्ट ह कि पूर्वाङ्गमें ऋषभ और गाधार नामक स्वराका होना आवश्यक ह, इस नियमका पालन करनके लिए जिम र को कनकाङ्गीमें शुद्ध गाधार कहा ह उसीको नटभरवीम चतु श्रुतिक ऋषभ माना ह । वस ही एक ही ग् नटभरवीमें साधारण गाधार और याग प्रियामें षटश्रुति ऋषभ ह ।

हिंदुस्तानी पद्धतिमें केवल नामका परिवर्तन नहीं किया गया ह । यहाँ इस नियमका सम्बन्ध अन्तरालसे है । अन्तरालके शब्दमें इस नियम को इस रूपमें रख सकते ह कि जिन दो स्वराके बीचका अन्तराल एक अर्ध स्वर अर्थात्  $\frac{1}{2}$  या २८ सेवटसे कम हो उनमेंसे एक ही का प्रयाग मेलमें ही सकता है । सारिणी ५ देखनेसे पता चलता है कि र र अन्तराल २३ सेवटका और ग् ग १८ सेवटका ह । अर्थात्—



इसलिए हिंदुस्तानी मेलम स-र और र-ग् का, तथा प-ध-और घ-न का प्रयोग हो सकता ह । पर र-र, ग-ग, घ-घ और न-न वर्जित है । केवल नाम बदल देनेसे ही अन्तरालका मान नहीं बदल जाता । अर्ध स्वर या २८ सेवटसे छोटा अन्तराल सगीतोपयोगी नहीं है यह एक बड़ा ही व्यापक नियम है । हेल्महोच लिखते ह—“युरोपीय राष्ट्रान युनानी प्रयाका अनुकरण करके अर्ध स्वर  $\frac{1}{2}$  को सोमा मान लिया ह । ग ( $\frac{1}{2}$ ) [= ३१६ सण्ट] और ग ( $\frac{2}{3}$ ) [= ३८६ सण्ट] तथा घ ( $\frac{1}{3}$ ) [= ८१४ ] सण्ट और घ ( $\frac{2}{3}$ ) [= ८८४ सण्ट] का अन्तराल प्राकृतिक प्राममें अपक्षाकृत छोटा ह क्योंकि यह  $\frac{1}{3}$  [= ७० सण्ट] ह, इसीलिए हम लोग एक ही प्राममें

ग और ग तथा घ और घ का साथ साथ प्रयोग नहीं करत ।" हिन्दुस्तानी संगीतमें जहाँ ग और ग तथा न् और न का प्रयोग होता भी वहाँ ग और न का आरोहीमें और ग और न् का अवरोहीम—एक साथ नहीं ।

इसस यह निम्न है कि हिन्दुस्तानी संगीतमें र् र या ग ग के साथ साथ प्रयोगके वजित होनका कारण कबल सर ग-म में उच्चारणकी सुविधा नहीं है । ऐसा होता तो यहाँ भी दक्षिणकी तरह र की गाघार और ग् को ऋषभ नाम देकर काम चला लिया जाता । हिन्दुस्तानी संगीतमें स्वर विज्ञान और कलाकी दृष्टिसे इस नियमका पालन होता है ।

१२७ (२) पूर्वाङ्गका पूरा सवाद उत्तराङ्गस हो, इस नियमकी परम्परा भरतकी पद्धति है । भरतकी ओडव जातियामें, जहाँ दो स्वर वजित हुए वहाँ एक स्वर पूर्वाङ्गका है तो दूसरा उसका पञ्चम सवादी उत्तराङ्ग का है जस स प, र घ या ग न (अनुच्छेद ८८) । हिन्दुस्तानी संगीतमें भी ओडवत्वमें भरतके नियमका यथामम्भव पालन होता है । हिन्दुस्तानी पद्धतिमें भरतके नियमक क्षत्रको छोड़ा बना दिया गया है । भरत दोना अङ्गामें केवल पञ्चम सवाद मानते हैं । पर हिन्दुस्तानी पद्धतिम पूर्वाङ्गके स्वराका व्यष्टिरूपसे उत्तराङ्गके स्वराके साथ पञ्चम और मध्यम दोना प्रकारका सवाद हो सकता है । अर्थात् ग्राम या मलम काई भी ऐसा स्वर नही रह सकता जिसका मध्यम या पञ्चम सवादी काई दूसरा स्वर मेलम न हो ।

पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गके सवादस ग्रामके दोना अङ्गामें अनायास साम्य हो जाता है । अर्थात् उत्तराङ्गका स्वर प्रबन्ध ठीक वसा ही होता है जसा पूर्वाङ्गका । इस साम्यका यमकत्व कहेंगे । जहाँ पूर्वाङ्गके प्रत्येक स्वरका पञ्चम-सवादी स्वर उत्तराङ्गमें रहता है, वहाँ उत्तराङ्ग पूर्वाङ्गकी पुन रविन मात्र हाता है । ऐसा साम्य बहुत ही सरल होता है इसलिए इसे सरल

यमकत्व कहा जायेगा। यह सरल यमकत्व विलावल, भरव, भरवी और काफीमें पाया जाता है। जरा पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गमें मध्यम सवाद हो या मध्यम और पञ्चम-सवादका मिश्रण हो बड़ा भी यमकत्व होता है अवश्य, पर इतना सरल नहीं। इनने उदाहरण आगे दिये जायेंगे। यहा यह विचार करना है कि हिन्दुस्तानी पद्धतिमें पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गके सवादको या इन दोना अङ्गके यमकत्वको क्यों महत्त्व दिया गया है।

यह पहले बताया जा चुका है कि ग्राम्य सगीतका आदिरूप एक ही चतुस्रमयान तक सामान्य था। बादको यह ओडव हो गया। अतमें कही, आडवमें दास्वर और जोटकर और कही निम्न चतुस्रमयानमें वैसा ही एक उच्चचतुस्रमयान जोडकर सस्कारो सगीतका ग्राम तयाग हुआ। इसलिए पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गमें सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। ग्राम्य सगीतस सस्कारो सगीतका विकास होनेके कारण रागका रस भाव यथाथमें एक ही चतुस्रमयानमें प्रस्फुटित होता है। यदि पूर्वाङ्गकी और उत्तराङ्गकी रचनाएँ भिन्न भिन्न हा तो ग्रामके दोना अङ्गोंमें दा भिन्न भिन्न रसाका परिपाक हागा जिसका फल रस भङ्ग ही मानना पडेगा। प्राचीन यनानी, अरवी और फारसी पद्धतियामें भी एक ही चतुस्रमयान, स स म तक की रचना भिन्न-भिन्न विधियासि होती थी। उच्च चतुस्रमयान ( प स स ) तक निम्न चतुस्रमयानकी ही पुनरुक्ति होता था। जैसे, यदि निम्न चतुस्रमयान द्विस्वरक है तो उच्च चतुस्रमयान भी द्विस्वरक होगा। निम्न चतुस्रमयान अर्धस्वरक हो तो उच्च चतुस्रमयान भी वसा ही होगा। निम्न चतुस्रमयान श्रुतिमूलक है तो उच्च चतुस्रमयान भी श्रुतिमूलक ही होगा ( अनुच्छेद ६७ )। ग्रामके दोना अङ्गों या चतुस्रमयानका ऐसा यमकत्व स्वाभाविक है और एकरचना के लिए आवश्यक है इसलिए यदि सगीतकी रस प्रधान बनाये रचना हा तो पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गके सवाद या यमकत्वके इस नियमका पालन करना आवश्यक है। यदि भरवके पूर्वाङ्गमें भरवीका उत्तराङ्ग जाड दें ता इसमें सदेह नहीं कि ये दोना अङ्ग दो भिन्न भिन्न भाव पदा करेंग वयाकि



भैरवका अङ्ग अधस्वरक है और भरवीका अङ्ग द्विस्वरक। उत्तरके रसिकों का यह भेद राममाला या रागसागर-सा जान पड़ेगा। पर रागसागर एक कौतूहलका विषय है, रम परिपाकका साधन नहीं। दक्षिणम बकुला भरण ऐसा ही मेल है जिसका पूवाङ्ग तो भैरव है और उत्तराङ्ग भैरवी।

१२२ (३) इन तीसरे नियमका आधार वनानिक तथ्य है। पहले यह बताया जा चुका है कि (अनुच्छेद ८५) न <sup>१५</sup> एक अनिष्ट स्वर है जिसका पडजसे बहुत दूरका सम्बन्ध है। इसलिए ग्राममें इसका स्थान मुख्यतः प्रवेशक स्वरक रूपम है। इसी तरह म' ( <sup>१५</sup> ) भी पञ्चमका प्रवेशक स्वर है। भारतीय पद्धतिमें इनकी स्वतंत्र स्थिति भी है। पर ये दुबल स्वर माने जाते हैं क्योंकि अनिष्ट होनेसे तमूरके स्वरित के साथ ध्वनि इन स्वरापर अधिक समय तक नहीं ठहर सकती। ग्रामम वही स्वर बली मान जा सकता है जिनका स्वरितसे आवृत्तक सम्बन्ध है अर्थात् जो इष्ट है। इसीलिए किसी भी रागमें म' या न वादी नहीं माना गया है। इसलिए म' और न का प्रयाग प्रवेशकके स्वरके रूपमें तो सदा हा सकता है परन्तु मेलमें स्वतंत्र स्वरके रूपमें ये तभी आ सकते हैं जब ये दूरतर किसी बली स्वरपर खड़े हों। जैसे, यदि मेलमें ग <sup>१५</sup> है तो इसका पञ्चम-सवादी न <sup>१५</sup> और न का मध्यम सवादी म' ( <sup>१५</sup> ), इन दोनों स्वराका अधिकार बढ़ जाता है। वैसे ही यदि मेलम र हो तो र का मध्यम सवादी य' और म का मध्यम-सवादी न ये दोनों स्वर साथक हा जाते हैं। कोमल ऋषभ भी, अनिष्ट होनेसे अवरोहीम पडजका, 'न' की तरह ही प्रवेशक स्वर होता है। इसपर भी ध्वनिका ठहराव नहीं होता। फिर भी र वादी माना गया है। पर र का वादित्व भी दुबल है। र की इस दुबलताके कारण ही, म' केवल र पर खड़ा नहीं हा सकता। जहाँ म की ग का आधार न होकर र का आधार हो वहाँ र के लिए भी ध का आधार आवश्यक है।

इस वनानिक विवचनासे यह सिद्ध है कि ग या र के अभावमें म' और

न, इन दो दुर्बल स्वराका सवाद भाग्य नहीं है। म' और न मेलम दूसर स्वराके सवादी हाकर ही रह सकत है, स्वय वादी होकर नहीं। यदि म'-न का जाडा ठाटमें स्वतंत्र आवें ता इनमें-से एकका वाग मानना पडगा। यह धनानिक दष्टिस ग्राह्य नहीं है। इसलिए इन दो स्वरामें-से किसी एकका वाग, जैसे र या ग का ठाटमें अस्तित्व आवश्यक है।

१२६ हिन्दुस्तानी पद्धतिके इन तीन नियमाकी विवचनाके बाद मेल रचनामें इनका उपयोग करना आवश्यक है। मेल रचनाक (क), (ख) और (ग) नियमाक उपयोगसे बेंकटमञ्जीने ७२ मेलकर्त्ताआका निरूपण किया है जिन्हें परिगिष्ट १ क में काष्ठबद्ध दे दिया गया है। इनकी रचना विधि भी बताया जा चुकी है (अनुच्छेद १०९)। अब इन ७२ मेल-कर्त्ताओंमें यदि हिन्दुस्तानी पद्धतिके नियम (१) का उपयोग करें तो क्रमदा 'र र और 'ग ग' के प्रयोगके कारण परिगिष्ट १ क के चक्र १ और चक्र ६ पूरके-पूरे लुप्त हो जाते हैं। यह लपकेवल पूर्वाङ्गक कारण हुआ। यदि उत्तराङ्गका विचार करें ता दोष चार चक्रामें, 'ध ध और 'न न' के प्रयोगक कारण, नीचे दिये हुए मेलोंका भी निराकरण हो जाता है—

चक्र २—७ और ४३ १२ और ४८।

चक्र ३—१३ और ४९ १८ और ५४।

चक्र ४—१९ और ५५, २४ और ६०।

चक्र ५—२५ और ६१ ३० और ६६।

एस प्रकार, सब मिलाकर इन ४० मेलका हिन्दुस्तानी पद्धतिमें कोई स्थान नहीं है। रामस्वामोने इसी पहले नियमकी मानकर दोष ३२ मेलके आधारपर 'लपु मेलकर्त्ता' का निरूपण किया है। यह परिगिष्ट १ ख में काष्ठबद्ध दिया गया है।

अब इन दोष ३२ मेलामें नियम (२) को लगाना है। परिगिष्ट १ (ख) के ऐसे मेलका विवरण नीचे दिया जाता है जिनके कोई न-कोई स्वर सवाहीन है—

## सारिणी १७

| अंक | मेल-क्रमक | मेल सना      | सवादहीन स्वर |
|-----|-----------|--------------|--------------|
| १   | २         | धेनुका       | न            |
| २   | ३         | नाटकप्रिया   | र घ          |
| ३   | १९        | पडविधमागनी   | घ            |
| ४   | ४         | कोकिलप्रिया  | र ग, घ, न    |
| ५   | २०        | स्वणागो      | ग, घ         |
| ६   | ५         | यकुलामरण     | ग            |
| ७   | २१        | नामनरायणी    | ग            |
| ८   | ७         | चक्रवाक      | र            |
| ९   | २३        | रामप्रिया    | न            |
| १०  | ८         | सूपनात       | र            |
| ११  | २५        | पण्मुखप्रिया | म            |
| १२  | १०        | गोर्वाणी     | न            |
| १३  | २७        | हेमवती       | म            |
| १४  | १२        | गौरीमनोहारी  | ग न          |
| १५  | २८        | धमवती        | ग            |
| १६  | १३        | चारुकी       | ग घ          |
| १७  | २९        | ऋषभप्रिया    | ग, म, घ, न   |
| १८  | १४        | सरसागी       | घ            |
| १९  | ३०        | लतागी        | घ            |
| २०  | ३१        | वाचस्पति     | म, न         |

इस प्रकार ३२ मेलामें-से हिन्दुस्तानी पद्धतिके नियम २ के अनुसार इन २० विसवादी मेलोंको निकाल देनेपर १२ सवादी मेल शेष रह जाते हैं ।

इन शेष १२ मेलामें ( १ ) भावप्रिया और ( २ ) सिंहेद्रमध्या, ये दो मेल हैं जिनके स्वर-संस्थान नीचे दिये जाते हैं—

(१) भावप्रिया १७ ( परिशिष्ट १ स )—

स र ग म' प ध न स ।

(२) सिंहेद्रमध्या २६ ( परिशिष्ट १ ख )—

स र ग म' प ध न स ।

भावप्रियामें स्वर-संवाद स-प, र-म', ग-ध, और ग-न ह । सिंहेद्रमध्यामें स-प, र-प, ग-ध और म'-न का संवाद ह ।

पर हिन्दुस्तानी पद्धतिके तीसरे नियमके अनुसार म' क साप न का होना आवश्यक ह । जो भावप्रियामें नहीं ह । फिर जहां म'-न युग्म हो वहां र या ग में-से एकका होना भी आवश्यक ह । सिंहेद्रमध्यामें म'-न युग्म तो है पर न तो 'र' है और न 'ग' । इसलिए तीसरे नियमके अनुसार इन दोनों मेलोंका निराकरण हो जाता है ।

इस प्रकार शेष १२ मेलामें से भावप्रिया और सिंहेद्रमध्याको निकाल देनेपर १० ही मेल रह जाते ह जो पूरी तरह सवादी बने जा सकते हैं । ये १० मेल वे ही ह जो पीछे दिये जा चुके हैं ( अनुच्छेद १२४ ) । इहाँ १० मेलोंको भातशब्दोंसे, हिन्दुस्तानी रागोंके स्वर विन्यासकी परीक्षा करके ग्रहण किया ह । पर ऊपरके विवरणमें यह सिद्ध होता है कि विनान और कलाके सिद्धांतापर बने हुए हिन्दुस्तानी पद्धतिके नियमोंकी दृष्टिसे यही १० मेल ग्रहण किये जा सकते हैं ।

१३० अब इन दस सवादी मेलोंके समकत्वपर ध्यान देना आवश्यक ह । सवादीकी दृष्टिसे ये दस ठाट तीन भागोंमें विभक्त किये जा सकते हैं—

(१) पञ्चम-सवादी ठाट ( २ ) मध्यम-सवादी ठाट और ( ३ ) पञ्चम

मध्यम या मिथ्र-सवादी ठाट। पञ्चम सवाती ठाटामें पूर्वाङ्गके प्रत्येक स्वरका उत्तराङ्गके किसी स्वरके साथ सीधा पञ्चम सवाद होता है। इस वगम ( १ ) विलावठ ( २ ) काफो ( ३ ) भरव और ( ४ ) भरवी है। मध्यम सवादी ठाटामें पूर्वाङ्गके प्रत्येक स्वरका उत्तराङ्गके स्वरके साथ मध्यम सवाद होता है। इस वगमें ( ५ ) खम्माज और ( ६ ) आसावरी है। मिथ्र सवादी ठाटामें पूर्वाङ्गके किसी स्वरका तो उत्तराङ्गके स्वरके साथ पञ्चम-सवाद होता है और किमाका मध्यम-सवाद। इन वगम ( ७ ) टोडी ( ८ ) यमन ( ९ ) पूर्वी और ( १० ) भारवा हैं। इनमें-से प्रत्येकका अङ्ग विश्लेषण नीचे दिया जाता है जिससे इनका यमकत्व प्रत्यक्ष होगा—

१—पञ्चम सवादी—

|             |                 |                 |
|-------------|-----------------|-----------------|
|             | पू              | उ               |
|             | ⏟               | ⏟               |
| (१) विलावठ— | स १ र १ ग १ म १ | १ प १ ध १ न १ स |

|           |                 |                 |
|-----------|-----------------|-----------------|
|           | पू              | उ               |
|           | ⏟               | ⏟               |
| (२) काफो— | स १ र १ ग १ म १ | १ प १ ध १ न १ स |

|          |                 |                 |
|----------|-----------------|-----------------|
|          | पू              | उ               |
|          | ⏟               | ⏟               |
| (३) भरव— | स १ र १ ग १ म १ | १ प १ ध १ न १ स |

|           |                 |                 |
|-----------|-----------------|-----------------|
|           | पू              | उ               |
|           | ⏟               | ⏟               |
| (४) भरवी— | स १ र १ ग १ म १ | १ प १ ध १ न १ स |

इनके दोना अङ्गके बीच एक स्वरका व्यवधान है इसलिए इन्हें वियुक्ताङ्ग ( विश्लिष्टाङ्ग ) मेल कहेंगे। दोना अङ्गक अलग हो जानेसे इनके यमकका भी 'मित्त यमक' कहेंगे।

१ यहाँ १ अङ्क एक स्वरके अंतरालके लिए और १ अर्ध स्वरके अंतरालके लिए प्रयुक्त हुआ है।

(५) सम्माज—  
 स १ र १ ग १ म १ प १ ध १ न स  
 पू उ

(६) आसावरी—  
 स १ र १ ग १ म १ प १ ध १ न स  
 इनके दानों अङ्ग मध्यमपर आपसमें मिल गये हैं इसलिए इन्हें युक्ताङ्ग ( विलिष्टाङ्ग ) कहेंगे और इनके यमकको 'बिन्दु-यमक'।  
 ३—मिश्र-सवादी—

(७) टोड़ी—म १ र १ ग १ म १ प १ ध १ न १ स १ र  
 पू उ

(८) यमन—  
 स १ र १ ग १ म १ प १ ध १ न १ स  
 पू उ

(९) पूर्वी—  
 न १ स १ र १ ग १ म १ प १ ध १ न स  
 पू उ

(१०) मारवा—  
 न (स) र १ ग १ म (प) ध १ न  
 —१— उ

इन चार में का यमकत्व पञ्चम और मध्यम-सवादीका मिश्र हानव सरल नहीं है। इनमें यमकका क्षेत्र खिसक गया है। इसलिए इस

यमकको 'अपसत यमक' कहा जायेगा । यह अपसारण म' वाले मेलामें ही दीख पड़ता है । पर अपसत हानेपर भी टोडी और यमनमें बिन्दु यमक, और पूर्वोमें भिन्न यमक दीख पड़ता है । यह तो स्पष्ट ही है कि जहाँ दोना अङ्गामें पूण पञ्चम सवाद रहता है वहाँ विद्युक्ताङ्ग भिन्न यमक होता है और जहाँ मध्यम सवाद रहता है वहाँ युक्ताङ्ग बिन्दु-यमक । टोडीमें स-प और र-ध पञ्चम-सवादी है और ग-ध, म-न मध्यम-सवादी । इसलिए स-प और र-धका उलटा प-स और ध-र लेनेसे ग स ग तक पूण-म-यम सवाद स्थापित हो जाता है और इस प्रकार यमक ग पर खिसक जाता है । ऐसे ही यमनम स को छोड़कर स ले लेनेपर यमक र पर चला जाता है । पूर्वोमें म-न ही एक मध्यम सवादी है । इसलिए मध्य न के बदले म-द्र न लेनेसे न-म भी पञ्चम-सवादी हो जाता है और न से न तक पूण पञ्चम-सवाद स्थापित होता है । इस तरह टोडी और यमनमें तो बिन्दु यमक और पूर्वोमें भिन्न यमक पाया जाता है । इस यमक भावकी सिद्धिके लिए ही पूर्वो रागके मुख्य तानामें 'न, स र ग' माना जाता है ।

मारवाका यमक जोर ठटोकी तरह सरल नहीं है । इस मल्के सवादी हानम कोई स-देह नहीं । इसमें स-प तो पञ्चम सवादी है और र-म, ग-ध और म-न म-यम सवादी है । म'-नका सवाद यहा सिंहेद्रमध्याकी तरह स्वतंत्र नहीं है । क्योंकि निपाद गा-घारके आधारपर है । ग-→न →म →र इस क्रमसे इमक दुबल स्वरकी बली स्वर गा-घारसे पुष्टि होती है । फिर भी इसके पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गमें यमकत्व स्पष्ट नहीं है । पर एक युक्तिसे इसमें यमककी सृष्टि होता है अर्थात् स और प को लोप कर दिया जाये और यमकका क्षेत्र म-द्र न पर लाया जाये तो यमकत्व प्रस्फुटित हो जाता है । अब न स म तक पूर्वाङ्ग और ग स न तक उत्तराङ्ग का अधिकार हागा । पर ये दोना अङ्ग एक दूसरमें घुस हुए हैं इसलिए इहे प्रविष्टाङ्ग कहेंगे और दोना अङ्गके यमकका वक्र यमक कहेंगे । मारवाक ऊपर न्ये हुए विश्लेषणमें यह वक्रयमक लिखाया गया है ।

मारवा ठाटमें वक्रयमककी धारणा स्थूल दृष्टिसे कष्ट-कल्पना सी जान पडती है। पर बात ऐसी नहीं है। यह धारणा व्यवहारसे पुष्ट होती है। यह एक महत्त्वकी बात है कि मारवा ठाटके मुख्य मुख्य रागाम प वजित है जस, मारवा, पूरिया, ललित, पञ्चम, सोहनी आदिम। कुछ अप्रसिद्ध रागामें प का प्रयोग होता है। पर वह दुबल माना जाता है। इस ठाटके मुख्य राग पूरियाका आरोही देखनसे पता चलता है कि यह मारवाके ऊपर बताये हुए वक्रयमकके अनुरूप ही होता है। जस—

न र ग म' घ न र स

कभी न र स, ग भी आता है। पूरिया, मारवा, ललित आदि रागामे 'न र स,' 'न र ग' और 'न र न घ न' मुख्य तान मान जाते हैं। 'हिन्दुस्तानी सगीत प्रवशिका' के लेखक मुरारीप्रसादका बयन है—'बाज लोग ऐसा कहते हैं कि मारवाम 'पडज' सुर एक दम नहीं है।' जा हो पडजक स्वरित हानसे, उसे बिलकुल तो नहीं छोड़ा जा सकता पर उसकी अप्रधानता स्पष्ट है। इसका अन्तरा भी प्राय 'ग म' घ टुकड़ेसे गुरू होता है जा 'वक्रयमक' का द्योतक है।<sup>१</sup> इन उदाहरणस यह सिद्ध है कि मारवाके ऊपर दिये हुए अङ्ग विश्लेषण और वक्रयमकके निरूपणका आधार प्रचलित प्रयोग है। इसका साथ ही साथ यह भी सिद्ध होता है कि हिन्दुस्तानी सगीत-पद्धतिम दो अङ्ग कि यमककी अनिवायताको कितना महत्त्व दिया गया है। इस पद्धतिका कवल पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गक सवादस ही सन्तोष नहीं होता। इसका ध्येय ता ग्राम या मेलके यमकत्वके आधारपर रागकी स्फुटित करना है। अङ्ग-सवादकी आकांक्षा इसी यमकत्वक लिए है।

१ हिन्दुस्तानी सगीत प्रवशिका—भाग २ पृ० १८।

२ ध्याधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिमें स्वरित स का प्रधानता होने पर भी यह मारवा मल भरतक स प वर्णित ओडव जातिका विलक्षण उदाहरण है।



संयुक्ताङ्ग और वियुक्ताङ्गम केवल क्षेत्रका भेद है । यदि मेलको मध्य सप्तकके दोनों ओर बनाया जाये तो यह दोख पडेगा कि जहाँ मध्य-सप्तकमें वियुक्ताङ्ग है वहाँ इसके दोनों ओर तार और मन्द्रमें संयुक्ताङ्ग होगा और जहाँ मध्यमें युक्ताङ्ग है वहाँ तार और मन्द्रमें वियुक्ताङ्ग होगा । युक्ताङ्ग और वियुक्ताङ्ग एकके बाद एक आत ही रहेंगे, चाहे मेलको जितना भी बढ़ाया जाये, जैसे—

वियुक्ताग युक्तांग वियुक्ताग युक्ताग

१ स र ग म प ध न म र ग म प ध न स र ग म  
युक्ताग वियुक्ताग युक्ताग वियुक्ताग

२ स र ग म प ध न म र ग म प ध न स र ग म

तात्पर्य यह कि किसी मेलमें एक बार यमक बन जानेपर यह कभी टूटता नहीं चाहे मेलका जितना ही विस्तार हो । हिन्दुस्तानी सगीतका एक चतु संघात ही या एक अङ्ग ही इकाई है, जो बार बार दोहराया जाना है । इसी एक कड़ीसे ग्रामकी लम्बी साकल बनी है । दाक्षिणात्य पदधनिकी इकाई या कड़ी स से सं तक पूरा सप्तक है । इसीलिए हिन्दुस्तानी पद्धतिम सप्तकके भीतर भी यमक चाहिए जो दाक्षिणात्य पदधतिक लिए आवश्यक नहीं है । इस आभ्यन्तरिक यमकके कारण ही राग भाव और रसकी एकता बनी रहती है ।

यहाँ यह बता देना भी आवश्यक है कि एक ठाटम एक ही प्रकारका यमक होना आवश्यक नहीं है । किसी किसी ठाटमें एकस अधिक यमक भी हो सकते हैं । जैसे, अगर भरवी ठाटका देखा जाये तो पता चलेगा कि इसके दोनों अङ्गोंमें एक तो शुद्ध पञ्चम-सवाद है, दूसरा मिश्र सवाद है । अर्थात् स म, ग ध, म न और प-स म तो मध्यम-सवाद है और रू ध में पञ्चम सवाद । इस मिश्र सवादके कारण भरवी ठाटमें

'अपसृत यमक भी होगा। जस—

स र ग म प धृ न् स र

भरवी रागकी गतिसे पता चलता है कि इस अपसृत यमकका उपयोग हम रागके अन्तरामें हाता है।

ऊपरके विचारासे हिन्दुस्तानी सगीतम 'यमक भाव' का अधिकार सिद्ध होता है। यह इस पद्धतिकी विशेषता है। इस यमकके सिद्धान्तपर प्रत्येक रागका विश्लेषण किया जाये तो रागकी प्रकृतिका पता लगाया जा सकता है। पर यह एक स्वतंत्र विषय है। यहा तो केवल सिद्धान्तका निरूपण करना ही लक्ष्य है।

१३१ \* प्राचीन कालसे ही रागाक विभागकी एक विशेष प्रथा प्रचलित है जिसके अनुसार राग तीन वर्गोंमें विभक्त किये जाते हैं—(१) शुद्ध, (२) छायालग, सालङ्क या सालग और (३) सकीर्ण या मिश्र। भरतक जाति विभागामें भी इसका सकत मिलता है। मातङ्ग और शार्ङ्ग देवने भी इसकी चर्चा की है। शुद्ध व राग समझे जाते हैं जो अपने शुद्ध रूपम ही। छायालगमें दूसरे रागकी भी छाया होती है। सकीर्ण शुद्ध और छायालगका मेल है। प्राचीन रागाका रूप अनात होनेसे यह वर्गीकरण भी दुर्बोध है। पर इसका प्रसंग आधुनिक ग्रन्थामें भी पाया जाता है। अतिया वगम इसके विषयमें लिखती है— 'शुद्ध उन रागाका नाम है जिनके स्वर अपनी मौलिक शुद्धतामें चले आ रहे हैं—समय या व्यक्ति के व्यभिचारसे जिनमें विकृति नहीं होनी पायी है जैसे, ६ राग (पुष्प राग) और कुछ मुख्य रागिनियाँ (स्त्री राग)।

सालङ्क व राग है जिनमें दूसरे रागाकी छाया है। ऐसे राग बहुतेसे हैं।

सकीण वे राग ह जो या तो दो गुदघ रागों या पाँच या छह रागि  
नियावे मेलसे बने हा । इनकी संख्या बहुत ह ।

महासालङ्क वे राग ह जो सालङ्क और सकीणके मेलमे बने हा ।  
इनको सख्याका कोई अन्त नहीं । कुछ ग्रन्थामें 'महासालङ्क'की जगह  
'महासकीण' आया ह ।

स्ट्रुड्वेञ्जवा मत है कि तिन मेलके दोना अङ्गामें यमक होता ह उन्हें  
'गुद' कहा जाता है जिनमें यमक नही होता ऐसे विषम मलाको 'सकीण'  
या 'मिथ्र' कहते ह । 'छायालग' उन मेलक लिए आता है जिनमें तीघ्र न  
को कोमल या कोमल न को तीघ्र कर दिया जाता है । ऐसा जान पडता  
ह कि अब हिन्दुस्तानमें छायालगका व्यवहार आकस्मिक न और न दोनाके  
लिए होता है । इसक सरल उदाहरण ह थिझोटी ( न ) और विहाण  
( म' ) इनमें । न और म' अधिक स्वर नहीं, वक्तिक है । यह नियम  
दूसर स्वराम भी लगाया जाता ह, जैसे देसमें गू ।'

उनकी यह भी धारणा ह कि "ये तीना भेद भरतकी ज्ञात थे यद्यपि  
उन्होंने इनके नाम दूसर ही दिये ह । विषम चतु सघाताक मिथ्रको व  
जाति-साधारण कहते हैं ।'

स्ट्रुड्वेञ्जकी यही व्याख्या यथाय मालूम पडती ह । जो हो इस  
व्याख्याको यदि स्वाकार किया जाये ती वर्गीकरणके आधारपर उत्तरीय  
और दक्षिणात्य पद्धतिका व्यवधान मिट जाता ह और दोनामें एकता  
स्थापित हो जाती ह । फिर इस वर्गीकरणका प्रसंग दोना ही पद्धतियके  
आधुनिक ग्रन्थोंमें भी पाया जाता ह ।

स्ट्रुड्वेञ्जवे मतानुसार सरल शब्दामें ( १ ) यमक मेलका गुदघ,  
( २ ) विषम मेलको सकीण और ( ३ ) दोना गायधर, दोना निपाद  
आदिवाल मेलको छायालग कहेंगे ।

इस परिभाषाके अनुसार वैकटमखीके ७२ मेलका विभाग इस  
प्रकार होगा—

(१) गुदघ—भातखण्डके १० हिन्दुस्तानी मल ।

(२) सकीर्ण—रामस्वामिके ३२ मेलामे-से शेष २२ मेल ( परिगिष्ट १ ख ) ।

(३) छायालग—बकटमखीके ७२ मेलामें-स शेष ४० मेल ( परिगिष्ट १ क ) ।

उत्तरीय और दक्षिणात्य सगोनक इस समिधणके उद्देश्यमे स्टूटवेजकी परिभाषाके अनुमार रागाक गुदघ सकीर्ण और छायालग भेदको महत्त्व देना आवश्यक ह ।

### [ घ ] वादी सवादो

१३२ मेलगत यमकके साथ रागके वादी-सवादोका घनिष्ठ सम्बन्ध है । भरतको पद्धतिमे वादी-मत्रादो अनुवादी विवादी, ये स्वराके पारस्परिक सम्बन्ध माने जात थे । जातिके प्रधान या जीवस्वरको अश कहा जाता था । अब वाग्ने-सवादो आदि रागकी ही उपाधियाँ माने जाते हैं । रागका जो मुख्य या जीवस्वर होता ह उस अब अग न कहकर वाग्नी कहते हैं । इस वाग्नेपर ही रागकी प्रकृति निर्भर ह । दो राग एक ही ठाटके हा, दानाक स्वर समान हो, जाति (ओडव या सम्पूर्ण) एक हा, फिर भी वादी भेदसे दोना रागको प्रकृतियाँ भिन्न भिन्न होती हैं । जैसे, भूपाली और देशकारके स्वर प्रबन्ध बिलकुल एक-से हैं । दोना ही ( म न वजिन ) ओडव



जातिवे है । दोना ही वा आराही-अवरोही सर ग प घ स ह । पर



भूपालीका वाग्नी गांधार है और देशकारका धवत । इस वादी भन्से ही दोनाकी प्रकृतिमें स्पष्ट अन्तर लीख पडता ह । इसी प्रकार पूरिया-भारवा, रवा-विमास आदिमे जा अन्तर है वह वादीके कारण ही ह । वाग्ने ही रागोंमें अविनय आता ह उसका रूप निखरता ह । चतुर गवया वादीको

आत्मनवारोका केन्द्र बनाता है। इसीलिए आलापमें रागका सन्धा रूप खिलता है। रागके दोना अङ्गोंमेंसे एक अङ्गमें वादी स्वर निश्चिन हो जानेपर दूसरे अङ्गमें इस वादीका मध्यम या पञ्चम बनायास सवादी स्वर निश्चिन हा जाता है। दोना यमक-अङ्गोंमेंसे एकका केन्द्र वादी स्वर और दूसरेका सवादी स्वर होता है। इस प्रकार वादी और सवादी सप्तकके दोना अङ्गाको जोडने हैं। दोना अङ्गाके यमकत्वके साथ-साथ दोनों केन्द्रका सवाद रागकी इष्टता और एकरसताके लिए बडा महत्व रखता है। एक अङ्गके वादी स्वरसे जब गवैया दूसरे अङ्गके सवादी स्वरपर जाता है तो रागकी प्रकृति ज्याकी-त्या बनी रहती, भावमें कोई बाधा नहीं पडती।

१३३ वादी और सवादीका पारस्परिक अन्तराल ३ या ५ होता है। इनके मुगम स-म स-म, र-म, रघ, ग-म्व ग-न, ग-ध, ग-न र-ध है। सारिणी ५ को देखनमे पना चलोगा कि इन मुगमोंमेंसे प्रत्येकका अन्तराल ५ या ३ है। मध्यम अन्तराल तो पञ्चमका ही पत्ता है क्योंकि जहाँ र-म ग-ध और ग ध का अन्तराल ५ है वहाँ प र, प-ग और ध-ग का अन्तराल ३ है। अर्थात् जहाँ दो स्वरांमें मध्यम सवाद हो वहाँ उपरले स्वरको एक सप्तक उतार देनेसे पञ्चम-सवाद हो जाता है और जहाँ पञ्चम-सवाद हो वहाँ निचल स्वरको एक सप्तक घडा देनेपर मध्यम-सवाद हो जाता है।

यह बताया जा चुका है ( अनुच्छेद ५५ ) कि ३ या ५ का अन्तराल सबसे अधिक इष्ट होता है। इसीलिए इन अन्तरालका पाश्चात्य संगीत पद्धतिकी सहनि क्रियामें उपयोग होता है। पर ऐम दो स्वरांका सहनिम जैसे साथ-साथ उच्चारण इष्ट होता है बसे ही सङ्गममें एकके-बाद एक उच्चारण भी इष्ट होता है। इसलिए सवादके नियमके अनुसार रागक वादी और सवादी स्वरांके बीच सञ्चार कलाकी दृष्टिसे जितना प्रिय है विनासकी दृष्टिसे उतना ही पूण है।

सवादके नियमका किसी किसी रागमें व्यतिक्रम भी दीस पडता है, जैसे मारवामें रू ध सवाद और श्रीमें रू-म सवाद। ये दोना ही अन्तराल

अनिष्ट है। यहाँ इन दो स्वरों की इष्टता के वजह से इनकी गिनती का विचार रखा गया है। उद्देश्य रागाका भेद सिखाना है। जब पूरियामें ग न मवात्त है तो मारवामें र घ सवाद होनेपर ही यह परिमाण भिन्न दिखाया जा सकता है। पर यह ध्यान देने की बात है कि प्रयोगमें इष्टताका सम्कार छूटन नहीं पाता। हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिकाकी तीसरी पुस्तकमें श्रीरागका आरोही स र र स र म' प नि सा जीर पचड स र र स, प म स रू ग रू, र स' दिया गया है। इनमें यह दाग्य पडना है कि रू से म' पर और स म प पर प्लुतसे पहुँचत है— र प प्लुतना प्रयोग नहीं है। वस ही मारवाम र के बाद होनेपर भी 'ग की प्रधानता स्पष्ट है। इन उदाहरणोंसे यह सिद्ध है कि ऐसे अपवादों से हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिक सवाद-नस्वमें कोई व्याधान नहीं पडता।

१३४ हिन्दुस्तानी रागाका छान-बीन करनेपर पता चलता है कि वादीके रूपमें म, म और प का सबसे अधिक प्रयोग होता है। इनके बाद स्थापन है शुद्ध गाधारका। ग के बाद र और घ आत है। ग घ और र में धू का प्रयोग सबसे अधिक होता है। पीछे दिये हुए (अनुच्छेद ५५) इष्ट स्वरोंको देखनेसे विदित होता है कि वादी स्वरोंमें इष्टता हाना आवश्यक है। साथ ही साथ जिन स्वरोंमें जिनकी अधिक इष्टता है वादी रूपमें उनका प्रयोग भी उतना ही अधिक होता है। तीव्र र इष्ट नहीं है। पर र का प्लुतता तमूरके पञ्चमपर निर्भर है। र के साथ प मवानी जाता है। इसलिए बटून-से रागामें जिसका र वादी है प को ही प्रधानता रहती है। केवल रातका राग जानेके कारण र को बल मान लिया गया है। जिन रागाम र वादीके रूपमें पूरी तरह विलीन है उसे जयजयवादी और दरवारीमें, उनमें मद्र प के साथ र का संगति धार-वार दिखाया जाती है। इन उदाहरणोंमें यह स्पष्ट है कि जहाँ र वादी जाता है वहाँ यह पडजाकर आधार छोड़कर म र प पर अटकता है।

रू, गू और धू का वादित्व कुछ विलक्षण है। वादी स्वरोंका प्रस्फुटन

मुख्यतः दा क्रियाओंसे दिखाया जाता है। एक ता लीनकसे, अर्थात् वादी स्वरपर देर तक ध्वनिक ठहरावसे और दूमरी वादी स्वरके बार बार प्रयोगसे। 'प्रयोग बहुल' स्वर। वादी रागाऽत्र गीयत।' र और घ म इस दूमरी क्रियाका प्रयोग होना है। र अति अनिष्ट जोर ग, ध् अल्प इष्ट स्वर है इसलिए ये लीनकमें स्वरितके साथ नहीं ठहर सकते। इन स्वराका गमकके साथ उच्चारण करके ध्वनि पड्ज और पञ्चमपर ही आकर ठहरती है। पर हिन्दुस्तानी सगीतक सामान्य व्यवहार और धना निक विचारसे यह स्पष्ट है कि वादीका लीनकत्व प्रधान गुण है। इस लिए र् ध और ग को गौणवादी मानना ही उचित है। म प, ग आदिम दोना ही क्रियाएँ हो सकती हैं पर र ध और ग् में एक ही क्रिया सम्भव है।

न और न कभी वाणी न होकर केवल मवादो हात है जोर म न तो वादी और न सवादी होता है। इसका कारण पहले बताया जा चुका है (अनुच्छेद १२८)। पड्जके सम्बन्धसे न (  $\frac{१}{२}$  ) अनिष्ट स्वर जोर म' (  $\frac{५}{३}$  या  $\frac{१}{२}$  ) ता अति अनिष्ट है। फिर न का तार स स और म का प स म् स्वरका अन्तराल है इसलिए इनकी अनिष्टता अधिक बाधक हो जाती है। वैसे ही न का तार स स एक स्वरका अन्तराल हानसे यह भी अनिष्ट है। इसलिए ये तीना स्वर कभी भी वाणी नहीं मान जाते। म तो ग्राममें सबसे अधिक अनिष्ट है इसलिए यह सवाणी हाने का भी अधिकारी नहीं। सच तो यह है कि र् भी इसा काटिके स्वराम है। अति अनिष्ट स्वर हानसे इसे भी वाणी हानका अधिकार नहीं है। अगर र मच्चा वादी होना तो किसी-न किसी रागम म' (  $\frac{५}{३}$  ) भी सवाणी अवश्य माना जाता। पर म का कही सवाणी न हाना इस बातका सिद्ध करता है कि र् का वादित्व चाह भ्रात है या कल्पित।

ऊपरकी विवेचनासे यह सिद्ध है कि स्वराका वादित्व उनकी दृष्टापर निर्भर है। इस दृष्टिसे स्वराका विभाग सारिणीमें दिया जाता है—

सारिणी १८

| स्वर  | इष्टता         | वान्त्व           | क्रिया     |
|-------|----------------|-------------------|------------|
| स प म | अति इष्ट       | मुख्य वादी सवादी  | लीनक, बहुल |
| ग घ   | इष्ट           |                   |            |
| र     | पञ्चम ऋष्ट     | गौण वाणी सवाणी    | बहुल       |
| ग घ   | अल्प इष्ट      |                   |            |
| न न   | अनिष्ट         | कवल सवाणी         | बहुल       |
| र     | अति अनिष्ट     | कल्पित वाणी सवादी | बहुल       |
| म'    | अति अति अनिष्ट | न वाणी न सवादी    |            |

ऊपरक विचारमे यह विन्ति ह कि जा ऐसा मानते हैं कि हिन्दुस्तानी संगीतक वाणी-सवादी विचारका भरतक मवात्स कोई सम्बन्ध नहीं अर्थात् हिन्दुस्तानी संगीतक वाणी और सवाणीमें चार या पाच स्वराका अन्तर होना हा यथष्ट ह, इनमें ठीक ठीक ९ या १३ श्रुतियाका अन्तर हाना आवश्यक नही व हिन्दुस्तानी संगीतकी प्रवृत्तिका नही समझते । इस पद्धतिम वाणी सवादीक नियमक लिए दा नियमाका उपयोग आवश्यक ह—( १ ) वाणी स्वर पटज या स्वरितक सम्बन्धस इष्ट हा और (२) वादा और सवादा स्वरामें पञ्चम (३) या मध्यम (५) का सच्चा अन्तराल हा । कुछ अपवादास इन नियमाका मूल्य नही घटता । इन नियमाका आधार भरतकी परम्परा रागाका यमकत्व और एक रसता तथा तमूरेकी संगति ह । इसलिए इहें उपेगाकी दृष्टिस नहीं देखा जा सकता । किसा रागके ठाटका-



पहले दो यमक अङ्गमें बाटना फिर एक अङ्गके किसी इष्ट स्वरको वादी निश्चित करना और तब दूसरे अङ्गमें वादीक पञ्चम (३) या मध्यम (५) स्वरको सवादी मानना—इसी प्रक्रियाम वादी सवादी निर्धारित होता है ।

१३५ गाधार-सवाद—यह बताया जा चुका है कि ग (५) और ग (६) में भी इष्टता है । इसलिए पाश्चात्य संगीतमें स-प स-म सवादकी तरह ही स-ग या स-ग सवाद भी माना जाता है । इसीसे महत्त्वक सघातामें गाधारका भी समावेश होता है जैसे 'स ग प' का गुरु सघात और 'स-ग-प' का लघु सघात (अनुच्छेद ६२) । हिन्दुस्तानी संगीतमें स-प, स म सवादको कितना महत्त्व दिया गया है इसकी चर्चा की जा चुकी है । पर इसमें गाधार सवादका प्रयोग भी विशेष रूपसे हाता है । बहुतरे रागा म कुछ 'सगति' विशेष रक्तिदायक मानी जाती है जो रागक परिचायक भी है । वा विशेष स्वरोंके एक-एक-एक लगातार उच्चारणको 'सगति' कहते हैं । सगतिमें कमसे कम एक स्वरका लघन होता है । इसलिए सगतिक दो स्वरोंमें कभी-कभी मध्यम (५) या पञ्चम (३) का अंतराल होता है, पर अधिक ग (५) या ग (६) का ही अंतराल दीख पड़ता है । यह 'सगति हिन्दुस्तानी संगीतकी विशेषताओंमें-स एक है । यह कहा जाता है कि दक्षिणात्य रागाका विकास पग पगके सञ्चारसे होता है और उत्तराय रागोंका विकास मण्डूक-प्लुति' या लघनसे । जहाँ भी प्लुत होता है वहाँ इष्ट अन्तरालका ही प्रयोग होता है । इसलिए हिन्दुस्तानी संगीतकी सगति में गाधार-सवादकी प्रधानता है । यह नीचेकी सारिणीमें लिये हुए कुछ उदाहरणोंसे स्पष्ट होगा ।

## सारिणी १६

| राग         | सगति       | अतराल   |
|-------------|------------|---------|
| दरवारी      | न-प        | ६ ( ग ) |
| श्यामकल्याण | म-र ( १० ) | ६ ( ग ) |
| मालथी       | ग-प        | ६ ( ग ) |
| दुर्गा      | ध-म, र-म   | ६ ( ग ) |
| खवावती      | ध-म        | ६ ( ग ) |
| तिलग        | न-प        | ६ ( ग ) |
| रागेश्वरी   | ध-म        | ६ ( ग ) |
| सौरठ        | ध-म, म-र   | ६ ( ग ) |
| जागिया      | ध-म        | ६ ( ग ) |
| धनाथी       | प-ग        | ६ ( ग ) |
| हसकिक्णा    | प-ग        | ६ ( ग ) |

इस सारिणाम मध्यम-सवादवाली या पञ्चम-सवादवाली स्वर-संगीत नहीं दो गयी है क्योंकि एता सगतियाकी इएता तो प्रत्यक्ष है। कुछ रागामें र-म या म-र सगतिका प्रयोग होता है। ऐसी सगतियामें ऋपमका मान है न होकर १० हाना आवश्यक है, नहीं तो र-म प्लुत अनिष्ट हो जायेगा। ऊपरके कुछ उदाहरणासे ही यह स्पष्ट है कि हिन्दुस्तानी रागाको मुख्य मुख्य सगतियाम गा-वार-सवादकी प्रधानता है।

१३६ विवादी—भरतकी पद्धतिमें जब दो स्वरांक बीच दो श्रुति या अथ स्वरका अंतर होता है तो वे परस्पर विवादा माने जाते हैं। हिन्दुस्तानी पद्धतिमें वाग सवातीकी तरह हा विवादीका भी रागाम प्रयोग होता है। आधुनिक संगीतज्ञ प्रायः विवादीकी परिभाषा 'वज्य स्वर' बताते हैं।

इस परिभाषाक अनुसार भक्तक अध स्वरका बंधन नहीं रहता, जैसे, यमन ठाटक मालश्री रागमें र और घ वज्रित ह जो क्रमश स और ग स और प और न स एक एक स्वरक अंतरपर है।

पर वज्रित स्वर' से क्या तात्पर्य है ? यदि १२ स्वरवाला अधस्वरक ग्रामको ल ता सम्पूर्ण रागाम भी ५ स्वर वज्रित मानने पटग। पाडव और ओडवम ता क्रमश ६ और ७ वज्रित हागे। यदि मात स्वरवाले ठाटका लें तो पाडव और ओडवम क्रमश १ और २ स्वर वज्रित हाग। सम्पूर्णमें कोई भी स्वर वज्रित न होगा। आधुनिक पद्धतिमें ठाटके प्रगममें ही वज्रित स्वरका व्यवहार होता है। जब मालधाम र जोर घ वज्रित कहा जाता है तो अभिप्राय यह हाता है कि यमन ठाटके ७ स्वरांमें-से य दो स्वर वज्रित ह। यदि १२ स्वराका ध्यान होता तो रू, र, ग म, घ घ जोर १ ये साता स्वर वज्रित समने जात। अब यदि विवादी' का अध ठाटका 'वज्रित' स्वर माना जाये तो एक गडबडी या खडी हाती है। कामोद यमन ठाटका सम्पूर्ण राग समथा जाता है। अथात इसमें कोई स्वर वज्रित नहीं है। पर विधान यह है कि इस रागम न का धवतन माथ 'विवादी' रूपमें प्रयाग हाता है। यदि वज्रित और विवादीका अथ एक ही हा तो फिर यह न विवादी कहांस आया ? इसी तरह कदार आडव पाडव माना जाता है क्योंकि इसके आराहम र और ग वज्रित है और अवरारहमें ग दुबल या वज्रित है। पर इस रागमें भी विवादी रूपम र या ग का प्रयाग न हाकर धवतन माथ न का प्रयाग हाता है। इन दृष्टांतास यह प्रकट हाता है कि न ता ल गणम और न लक्षम 'विवादी' और वज्रित पर्यायवाचा गद है। आडव जोर पाडव रागाम यदि वज्रित स्वरका प्रयाग हा तो राग भ्रष्ट हा जायेगा पर विवादी स्वरका धोनी मात्राम गुणलतास प्रयाग हा तो वह रक्विनायक हाता है। इस विचारस वज्रित स्वर ठाटक उस स्वरका कहेंग जिनका रागम कभो प्रयाग नहीं होना। अथात जा उस ठाटका स्वर तो है जिसस राग तिकला है

पर उम रागका स्वर नहीं है । 'विवादी' उसे बहेगे जो रागक जनक ठाटक बाहरका स्वर ह और जिमका अन्तर रागक किसी बली स्वरस अध स्वर या दो ध्रुति ह । 'वज्य स्वर असलम 'मेल ग्राह्य' पर राग-वज्य' है और 'विवादी स्वर' मेल वज्य' ह । 'वदार' रागकी रचना जनकमेल यमनमें आराहीमें र, ग और अचराहीम ग का लाप करके होती ह । इसलिए ये वजित स्वर मान जायेंग । पर न्, जो जनकमलक बाहरका स्वर ह विवादी माना जायगा । यह धवतस अध स्वरक अतरपर ह और इसका प्रयोग भा धवतक साथ ही हाता ह । वजित स्वरका कभी प्रयोग नहीं हाता । पर विवादीका द्विध्रुतिक स्वरक रूपमें कभी-नभा प्रयोग हाता है । वजित स्वरका रागमें 'अभाव' ह पर 'विवादी का वादी और सवादीकी तरह ही रागम भाव ह ।

नोचेकी सारिणीमें कुछ मुख्य-मुख्य रागक विवादी स्वर दिखाये जात है —

### सारिणी २०

| राग       | ठाट    | विवादी स्वर | सगति | अन्तराल         |
|-----------|--------|-------------|------|-----------------|
| यमन       | यमन    | म           | ग-म  | ३ $\frac{१}{२}$ |
| हमार      | यमन    | न्          | घ-न  | ३ $\frac{१}{२}$ |
| चेन्नर    |        |             |      |                 |
| कामीद     |        |             |      |                 |
| छायानट    |        |             |      |                 |
| गौड-सारंग | विलावल | न           | घ-न  | ३ $\frac{१}{२}$ |
| अहूपा     |        |             |      |                 |
| दस        |        |             |      |                 |

इस सारिणीमें म, न् और न् विवादीके रूपमें आये हैं जिनका प्रयोग क्रमग ग, घ और र क साथ ही होता ह । ये प्राय 'ग म ग',

'ध न ध' 'र ग र' तानक रूपम गमकके साथ आत ह । इसीलिए इन विवादी स्वराका रागके लानक स्वराके साथ ही प्रयाग हाता ह ।

पर विवादीके प्रयागम भी सवादकी भावना लुप्त नही हाती । म, न और ग अधस्वरक होनेस क्रमग लीनक स्वर ग, घ और र के साथ तो विवादी ह पर रागमें इनका सवादी स्वर भी अवश्य रहता ह । यमनम म का सवादी स, रसम गू का सवादी नू और अल्हमा म न का सवादी म ह । हमीर, वेदार, कामोद, छायानट और गौड सारग यमन ठाटके माने जाते ह पर इनम गुद्ध म की प्रधानता रहती ह—म' का प्रयाग पञ्चमके साथ प्रवेगकक रूपम होता ह । इसलिए इन रागमें भी विवादी न का सवादी गुद्ध म रागमें मौजूद ह । पर यमनम गुद्ध म के अभावसे न का प्रयाग विवादीके रूपम नही हाता ।

विवादो की इम विचचनासे यह सिद्ध ह कि हिन्दुस्तानी सगीनमें वादी सवातीकी तरह ही विवादीका भी सच्चे भरतके अधम ही प्रयोग होता ह । आधुनिक लक्षणकारान इस वज्य स्वर का पर्याय मानकर लक्ष्यकी परम्पराके साथ ध्यय ही अगमय किया ह । लभ्यम रागक विवादी स्वरका अपन पडोसी किसी लीनक स्वरके साथ अध स्वर या दो थुतिका जनर होना आवश्यक ह साथ हा-साय उस विवादीका एक सवादा स्वर भा अवश्य हाना चाहिए, नही तो वह रागम खप नही सक्ता । भरतक विवादीम ये दाना ही लक्षण पाय जात ह ।

### [ च ] श्रुति प्रयोग

१३७ आधुनिक पाश्चात्य ग्रामकी तरह ही आधुनिक हिन्दुस्तानी ग्राम भा १२ रागियाम बटा ह । पर क्या ये १२ स्वर ध्रुव ह या ये अपने स्थानस विचलित भी हात ह ? यदि विचलित होते ह तो किस अशम ? क्या भरतकी श्रुतियाका प्रयाग अब भी प्रचलित ह ? या १२ स्वराक अतिरिक्त जोर स्वराका भी प्रयाग होता ह ? हिन्दुस्तानी रागावी सूक्ष्म रचना समझनक लिए इन प्रश्नापर विचार करना आवश्यक ह ।

ज्ञान शुद्ध गौर पाच विकृत—इन १२ स्वराको प्रधान मानकर ना हिन्दुस्तानी मसौत पण्डित २२ श्रुतियाकी प्रथा अभी तक चलय जा रहे हैं। ध्रुतियाच कारण एक एक विकृत स्वरक कई-कई न ह जाते ह। अहाबलकी पद्धतिम र, ग, घ और न की विकृति उत्तर और चढ़ाव दाना ही दिगाम हुई ह। इससे कई स्वराक दा दा नाम पड गये हैं। आधुनिक हिन्दुस्तानी पद्धतिम र, ग, घ और न का विकृति केवल उत्तरकी ओर होती ह और म की चढ़ावका भार। गुड स्थानमे क्रमश एक एक श्रुति उत्तरनेपर कोमल तीन प्रकारक हान हैं—कामल, अतिकोमल और सहकार। वस हा गुड स्थानस एक एक श्रुति चढ़नपर ताम्र, तीव्रतर और तीव्रनम हान हैं। पण्डित विष्णु दिगम्बरन 'सहकार' की जगह अति-अति कोमल माना ह।

पण्डित भातावण्डन इन अति विकृत स्वराकी उपेक्षा की ह। उनकी स्वर लिपिम इन्हें स्थान नहीं ह। इसम मदह नहीं कि साधारण गायकमें अति विकृत स्वराका व्यवहार नहीं होता। पर इसस यह नहा माना जा सकता कि ऊँचा कोटिकी गायकीमें इनका अभाव ह। हिन्दुस्तानी सगीतमें बहुत-सी गुरु परम्पराए ह जिन्हें 'घराना' कहत ह। हर एक घरानेकी अपना-अपना गायकी होता ह जो और घरानाका गायकास भिन्न ह। घरान घरानेकी गायकीका भेद बहुत-बहुत इन विकृत स्वराक प्रयोगपर निर्भर ह। जस किसी घरानेक नरवमें कोमल धवतका व्यवहार होता ह और किसी घरानेक नरवमें अतिकोमल धवतका। कभी-कभी रागाका भेद उनम जानवाल विकृत स्वराक भेदम लिखाया जाता ह जो दश गायक ही कर सकते हैं। पण्डित विष्णु दिगम्बरन १८ स्वर मान ह, जिनका प्रयोग उन्होंने रागाकी स्वर लिपिम किया ह। इन १८स्वराक अनिरिक्त उहान एव अति अति-कामल ऋषम भा माना ह जिस व पूरियामें लगाते ह।

१३३ \* पूनाके असरकरने पूरे २२ स्वराका निरूपण किया ह और यह भी बताया ह कि किन किन रागाम में लगाय जाने ह। नीचेकी सारिणी

## सारिणी २१

| अंक | श्रुति    | अहोवाल             | विष्णु दिगम्बर | असरेकर    | असरेकर    | राग       |
|-----|-----------|--------------------|----------------|-----------|-----------|-----------|
| १   | छन्दावती  | स                  | स              | स         | —         | —         |
| २   | दयावता    | पूव र              | (अतिअ को र)    | अतिकोमल र | भरव       | भरवी      |
| ३   | रञ्जनी    | कामल र             | अतिकोमल र      | कोमल र    | विभास     | विभास     |
| ४   | रवितका    | गुढ र (पूव ग)      | कोमल र         | गुढ र     | यमनकल्या  | यमनकल्या  |
| ५   | रौण       | कामल ग (तीव्र र)   | गुढ र          | तीव्र र   | टाडी      | टाडी      |
| ६   | क्रावा    | गुढ ग (तीव्रतर र)  | अतिकोमल ग      | अतिकामल ग | भरवी      | भरवी      |
| ७   | वज्रिका   | तीव्र ग            | कोमल ग         | कामल ग    | मालकीम    | मालकीम    |
| ८   | प्रसारिणा | तीव्रतर ग          | गुढ ग          | मध्य ग    | यमनकल्या  | यमनकल्या  |
| ९   | प्रीति    | तीव्रतम ग          | ×              | तीव्र ग   | भरवी      | भरवी      |
| १०  | माजनी     | गुढ म (अ तीव्रत) ग | गुढ म          | कोमल म    | पूर्वी    | पूर्वी    |
| ११  | क्षिति    | तीव्र म            | तीव्र म        | मध्य म    | यमनकल्या  | यमनकल्या  |
| १२  | रक्ता     | तीव्रतर म          | तीव्रतर म      | तीव्र म   | पूरिया    | पूरिया    |
| १३  | सन्दीपनी  | तीव्रतम म          | तीव्रतम म      | तीव्रतर म | —         | —         |
| १४  | आलापिनी   | शुद्ध प            | गुढ प          | गुढ प     | भरव       | भरव       |
| १५  | मदती      | पूव घ              | ×              | अतिकोमल घ | भरवी      | भरवी      |
| १६  | रोहणी     | कामल घ             | अतिकामल घ      | कामल घ    | वि मा कीस | वि मा कीस |
| १७  | रम्या     | गुढ घ (पूव न)      | कोमल घ         | गुढ घ     | यमनकल्या  | यमनकल्या  |
| १८  | उग्रा     | कोमल न (तीव्र घ)   | गुढ घ          | तीव्र घ   | गौड मलार  | गौड मलार  |
| १९  | क्षोभिणा  | गुढ न (तीव्रतर घ)  | अतिकोमल न      | अतिकामल न | भरवी      | भरवी      |
| २०  | ताम्रा    | तीव्र न            | कोमल न         | कोमल न    | मालकीस    | मालकीस    |
| २१  | कुमुदती   | तीव्रतर न          | गुढ न          | मध्य न    | यमनकल्या  | यमनकल्या  |
| २२  | मदा       | तीव्रतम न          | ×              | तीव्र न   | —         | —         |

म श्रुति मन्त्राके साथ पण्डित विष्णुदिगम्बर और अमरकरका स्वर निरूपण दिया गया है। आन्विरो खानमे अमरकरके दिय रागक नाम है जिनमें इन स्वराका प्रयोग हाता ह। दिखानक लिए अहात्रलका स्वर निरूपण भी द दिमा गया ह।

२२ श्रुतियापर इन २२ स्वराका स्थापनास एसा न गमयना चाटिए कि य ज्याकी-न्या भरत या शाङ्गदेवकी श्रुतिर्या ह। यह बताया जा चुका ह ( अनुच्छद १०१ ) कि ग्रामकी २२ या २४ रागियाम विभक्त करनकी अनक विधिया हा सक्ती है और प्रत्येक विधिस भिन्न भिन्न स्वर-क्रम तयार हाता ह। चक्रिक प्रक्रियाम आराहा और अवराहो-क्रममे ग्राम २४ रागियामे विभक्त हाता ह और मक्रमिक प्रक्रियाके द्वारा २२ रागिया में। हिन्दुस्तानी-मगातमें सक्रमिक प्रक्रियाका प्रयोग होता ह। इमलिए २२ श्रुतियाका मानना आवश्यक ह। पर इन श्रुतियाक मान भिन्न भिन्न हा सकत ह।

१६६ रागम विवृत स्वराक अतक भदामे-स किसा एक्का विवन्पस प्रयोग हाता ह। जिन दो स्वरामे एक श्रुतिरा अन्तर हा, वे दाना लगा तार रागमें नहा थात। पर गमकक रूपमें इनका प्रयोग हा सकता ह। इस प्रकारका प्रयोग प्राय सभी पूर्वो दगामे प्रचलिन ह। हल्महाजन अपन एक मित्रका अनुभव बताया ह कि मिश्रण ( डजिस्ट ) मे एक स्वरके चतुर्धाधिक व्यवहार हाता ह। बहुतर तान एक श्रुतिक अन्तरस गुरु हाकर गुरु स्वरपर ठहरत ह। एलिस इसपर टिप्पणा लिखत हुए बतान है—“गायक यह क्रिया बसी हा या जैसी मैत राजा रामपालसिंह ( बालाकोकर ) का अपने मितारपर दिखाने हुए पाया। उहात मुन्दरीपर तार दबाकर स्वर पैना करनमें मुन्दरीपर अङ्गुली विमकाया और इस तरह तारका सोबकर और तारका सिचाव बढ़ाकर स्वरका एक चौथाई ऊंचा कर लिया और तब तारका बिना छड़ साधा कर उस अपन ठोक स्वरपर आनका छोड़ लिया। तार जितनी दूर तक खींचा गया था उस मैत नाप



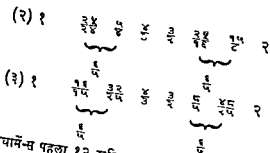
लिया और तब फुसतमें मने अपन द्विभुजसे असलो और चढ़ाये हुए स्वराका आवृत्तियाँ नापो जिनका अन्तराल ४८ सेंट निकला।”<sup>१</sup> एक गुरु स्वर २०३ ७ सेण्ट होता है इसलिए यह अन्तराल लगभग एक स्वरवा चौथाई हुआ। इस प्रकारकी क्रिया घोणा आदि तारके बाजामें प्रायः दखनमें आती है। पर यह निश्चय है कि जहाँ एक ध्रुनिके अन्तरवाल स्वरका प्रयोग होता है वहाँ इसका मान निश्चित नहीं रह सकता।

१४० दादा गणाय पद्धतिके आधुनिक पण्डितान ध्रुनि प्रयोगका विचार विस्तारक साथ किया है। यह तो सभी मानते हैं कि गमकम ध्रुतियाका प्रयोग जाना है। पर सुब्रह्मण्य अम्बरका मन है कि दादा गणाय गायकीमें ‘राग भाव के लिए भिन्न भिन्न ध्रुतियापर स्थित स्वर कामम आने हैं। कामल निपादवाल दा रागाक भाव इसलिए भिन्न भिन्न प्रतीत होते हैं कि दानाक कामल निपाद भिन्न भिन्न ध्रुतियापर है। अम्बरन बतानिक प्रयोग करने अपन विचार निश्चित विषये हैं। उन्हान सारिणा १४ में दिये हुए २२ सक्रमिक स्वराको माना है पर इनका कहना है कि इसमें मुने सन्देह है कि प्रचलित सक्रम-मगीनमें स्वरितके जागरित रहनेपर ध्वनि कमा ३५<sup>१</sup>/<sub>३</sub> ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५० और ५१—इन जटिल मितान्क वाल स्वरपर सीधे पहुँचता है।<sup>२</sup> इहाने दादा गणाय रागाका विचार करत हुए एक एक रागक अनेक स्वर-सन्देह बताय हैं। उदाहरणमें माया-मालव गौडा ( भैरव ) का लें। इसके तीन भिन्न भिन्न स्वर-सम्पान हो सकत है जस—

|         |   |    |   |   |   |    |    |   |
|---------|---|----|---|---|---|----|----|---|
| स्वर—   | स | र  | ग | म | प | ध  | न  | स |
| मान—(१) | १ | ३१ | ४ | ५ | ३ | ६  | १५ | २ |
|         |   | ३५ |   |   |   | ३५ |    |   |

१ Sensation of tones—Helmholtz ( PP २६५ )

२ The Grammar South of Indian Music ( PP ३१ )



इन प्रवचनों-स पहला १२ रागियावाल् ग्रामके सामान्य स्वरानि बना ह । पर इसमें र-ग अन्तराल (  $\frac{३}{३}$  ) अनिष्ट ह । यह इष्ट अन्तराल (  $\frac{३}{३}$  ) स लगभग दा कोमा या १० सवट छाटा ह । इसलिए र-ग अन्तरालका इष्ट बनानक लिए चाह र का १० सवट उतारना हागा या ग को इतना ही चढाना हागा । दूसरे प्रवचमें र का उतारकर और तीसरमें ग का चढाकर र-ग अन्तराल  $\frac{३}{३}$  बनाया गया ह । इसमें दूसरमें र  $\frac{३}{३}$  और तीसरमें ग  $\frac{३}{३}$  हा जाता ह । सुब्रह्मण्य अय्यरके मतानुसार द्रुत सञ्चारमें ध्वनि निश्चय हा  $\frac{३}{३}$  स  $\frac{३}{३}$  पर जाती ह और तब  $\frac{३}{३}$  क अन्तरालस उतरकर फिर म पर चढना ह । इसलिए ग असलमें म ग (  $\frac{३}{३}$   $\frac{३}{३}$  ) ह । अर्थात् गमकमें तीसर प्रवचक ग  $\frac{३}{३}$  का व्यवहार हाता ह । पर उनक विचारमें दूसरा प्रवच ही उचिन और प्रचलित जान पढना है जिसमें र  $\frac{३}{३}$  और ग  $\frac{३}{३}$  का गमकमें प्रयोग हाता ह ।

इसा तरह उन्हान अनेक रागानि वैकल्पिक स्वर प्रवचपर विचार किया ह जिसस यह भा पता चलता है कि एक ही रागमें स्वरके भिन्न भिन्न सपभोगका प्रयोग हाता ह । जस दाक्षिणात्य हिण्डाल ( मालकौस ) में न  $\frac{३}{३}$  क प्रधान होनपर भी कभी-कभी न  $\frac{३}{३}$  और न  $\frac{३}{३}$  काममें लाय जात ह । सुब्रह्मण्य अय्यरक मतानुसार कुछ स्वरोंपर ध्वनिका ठर्राव हाता ह जो लानक स्वर माने जात हैं । एस स्वर इष्ट हात हैं और सरल भिन्नाङ्गमें प्रकट किये जात हैं । उनक मतानुसार एम लीनक स्वरक मान सना और राग जिनमें वे आन ह, नोचेकी सारिणीमें दिये जाते हैं—

## सारिणी २२

| स्वर मान | संज्ञा            | राग                             |
|----------|-------------------|---------------------------------|
| १        | पटञ्ज             | स्वरित                          |
| २        | त्रिध्रुति र      | दरवार और मध्यमावती जव ग वज्य हा |
| ३        | चतुध्रुति र       | खरहरप्रिया                      |
| (४)      | मध्यम गांधार      | भरवा आनन्दभरवी                  |
| (५)      | साधारण गांधार     | रीतिगोडा                        |
| (६)      | अतगत गांधार       | यदुकुलकाम्भादी                  |
| (७)      | शुद्ध मध्यम       |                                 |
| (८)      | प्रति मध्यम       | रामप्रिया                       |
| (९)      | पञ्चम             |                                 |
| (१०)     | द्विध्रुति ध्रुवत | परज                             |
| (११)     | त्रिध्रुति ध्रुवत | काम्भादी                        |
| (१२)     | चतुध्रुति ध्रुवत  | सुरति                           |
| (१३)     | कणिकी निपाद       | रातिगोडा                        |
| (१४)     | काकली निपाद       | शक्राभरण                        |

इस सारिणीके  $\frac{2}{3}$ ,  $\frac{1}{3}$  और  $\frac{2}{3}$  इन तीन स्वराक विषयमें निरचयक साथ नहीं कहा जा सकता कि इनका व्यवहार दामिणात्य रागमें होता है या नहीं। पर मुद्रहाष्य अथ्यर ग  $\frac{2}{3}$  और म  $\frac{1}{3}$  क बीच एक लीनक गाघार और इसी तरह न  $\frac{2}{3}$  और म २ के बीच एक लीनक निषाद पाते हैं। उनका अनुमान है कि यह लीनक गाघार  $\frac{1}{3}$  ही है।

१४१ दामिणात्य मगीतक बनानिक ममालाचक रामचन्द्रन ने भी कर्नाटकी गगाका श्रुति त्रिदत्तपण किया है। उनके विचारमें भी श्रुतियाका प्रयोग मुख्यत गमकमें ही होता है। ये कहते हैं कि— 'रागक स्वरामें श्रुतियाकी बटुलता रहती है। यह स्पष्ट दखा जा सकता है कि प्रत्येक रागमें एक स्वर कइ रूप ग्रहण करता है। यह एक सामान्य प्रवृत्ति-सौ है कि आरोहमें स्वरकी श्रुति चड जाती और अवराहमें उतर जाती है। किसी एक स्वरके प्रयागमें गमकक कारण जनेक श्रुतियाका ग्रन्थ होता है।"

"गुड मल कनकाङ्गाका लें तो देखेंगे कि गुड र क कमसे-कम दा मान हात है—एक  $\frac{1}{3}$  और इमरा  $\frac{2}{3}$ । इसी तरह गुड घ  $\frac{1}{3}$  और  $\frac{2}{3}$  का हाता है।"

इन्हान एक प्रकारके 'स्वराभास की भी चर्चा की है। जहाँ वीणा आदि तंत्रोंमें म प म, न स न, घ न घ, स र स आदि द्रुत प्रयोग होता है वहाँ बीचवाले ऊँचे स्वरका पूरा उच्चारण नहीं होता—ध्वनि इसक पास पहुँचकर लौट आती है। इसलिए बीचवाले स्वरका आभा-नमात्र प्रतीत हाता है। इन्होन गकरामरणमें स का आवृत्ति २५६ मानकर प्रयाग-द्वारा निरिचत

( ३ ) जिन स्वरापर ध्वनिका ठहराव होता है ऐसे लीनक या धीरे स्वराका उच्चारण हिन्दुस्तानी-संगीतमें स्वरोके सवाद और तमूरेका संगति से नियंत्रित होता है। इस सवाद और संगतिके आधारपर निकले हुए स्वराका मान निश्चित होता है। इसलिए रागका धीरे स्वर सदा तमूरेकी संगतिसे इष्ट होगा।

( ४ ) वादी स्वर प्रायः लीनक या धीरे होते हैं अर्थात् उतपर ध्वनि कुछ देर तक ठहरती है। इसलिए वादीका इष्ट होना आवश्यक है। इसी प्रकार सवादी स्वरका वादीसे सच्चा मध्यम या पञ्चम-मवादी होता भी जरूरी है।

( ५ ) प्लुताचारम जहाँ एक या एकसे अधिक स्वराका लघन होता है अन्तिम स्वर संगीत आरम्भके स्वरका पञ्चम-मवादी (  $\frac{३}{२}$  ) मध्यम सवादी (  $\frac{५}{३}$  ) या गांधार-मवादी (  $\frac{५}{४}$  या  $\frac{६}{४}$  ) होगा।

( ६ ) प्लुताचारमें, जहाँ स्वराका लघन नहीं होता अर्थात् प्रत्येक स्वरको छूकर ध्वनि ऊपर चढ़ती या नीचे उतरती है प्रायः एक स्वरका मान  $\frac{१}{२}$  न होकर  $\frac{३}{४}$  होता है।

अब क्रमशः नियम ३ से नियम ६ तक उदाहरण दिये जाते हैं—

( ३ ) यदि किसी रागमें गांधार या धवतपर ठहराव है तो इनका मान  $\frac{३}{४}$  और  $\frac{३}{२}$  न होकर क्रमशः  $\frac{५}{४}$  और  $\frac{५}{३}$  होगा क्योंकि ये स्वर तमूरेके स्वरितकी दृष्टिसे इष्ट हैं।

( ४ ) गांधार और धवत वादी है तो इनका मान  $\frac{५}{४}$  और  $\frac{५}{३}$  होगा और इनके मवादी—

(  $\frac{५}{४}$  ) →  $\frac{५}{३}$  (घ) या  $\frac{१}{२}$  (न) और

(  $\frac{५}{३}$  ) →  $\frac{५}{४}$  (ग) या  $\frac{१}{२}$  (र) होंगे।

तमूरक पञ्चमके आधारपर यन्त्रि र ई वादा हा ना इसका सवादी प ३ या घ ३/६ होगा ।

इसी प्रकार यन्त्रि वादी कामल गांधार ६ हा तो इसका सवाती घ ६ या न ६ हागा ।

सभी इष्ट वात्रिया और उनक सवात्रियाका मान नीचका सारिणीमें निया जाता ह —

### सारिणी २३

| वात्री | मवादा        |           |
|--------|--------------|-----------|
|        | मध्यम ( ५ )  | पञ्चम ३/६ |
| स १    | म ५          | प ३       |
| र २    | प ६          | घ ३/६     |
| ग ३    | घ ६          | न ६       |
| ग ४    | घ ५          | न १/५     |
| म ५    | न १/५ या स १ | स २       |
| प ६    | र ६          | स १       |
| घ ७    | ग ५          | र १/६     |

( ५ ) प्लुताचारमें अनक विलक्षण स्वराकी निष्पत्ति हो सकती ह । नीचकी सारिणियाम इष्ट स्वराके आधारम मिश्र मिश्र प्लुताचारक द्वारा निकल हुए स्वर हा लिखाये गय ह । इनमें पहली सारिणी आराही क्रमकी और दूसरी अवराही-क्रमका ह ।

## सारिणी २४

| आधार स्वर            | प्लुत ( आराही )        |                       |                      |                      |
|----------------------|------------------------|-----------------------|----------------------|----------------------|
|                      | ग $\frac{१}{२}$        | ग $\frac{५}{४}$       | म $\frac{५}{४}$      | प $\frac{५}{४}$      |
| स<br>१               | ग<br>$\frac{१}{२}$     | ग<br>$\frac{५}{४}$    | म<br>$\frac{५}{४}$   | प<br>$\frac{३}{२}$   |
| र<br>$\frac{२}{२}$   | म +<br>$\frac{२७}{२२}$ | म'<br>$\frac{५५}{३२}$ | प<br>$\frac{३}{२}$   | ध<br>$\frac{१७}{१६}$ |
| ग<br>$\frac{१}{२}$   | म'<br>$\frac{३३}{२२}$  | प<br>$\frac{३}{२}$    | ध<br>$\frac{८}{२}$   | न<br>$\frac{१६}{१६}$ |
| ग<br>$\frac{५}{४}$   | प<br>$\frac{३}{२}$     | ध<br>$\frac{२५}{१६}$  | ध<br>$\frac{५}{३}$   | न<br>$\frac{१५}{१६}$ |
| म<br>$\frac{५}{३}$   | ध<br>$\frac{८}{२}$     | ध<br>$\frac{५}{३}$    | न<br>$\frac{१५}{१६}$ | स<br>$\frac{२}{२}$   |
| प<br>$\frac{२३}{२३}$ | न<br>$\frac{१}{२}$     | न<br>$\frac{१५}{१६}$  | स<br>$\frac{२}{२}$   | —<br>—               |
| ध<br>$\frac{५५}{५५}$ | स<br>$\frac{२}{२}$     | —<br>—                | —<br>—               | —<br>—               |

### सारिणी २५

| आधार स्वर     | प्लुत ( अवरोही ) |                 |                 |                 |
|---------------|------------------|-----------------|-----------------|-----------------|
|               | ग $\frac{1}{2}$  | ग $\frac{2}{2}$ | म $\frac{3}{2}$ | प $\frac{4}{2}$ |
| ग             | २                | —               | —               | —               |
| $\frac{1}{2}$ | $\frac{3}{2}$    | —               | —               | —               |
| म             | २                | २               | —               | —               |
| $\frac{2}{2}$ | $\frac{3}{2}$    | $\frac{4}{2}$   | —               | —               |
| प             | ग                | ग               | २               | —               |
| $\frac{3}{2}$ | $\frac{4}{2}$    | $\frac{5}{2}$   | $\frac{6}{2}$   | —               |
| ध             | म'               | म               | ग               | २               |
| $\frac{4}{2}$ | $\frac{5}{2}$    | $\frac{6}{2}$   | $\frac{7}{2}$   | $\frac{8}{2}$   |

( ६ ) पञ्चवारकी रीतिसे यदि स स ग पर जायें ता तान 'स र ग' होगा । इस दशममें प्राय गाधारका मान  $\frac{1}{2}$  न होकर  $\frac{2}{2}$  होगा, जैसे—

स  $\frac{2}{2}$  र  $\frac{2}{2}$  ग  
 १  $\frac{2}{2}$   $\frac{2}{2}$

इसी तरह प-ध में ध  $\frac{3}{2}$ , प ध न' में न  $\frac{4}{2}$  और ग-म' में म'  $\frac{5}{2}$  होगा । पर इन क्रियाओंमें ग, ध, न या म' पर स्वराका ठहराव न होना चाहिए ।

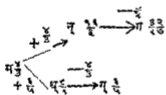
१४३ ऊपर दिये हुए निदमाके उपयोगमें हिन्दुस्तानी रागाक स्वर नियममें बहुत कुछ मदद मिल सकती है । इन नियमका आधार सवाद है जो हिन्दुस्तानी-संगीतका प्राण है । सवाद स्वभाव प्रेरित होनास ध्यानिक नियमसे बंधा है और सामान्य गणितसे निश्चित किया जा सकता है । किम



रागम कौन-कौन स्वर लगन चाहिए, इस विषयमें बहुधा गुणियाम मत भद हो जाया करता ह । पर ऊपरके नियमात्, जिनमें उत्तरीय पद्धतिके किमी भी आधायकी कोई आपत्ति नहीं हो सकती, यह मतभेद बहुत-कुछ दूर किया जा सकता ह । इस विषयमें इतना ही आवश्यक ह कि राग-लक्षण और रागकी प्रकृति स्पष्ट हो और इस सम्बन्धमें कोई मतभेद न हो । यदि राग-लक्षणम मतवय न हुआ, तो स्वर नियम भी भद हो जायगा ।

उत्पाहरण स्वरूप कुछ मुख्य रागापर नाचे विचार किया जाता ह—  
 ( १ ) मालकौस—इस रागका धात्री मध्यम ह । म से ध्वनि म पर जाती है । ग मुख्यत म के साथ आता ह । म स ध और न पर प्लुत होता ह । पञ्चम और ऋषभ वजित है ।

नियम ५ के अनुसार प्लुताचारमें धूँ  $\frac{3}{2}$  और न  $\frac{3}{2}$  होना चाहिए । अवरोही प्लुतमें धूँ स कोमल गाधार ग  $\frac{1}{2}$  और नूँ  $\frac{3}{2}$  से ग  $\frac{3}{2}$  मिलता ह । जैसे—



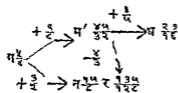
मालकौसके इस स्वर निदानसे जान पड़ता ह कि इसमें दो प्रकारके कामल गाधारका प्रयोग होता ह—( १ ) ग  $\frac{3}{2}$  और ( २ ) ग  $\frac{1}{2}$  । पहला दूसरेसे एक कामा (  $\frac{2}{2}$  ) उतरा हुआ ह । अवराहाम गूँ  $\frac{3}{2}$  का प्रयोग होता ह । अनिष्ट अंतराल हानपर भी इसमें स्वरित स पर जानम कोई बाधा नहीं होती । फिर पञ्चाचारम नियम ( ६ ) के अनुसार म-न म एक गुरु स्वरका अंतर होना चाहिए जिसमें ग  $\frac{3}{2}$  की ही निष्पत्ति होती ह । इस गाधारके अनिष्ट हानसे ही यह स्वर मालकौसम लीनक नहीं होता ।



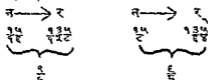
बताया जा चुका है कि गूँ  $\frac{1}{2}$  पूरा तरह इष्ट नहीं है (अनुच्छेद ५५) । फिर यह माना जाता है कि टोडोका कामल गांधार मुल्तानीक कामल गांधार से कुछ उतरा हुआ लगता है । गूँ  $\frac{1}{2}$  में एक कोमा उतरा हुआ ग  $\frac{3}{4}$  है । पर यह तो अनिश्चित है जिसपर तमूरेकी सगीतम स्वर वभी ठहर ही नहीं सकता । टोडोम गांधारपर ध्वनि जितनी बेरतक और जिस रीतिस ठहरती है, उससे यह सिद्ध है कि टोडोका गांधार बहुत ही इष्ट है । ग  $\frac{1}{2}$  से उतरा हुआ पर पूरी तरह इष्ट सात्त्विक गांधार होना है जिसका मान  $\frac{1}{2}$  है । तमूरेके स्वरामें सात्त्विक निषाद ( न  $\frac{1}{2}$  ) पाया जाता है (अनुच्छेद ११९ ) जिसका गूँ  $\frac{1}{2}$  से पञ्चम सवाद है । तमूरेके आगिकामें सप्तम आशिक भी बली होता है । इसलिए तमूरेके साथ ग  $\frac{1}{2}$  का पूरा मेल है और इसीलिए इसपर ध्वनि दर तक ठहर सकती है । ग  $\frac{1}{2}$  और गूँ  $\frac{1}{2}$  में १२ सेवटका अन्तर है जहाँ गूँ  $\frac{1}{2}$  और गूँ  $\frac{3}{4}$  में केवल ५ सेवटका है । १२ सेवटका अन्तर अर्ध स्वर ( २८ सेवट ) के लगभग बराबर है । इसीसे मुल्तानी और टोडोके गांधारका अन्तर इतना स्पष्ट है कि प्रत्येक प्रवीण गायक इसका अनुभव करता है ।

टोडोके गैव स्वर सामान्य ग्रामक स्वर है या व भी सात्त्विक जातिक है यह कहना कठिन है । हो सकता है कि प्लुनम सात्त्विक म  $\frac{1}{2}$  और सात्त्विक धूँ  $\frac{1}{2}$  का प्रयाग होता है । पर यदि सामान्य स्वराका व्यवहार होता है तो उनका आधार ग नहीं, पञ्चम है ।

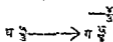
(३) पूरिया भारवा—पूरियाका वादी गांधार है और इसमें पञ्चम वज्रित है । गांधार वादी हानम इसका इष्ट अर्थात् ग  $\frac{1}{2}$  हाना आवश्यक है । ग-म' पचाचारमें  $\frac{1}{2}$  का अन्तर और म'-ध प्लुतमें  $\frac{1}{2}$  का अन्तर होना चाहिए । फिर ग-न का पञ्चम सवाद और म-र का अवराही प्लुत (  $\frac{3}{4}$  ) भी निश्चित है । इस विवरणके अनुसार पूरियाका स्वर विन्यास इस प्रकार होगा—



इस स्वर निगानम रू को छाड और सभी स्वर परिचित और प्रचलित ह ।  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  का मान सेक्टमें २३ ह अर्थात् रू  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  ( २८ से ) से यह एक कामा उतरा हुआ ह । अवरोहमें इसक प्रयागम काट बाधा नही पटनी ब्याकि यह पडजके प्रवसकके रूपमें आता ह । आरोहम बाधा अवश्य पटता ह क्योंकि यह अर्ध स्वरसे छोटा ह । पर पूरियामें बहुधा पडज-का लघन करके 'न रू या 'न र का प्रयोग होता ह, और ऐस प्रयागम रू  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  लिखा जाये ता यह अंतराल गुरु स्वरसे एक कामा बढ जायगा जो अनुचित ह । पर रू  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  को लिखा जाये ता इन दो स्वराका अंतराल एक गुरु स्वर (  $\frac{3}{2}$  ) हो सक्ता ह । जस—



इसस मह जान पडता ह कि पूरियाम रू  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  का हा प्रयाग हाता है । आरोहमें म'-घ प्लुतस घ  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  निकलता ह । पर अवरोहमें 'न घ ग या 'म घ ग' तानामें इष्ट धैवत  $\frac{3}{2}$  का प्रयोग हाता है, क्योंकि अवरोहो प्लुत घ-ग का इष्ट होना आवश्यक ह, जैसे—



इसक अतिरिक्त अवरोहमें या स्पामें रागक मुख्य धैवत  $\frac{3}{2}$  का एक कामा उतर जाना स्वाभाविक ह ।

इसी तरह ग-रू अवरोहमें रू का मान  $\frac{3}{2} \frac{3}{2}$  हाना चाहिए जो रू

३३५ से भी एक कोमा उतरा हुआ है। जस—

— $\frac{1}{4}$

ग  $\frac{3}{4}$  → र  $\frac{3}{4}$

मारवाका वादी स्वर कामल ऋषभ काल्पनिक सा प्रतीत होता है। पर धवतका सवादा हाना माय है। इसमें गाधारकी भी प्रधानता मानी जाती है। इस तिसाबसे मारवाम इष्ट धवत  $\frac{3}{4}$  का ही व्यवहार विशेष होना चाहिए। गाधारका मान भी  $\frac{3}{4}$  ही होना उचित है। ध  $\frac{3}{4}$  की सगतिसे म'  $\frac{3}{4}$  और र  $\frac{3}{4}$  का प्रयोग हागा। जस—

— $\frac{1}{4}$                       — $\frac{3}{4}$

ष  $\frac{3}{4}$  → म'  $\frac{3}{4}$  → र  $\frac{3}{4}$

म—ग सगतिमें गा वार  $\frac{1}{2}$  आता है या ग  $\frac{3}{4}$  अपनी प्रधानता बनाये रखता है, यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता।

१४४ ऊपर दिये हुए कुछ उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि हिन्दुस्तानी सगीतके वावहारिक नियमोंसे एक एक स्वरके अनेक अनेक भेद निकलते हैं जो भिन्न भिन्न श्रुतियोंपर स्थित हैं। ये उपस्वर कही तो आकस्मिक हाते हैं और कही प्रमुख। या तो स्थूल विचार और व्यवहारमें इन उपस्वरों या श्रुतियोंका उपेक्षा की जा सकती है। पर सूक्ष्म विचार और गुह्य व्यवहारमें इनपर ध्यान रखना आवश्यक है। यह समझ बैठना कि हिन्दुस्तानी सगीतके सार राग बाहर निश्चित स्वरोंसे ही पना होता है, सवधा अनुचित है। हिन्दुस्तानी सगीतमें ऊपर दिये हुए ६ नियमोंके अनुसार ऐसे अनेक स्वरोंका उपयोग हाता है जो इन वारह निश्चित स्वरोंके अतिरिक्त हैं इस प्रकार इन स्वरोंकी वारह मुख्य श्रुतियोंके अतिरिक्त और भी श्रुतियाँ काम में आती हैं। पर इन श्रुतियोंका भरतकी २२ श्रुतियोंसे कोई नित्य सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता। या तो भरतकी श्रुतियाँ भी तीन प्रकारकी बतायी गयी हैं—एक कामा (५ सेवट) दूसरा लघु अध स्वर (१८ सेवट) और तीसरा लीमा (२३ सेवट) (अनुच्छेद १००)। पर स्वरोंके उतार

चढ़ावमें इनका स्वच्छ द प्रयोग होता है । इनके अतिरिक्त सांख्यिक मवाद का ध्रुतियाँ जिसका उदाहरण टोड़ी रागकी विवचनामें दिया गया है, भरतके ध्रुति प्रवचनमें नहीं पायी जाती । ऐसी और भी विलक्षण ध्रुतियाँ हो सकती हैं जो सवार्क नियमानुसार निकल पर जिनका अस्तित्व भरतकी पद्धतिमें न पायी जाये । तात्पर्य यह कि हिन्दुस्तानी संगीतकी अनेक विरल ध्रुतियाँ भौतिक नियमानुसार निकलती हैं, पर इससे यह परिणाम नहीं निकाला जा सकता कि इन ध्रुतियाँ निरूपणसे भरतकी २२ ध्रुतियाँवाली पद्धतिमें पुष्टि होती है ।



## १७. हिन्दुस्तानी संगीतकी वैज्ञानिकता और परम्परा

१४५ हिन्दुस्तानी संगीतकी विनोदताएँ पिछले अध्यायोंमें जगह-जगह बतायी गयी हैं। यहाँ उन्हींको चचा एक साथ संक्षेपमें की जाती है जिससे हिन्दुस्तानी संगीतकी वैज्ञानिकता और परम्परापर कुछ प्रकाश पड़ेगा।

उत्तर और दक्षिण दोनों ही क्षेत्रोंमें संगीत सम्बन्धी कुछ धारणाएँ समान रूपसे प्रचलित हैं। उनमें से एक तो यह है कि दक्षिणात्य संगीत पद्धति हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिकी अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक है। दूसरी यह कि दक्षिणात्य पद्धति गूढ़ भारत परम्पराका अनुकरण करती है और उत्तराय पद्धतिपर विदेशियोंका प्रभाव पहनस यह प्राचीन हिन्दू परम्पराका अलग हा गयो है। ये दोनों धारणाएँ हिन्दुस्तानी संगीतके तत्त्व और इसकी विनोदताका अज्ञानके कारण पदा हुई हैं।

गायन दक्षिणात्य पद्धतिकी वैज्ञानिक इसलिए कहा जाता है कि उसका वर्गीकरण नियमित है। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दुस्तानी संगीतका वर्गीकरण उतना नियमित नहीं है। पर केवल वर्गीकरणका नियमित होना ही वैज्ञानिकताका द्योतक नहीं है। बेंकटमन्त्रीका मलकर्ता निरूपण गणितसाध्य है। पर संगीतकी विषयनामें गणितकी उतनी महत्ता नहीं है जितनी ध्वनि विज्ञानकी। इसलिए किसी भी संगीत-पद्धतिकी वैज्ञानिकता ध्वनि विज्ञानके नियमोंके आधारपर ही माँकी जा सकती है। ध्वनि विज्ञानकी दृष्टिसे दक्षिणात्य-पद्धतिपर विचार करनेपर उसकी वैज्ञानिकतामें श्रुतिमाँ ही अधिक दोष पड़ती है। दक्षिणात्य गूढ़ ग्राम (कनकाङ्गी) किसी भी वैज्ञानिक पद्धतिमें स्वीकृत नहीं है। यह अधस्वरक ग्राम है जिसमें दो अधस्वर लगातार आते हैं (अनुच्छेद १२०)। दो लगातार अधस्वरकी इस अत्यावहारिकताके कारण ही पुरन्दरदासने मायामालवगोत्र (भरव) का गूढ़ ग्राम माननेका प्रस्ताव किया था (अनुच्छेद १२०)। पर यह भी अधस्वरक

ग्राम ही है। शुद्ध वैज्ञानिक ग्राम बिलावलमेल माना जाता है, जिसके प्रत्येक स्वर स्वरित ( पञ्ज ) के सम्बन्धसे इष्ट है। बिलावलमेल सरल, इष्ट और स्वभावसिद्ध है ( अनुच्छेद १२० )। दक्षिणमें भी शकराभरण ( बिलावल ) का ही व्यवहार अधिक प्रचार है। शकराभरणकी यह प्रधानता इस बातकी मूक स्वीकृति है कि दक्षिणात्य शुद्ध-ग्राम ( बनकाङ्गी ) अवैज्ञानिक है।

स्वराकी इष्टता और सवादकी व्याख्या और इनकी औचित्य सिद्धिमें हल्महाजन महत्त्वपूर्ण सिद्धांतका निष्पन्न किया है। इन सिद्धान्तके कारण ही सगात ध्वनि विज्ञानका परिधिगत भीतर आ गया है। पर दक्षिणात्य पद्धतिमें इष्टता और सवादकी सिद्धांतगत उपेक्षा की गयी है। बेंकट मखोने ७२ मलवर्ताआकी पद्धतिका निरूपण केवल सिद्धान्तमें ही किया। ऐसा न समझना चाहिए कि उहाँ प्रचलित रागाका वर्गीकरण ७२ मलाम किया है। य सभी मेल दक्षिणम प्रचलित नहीं है फिर भी इस बहुत स मल और राग प्रचलित है जिनके स्वर अनिष्ट हैं और जिनका स्वर मस्थान विसंवादा है ( अनुच्छेद १२९ )। विमवादी और अनिष्ट मेलके निरूपणका परिणाम और प्रमाण यह है कि दक्षिणात्य पद्धतिमें अध स्वरम भा छोटे अन्तरालका विधान पाया जाता है ( अनुच्छेद १२०, १२६ )।

हिन्दुस्तानी सगात-पद्धतिमें बिलावल ठाटको शुद्ध मान जानना इसका वैज्ञानिकता प्रमाणित नहीं है। फिर इसमें इष्टता और सवादकी बड़ी प्रधानता दी गयी है। रागका प्रसार, वादी और सवादको ही केंद्र मानकर होता है। पञ्चम-स्तुत मध्यम-स्तुत और गायार-स्तुतका व्यवहार अन्त अधिक होता है और इनमें इष्ट अन्तरालका ही प्रयोग होता है ( अनुच्छेद १४२ )। मेलमें कोई भी ऐसा स्वर ग्रहण नहीं किया जा सकता जिसका पञ्चम-सवादी या मध्यम-सवादी भी उस मेलमें मौजूद न हो ( अनुच्छेद १२५ )। यहाँ तक कि विवादी स्वर ( न ग म ) का प्रयोग भी किसी रागमें तभी ही सकता है जब इसका सवादी स्वर रागमें मौजूद हो ( अनुच्छेद



१३६)। स्वर संवाद्यो हा मलक पर्वान्त और उत्तराङ्गका यमकभाव प्रस्फुटित होता है जा हिन्दुस्तानी पद्धतिमें अनिवाय सा जान पड़ता है (अनुच्छेद १३०)। यमकभावकी प्रधानता मारखा टाटकी विवचनास पूरी तरह सिद्ध हो जाता है (अनुच्छेद १३०)। इसी सवाद और यमकभावकी निष्पत्तिके लिए हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिमें ७२ मलाम स १०का छोटा गेप सभी मलाका निराकरण किया गया है (अनुच्छेद १२९)। भातखण्डके दशमेल निरूपणस यह नया भ्रम फैल गया है कि दक्षिणात्य रागाका क्षेत्र बड़ा ही विशाल है और हिन्दुस्तानी रागाक क्षेत्र १० मला तक ही संकुचित है। तत्त्व यह है कि विज्ञान और कलाकी प्रेरणास हिन्दुस्तानी संगीतमें पूरी तरह सवादी १० मलाक अतिरिक्त और किसी भी मेलको स्थान नहीं है। विज्ञानक सब-स्वीकृत नियमों और कलाके सब प्रिय सौष्ठवका परित्याग करके संगीतक क्षत्रका विस्तार करनेकी आकांक्षा हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिमें नहीं पाया जाता।

मवादकी भाँति ही अध स्वर अंतरालवाले दो स्वराका परस्पर 'विवार' भी हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिमें माना जाता है, जा वैज्ञानिक नियमसे वैधा है।

यहाँ इनका समझ लेना आवश्यक है कि कलाक क्षेत्रमें विज्ञानका अधिकार गौण है। विज्ञान कलाके विधि नियमोंको केवल भौतिक दशापर प्रकाश डालता है। यह कलाकारका अनुभव है कि कि ही दो स्वराकी संगति अप्रिय होती है और जिन्होंने दो स्वराकी प्रिय। जैसे स—य संगति तो प्रिय होती है और जिन दो स्वराका अंतराल अध स्वर (३/२) होता है उनकी संगति सबसे अधिक अप्रिय होती है। हल्महाजने बताया है कि जिन दो स्वराकी संगति अप्रिय होती है उनमें डालकी मापा अधिक होती है। लगभग ३३ डाल प्रति सेण्ड मन्त्रे अधिक अप्रियता पत्ता करता है (अनुच्छेद ५६)। मध्य सप्तकमें यह दशा लगभग अध स्वरक अंतरालवाले स्वराके ही पाया जाती है। पर दो स्वराका डोल क्या अप्रिय

होना है, यह विज्ञानका तथ्य नहीं, यह तो कलाकी अनुभूति है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कोई भी संगीत-पद्धति मन्वे अर्थमें वैज्ञानिक नहीं है। इसमें वैज्ञानिकता इतनी ही हो सकती है कि इसके कलात्मक तथ्यों और अनुभूतियाँकी भौतिक भित्ति वैज्ञानिक नियमोंसे समझी जा सके। इस अर्थमें हिन्दुस्तानी संगीत-पद्धतिकी वैज्ञानिकता पूरी तरह सिद्ध है। भरतने दो श्रुति (अथ स्वर) अन्तरवाले स्वरोंका परस्पर विवादी माना है। हिन्दुस्तानी संगीतमें अथ स्वरका अन्तराल विवादी माना जाता है (अनुच्छेद १३६)। हेमहाजने डोलरी धारणासे इस विवादीकी भौतिक दशाका यत्न और स्पष्ट किया है। रागकी एक समताके लिए पूर्वाङ्ग और उत्तराङ्गका समकभाव होना आवश्यक है। इस समक भावकी मष्टि तभी हो सकती है जब पूर्वाङ्गके प्रत्येक स्वरका पञ्चम या मध्यम-सवादी स्वर उत्तराङ्गमें हो। दो स्वरोंमें पञ्चम या मध्यम सवाद तभी हो सकता है जब इनकी आवृत्तियाँ अनुपात ३/२ या ४/३ हो। इस प्रकार हिन्दुस्तानी संगीतके कलात्मक तथ्य वैज्ञानिक नियमोंसे अभिव्यक्त होत हैं।

अब रही परम्पराकी बात। यह बताया जा चुका है कि शाङ्गदेवका गुढ़ ग्राम और भरतका गुढ़ ग्राम एक नहीं है (अनुच्छेद १०८)। दक्षिणका गुढ़ ग्राम शाङ्गदेवके गुढ़ ग्रामका अनुकरण करता है (अनुच्छेद १०८)। उत्तरका गुढ़ ग्राम भरतके गुढ़ ग्रामसे निकला है (अनुच्छेद ११५)। उत्तरीय मध्ययुगीय अहोबलका ग्राम काफी मेल है जो अत्रोत्तरी भरत ग्रामका गुढ़ आरोही रूप है (अनुच्छेद ११३)। यदि भरत ग्रामकी श्रुतियाँका भा आरोही क्रममें स्थापित करें तो वह आधुनिक गुढ़ ग्राम (विलावल मेल) बन जाता है (अनुच्छेद ११५)। यह प्रत्यक्ष है कि भरत-ग्राम काफ़ी और विलावलकी तरह ही द्विस्वरक है। दक्षिणके अवस्वरके ग्रामका मध्य ध इसमें नहीं जाना जा सकता। ग्रामकी तरफ ही सवादीकी प्रधानता हिन्दुस्तानी संगीतमें भरत-पद्धतिमें आयी है। भरतके ग्राममें हिन्दुस्तानी

पद्धतिकी तरह हा यमकभाव दीस पडता ह । इस ग्राम यमकत्वको भरतन इतना महत्त्व दिया ह कि ओठवमें वे ही दो स्वर वजित हुए ह जिनका परस्पर पञ्चम-सवाद ह ( अनुच्छेद ८८ ) । हिन्दुस्तानी सगीतम भी यह नियम माना जाता ह । अन्तर इतना ही ह कि भरतने ऐसी जगहापर पञ्चम सवादका ही प्रगस्त माना ह । पर हिन्दुस्तानी सगीतमें पञ्चम और मध्यम-दोना ही सवा ग्राह्य ह । इसी तरह हिन्दुस्तानी सगीतम विवादीका प्रयोग गृह भरतके मन्त-यके अनुसार होता ह । न, ग और म का प्रयोग विवादी रूपमें क्रमश घ, र और ग के साथ होता ह जिनस उनका अन्तर अध स्वर ( दो श्रुतियाँ ) ह ( अनुच्छेद १३६ ) । फिर यदि भरतकी मूच्छनाको देखें तो इसमें कोई सन्देह नही रहता कि आधुनिक हिन्दुस्तानी संगीतक तत्राका स्वर प्रब घ भरतके मूच्छना प्रबघका अनुकरण मात्र ह । हिन्दुस्तानी तत्रामें बाजेका तार मध्यममें मिला होता ह । इसीसे भरतन मध्यमको अविलापी कहा ह ( अनुच्छेद ८७ ) ।

हिन्दुस्तानी सगीत पद्धतिम विदेशी अग बहुत अल्प दीस पडता ह । या तो भरतका अवराहा स्वर प्रबघ, मूच्छना प्रबघ, मध्यमकी प्रधानता, यास स्वरक गुण घम आदि अनेक बातें प्राचीन यूनानी पद्धतिस इतनी मिलती ह कि भरत-पद्धतिपर यूनानी प्रभावका पडना आसानीस अस्वाकार नही किया जा सकता ( अनुच्छेद ८६, ८७, ८८ ) । कुछ विद्वानाका मत ह कि भरत नाट्यशास्त्रमें यूनानी नाट्य शास्त्रका बहुत कुछ प्रभाव ह । भरतने अपने नाट्यशास्त्रमें ही प्रसंगवत् सगीतका निरूपण किया ह । इस सगीत-पद्धतिकी प्राचीन यूनानी पद्धतिके साथ स्पष्ट समतास नाट्यशास्त्रपर यूनानी प्रभावक सिद्धांतकी पुष्टि होती है । पर यह यूनानी प्रभाव तो भरतकी परम्परास भारतवर्षकी सभी पद्धतियामें पाया जाता ह । विचार यह करना ह कि हिन्दुस्तानी सगीतपर मुसलमानाक ससगस इरानी या अरबी पद्धतिका किना प्रभाव पडा ह । हिन्दुस्तानी सगीतके आदि मुसलमान आचार्य अमीर खुसरू हुए हैं । कहा जाता ह कि उहाने कई ईरानी धुनाका भारतीय

सगीतम समावेश किया। पर उनकी सगीत पद्धति सागोपाग भारतीय थी, इसमें कोई सन्देह नहीं। उन्होंने स्वयं इस बातकी घोषणा की है ( अनुच्छेद ७७ )। यह भी कहा जाता है कि उठाने सितार और तबलेका ईजाद किया। पर सितार और तबला अतिप्राचीन वीणा और मदगके क्रमशः सक्षिप्त रूप हैं ये कोई विदेशी बाजे नहीं हैं। उत्तरके दूमरे प्रसिद्ध आचार्य तानसेन मान जाते हैं। वे पहले हिन्दू थे और बदायुनके स्वामी हरिदासके शिष्य थे। तानसेनके साथ ही अकबरक दरबारम प्रसिद्ध बिनकार मिसरी सिंह जा तानसेनकी कन्यासे विवाह करनेक बाद मुसलमान हो गये। ये मिसरी सिंह सरस्वती वीणाम इतने प्रवीण थे कि तानसेन भी इनसे हार मानते थे। इन्हीके वंशमें मुहम्मदशाह ( १७२०-३० ) के समयमें नियामतर्वा हुए जा सदारगके नामसे आज भी प्रसिद्ध हैं। ये खयाल पद्धतिके प्रमुख प्रवक्तक समझे जाते हैं। इन्हान सैकड़ा खयालके गान बनाये जिनमें राधाकृष्णकी लोलाआका वणन है। पर ये स्वयं प्रवीण बिनकार थे। इनका एक खयाल प्रसिद्ध है जिसमें उ हान कहा है कि 'आदिमहादेव बिन बनाय पाय नयामतर्वा'। इन्हीके वंशज आधुनिक समयके प्रसिद्ध बिनकार रामपुर दरवारके बजारखा हुए हैं। इन्हीं दरवारके बिनकार सादिकअलीखा अपनेकी स्वामी हरिदासका वंशज बनलाते हैं। तानसेनके बड़े बेटे विलास खास प्रसिद्ध खयालियाका घराना चला है और उनक दूसरे बेटे सुरतमनसे मिनारियाका। यह सनिया घरानाके नामसे प्रसिद्ध है।

इस प्रकार यह दखा जाता है कि हिन्दुस्तानी सगीतक सभी प्रसिद्ध घरानाकी वंशावली और गुरु-परम्परा हिन्दू नायका और सगीत गुरुआस हा चली है।

यह सिद्ध है कि शाङ्गदेव आदि द्वारा वर्णित प्राचीन प्रबन्ध-नायन और ध्रुवपदस ही हिन्दुस्तानी संगीतकी ध्रुवपद शालिका विकास हुआ है। इस ध्रुवपदकी चार अंत शलियाँ 'बानी' के नामसे प्रसिद्ध हैं। इन बानियाँके नाम ( १ ) गौरहार ( २ ) गौरहार ( ३ ) खण्डार और ( ४ ) डागुर हैं। गौरहार बानी तानसेनकी कही जाती है। खण्डार बानी बहुत ही प्राचीन है जो हिन्दूकालसे ही चली आती है। डागुर बानी स्वामी हरिदासकी है। इसी बानीसे खण्डारकी गली निकली है। आरम्भमें खण्डारकी शली ध्रुवपदसे इतनी मिलती जुलती थी कि इसे लोग 'लंगडा ध्रुवपद' कहते थे। आगे चलकर बिलम्बिन खण्डारसे छाटा खण्डार और फिर इससे टप्पा और ठुमरीका विकास हुआ। अब ये सभी शलियाँ साथ साथ प्रचलित हैं। हिन्दुस्तानी संगीतकी इन भिन्न भिन्न शलियाँके विकास-क्रमसे यह स्पष्ट है कि इनका स्रोत प्राचीन प्रबन्ध शलीसे ही अनवरत चला आ रहा है।

हिन्दुस्तानी संगीतपर अनेक मुसलमान संगीत-पण्डिताने उद्गममें पुस्तकें लिखी हैं, जैसे, नगरमाते आसफी ( राजासाँ ), सरमाय इशरत ( सादिक अलीसाँ ) मुआरिफुल नगरमाते ( राजा नवाबअलीसाँ ), मादमुल्मूसीकी ( मुन्शी वाजिदअली ), गुरुचय राग आदि। पर इन सभी पुस्तकामें श्रुति ग्राम, मूर्च्छना आदिका विचार प्राचीन पद्धतिकी परिपाटीपर ही किया गया है। इनमें कहीं भी ईरानी या अरबी संगीत-पद्धतिकी छाया नहीं दीख पत्ती।

यह ऐतिहासिक घटनाआका परिणाम है कि हिन्दुस्तानी संगीतके प्रधान उन्नायक और विधायक अधिकतर मुसलमान ही रहे हैं। पर उन्हें बज्रुबावरे, गोपाल नायक और स्वामी हरिदासकी परम्पराका गौरव रहा है। वे सदा संगीत रत्नाकरकी ही दुहाई देते रहे हैं। जहाँतक संगीतका

सम्बन्ध है, उनकी आत्मा पूरी तरह भारतीय रही है। उनकी विलक्षण प्रतिभासे हिन्दुस्तानी मगोनके गान और तानके व्यवहारमें आश्चर्यजनक उन्नति और विकास हुआ है। पर इस विकासकी प्रेरणा उह भारतीय पद्धतिस ही मिली है, किसी विदेशी पद्धतिस नहीं। इमलिए केवल मुसलमानाका समर्ग देयकर ही हिन्दुस्तानी संगीतपर विदेशी प्रभावकी कल्पना कर लना बहुत बड़ा भ्रम है।

इन सारी विवचनाआका यह उद्देश्य नहीं है कि दक्षिणात्य-पद्धतिका हिन्दुस्तानी-पद्धतिका अपना हीन सिद्ध किया जाये। दक्षिणात्य पद्धतिका प्रसंग इसलिए उठाया गया है कि बहुधा इसकी तुलना हिन्दुस्तानी पद्धतिस की जाती है। या तो सभी पद्धतियाकी अपनी अपनी विशेषता होती है और प्रत्येक पद्धतिके माननवालोंकी रुचि उसी पद्धतिके अनुरूप बन जाती है। हिन्दुस्तानी-पद्धतिका विशेषताअसे यह सिद्ध होता है कि इस पद्धतिमें वैज्ञानिकताका अंश यथेष्ट है और इसकी परम्परा शुद्ध भारतीय है।



## उदाहरण-ग्रन्थ

- १ Tyndall—Sound
- २ Richardson—Sound
- ३ Barton—Sound
- ४ A. B Wood—A Text book of Sound
- ५ A Wood—Sound waves and their uses
- ६ Miller—Musical Sound
- ७ Helmholtz—Sensation of Tones  
( Translation by Ellis )
- ८ Jeans—Science and Music
- ९ M H Statham—What is Music ?
- १० Sedly Taylor—Sound and Music
- ११ Pietro Blaserna—The Science of Music
- १२ Ranade—Hindusthani Music
- १३ Raman—Musik instrumente und Ihre  
Klänge ( Hand Buch Der Physik  
pp 361 )
- १४ Darwin—Descent of man
- १५ James Jeans—Science and Music
- १६ Fox Strangways—Music of Hindustan
- १७ Alain Danie'lou—Introduction of the  
Study of Musical Scales
- १८ M S Ramswami—Ed स्वरमेल कलानिधि by  
रामामात्य ( Introduction )

- १९ T R Srinivas Ayyangar—Ed सग्रहबूडामणि by  
गोविन्द ( Introduction )
- २० C Subrahmanya Ayyar—The Grammar of  
South Indian ( Karnatic ) Music
- २१ N S Ramchandran—The Ragas of Karnatic  
Music
- २२ Bhavarnav A Pingle—Indian Music
- २३ Atiya Begum Fyzee Rahmin—The Music of  
India
- २४ भरत—नाट्यशास्त्र ।
- २५ शाङ्गदेव—सगीत रत्नाकर ।
- २६ रामामात्य—स्वरमेल कलानिधि ।
- २७ सोमनाथ—रागविबोध ।
- २८ दामोदर—सगीत दर्पण ।
- २९ अहाबल—सगीत-पारिजात ।
- ३० धोनिवास—रागतत्त्व विबोध ।
- ३१ चतुर पण्डित ( वि० ना० भातखण्डे )—लक्ष्य-सगीत ।
- ३२ मुरारोप्रसाद—हिन्दुस्तानी सगीत प्रवेशिका ।
- ३३ वि० ना० भातखण्डे—हिन्दुस्तानी सगीत पद्धति भाग १-४  
( मराठी ) ।
- ३४ भा० सी० सुक्यनकर—हिन्दुस्तानी सगीत-पद्धति ( क्रमिक  
पुस्तकमालिका भाग १-६ ) ।



## उदाहरण-लेख

- १ R N Ghosh—Musical Drums Phys Rev  
Oct 1922
- २ R N Ghosh—Indian Drums Phil mag Feb  
1923
- ३ h C Kar—Dynamical Theory of the Bridge of  
Certain Class of Stringed Instruments Phy  
Rev 1923
- ४ D G Gunnaiya and G Subramanya—Vibration  
of String under Intermittent Impulses  
Phy Rev 1925
- ५ G P Dwivedi—Tantra in Indian Music The  
Sunday Leader—  
Oct 21 1945  
Nov 4 1945  
Dec 16 1945  
March 10, 1946
- ६ V N Bhatkhande—A short Historical Survey  
of the Music of Upper India ( A speech  
at the First All India Music Conference,  
1916 )

[ क ] ७२ वृहन्मेलकर्त्ता ( वेंकटमखी )

नीचे ६ चक्रों में वेंकटमखीके ७२ मेलकर्त्ता दिये जाते हैं। इनके नाम महावचनाथ शिवनके 'मेल रागमालिका' के अनुसार हैं। सारिणीक बोचमें स्वरप्रबंध, हिन्दुस्तानी स्वर सताम दिये गये हैं जिनके बायें शुद्ध मध्यमवाले पूर्वमेलक और दायें तीन्द्र-मध्यमवाले उत्तरमेलके नाम हैं।

चक्र १

| क्रमक | पूर्वमल<br>'म' | स्वर प्रबंध            | उत्तरमेल<br>'म' | क्रमक |
|-------|----------------|------------------------|-----------------|-------|
| १     | वनकापी         | स र् र म (म') प घ घ स  | सालिग           | ३७    |
| २     | रत्नापी        | स र् र म (म') प घ न स  | जलाणव           | ३८    |
| ३     | गानमूर्त्ति    | स र् र म (म') प घ न स  | झलवराढी         | ३९    |
| ४     | वास्पति        | स र् र म (म) प घ न् स  | नवनीतम          | ४०    |
| ५     | मानवतो         | स र् र म (म') प घ न स  | पावनी           | ४१    |
| ६     | तानरूपि        | स र् र म (म') प न् न स | रघुप्रिया       | ४२    |

चक्र २

|    |             |                         |                 |    |
|----|-------------|-------------------------|-----------------|----|
| ७  | सनावतो      | स र् ग् म (म') प ध् ध स | गवाम्बोधि       | ४३ |
| ८  | हनुमट्टाढी  | स र् ग् म (म') प घ न स  | मवप्रिया        | ४४ |
| ९  | धेनुक       | स र् ग् म (म) प ध् न स  | गुमपन्तुवराढी   | ४५ |
| १० | नाटकप्रिया  | स र् ग् म (म') प घ न स  | पटविद्यमार्गिणी | ४६ |
| ११ | कोकिलप्रिया | स र् ग् म (म') प घ न स  | सुवर्णांगी      | ४७ |
| १२ | रूपावता     | स र् ग् म (म') प न न स  | शिव्यमणी        | ४८ |

## चक्र ३

| क्रमिक | पूर्वमेल<br>'म' | स्वर प्रबंध           | उत्तरमेल<br>'म' | क्रमिक |
|--------|-----------------|-----------------------|-----------------|--------|
| १३     | गायकप्रिया      | स र् ग म (म') प ध ध स | धवताम्बरी       | ४९     |
| १४     | बकुलाभरण        | स र् ग म (म') प ध न स | नामनारायणी      | ५०     |
| १५     | मायामालवगौडा    | स र् ग म (म') प ध न स | कामवधनी         | ५१     |
| १६     | चक्रवाक         | स र् ग म (म') प ध न स | रामप्रिया       | ५२     |
| १७     | सूयकांत         | स र् ग म (म') प ध न स | गमनधम           | ५३     |
| १८     | हाटकाम्बरी      | स र् ग म (म') प न न म | विश्वम्भरी      | ५४     |

## चक्र ४

|    |             |                      |              |    |
|----|-------------|----------------------|--------------|----|
| १९ | झकारध्रनि   | स र ग म (म') प ध ध स | श्यामलागो    | ५५ |
| २० | नटभरवी      | स र ग म (म) प ध न स  | पण्मुखप्रिया | ५६ |
| २१ | कीरवाणी     | स र ग म (म') प ध न स | सिंहद्रमध्यम | ५७ |
| २२ | नरहरप्रिया  | स र ग म (म') प ध न स | हमरती        | ५८ |
| २३ | गौरीमनोहारी | स र ग म (म') प ध न स | धमवती        | ५९ |
| २४ | वह्णप्रिया  | स र ग म (म') प न न स | नीतिमती      | ६० |

## चक्र ५

| क्रमक | पूर्वमल<br>'म'               | स्वर प्रवर्ध         | उत्तरमेल<br>'म' | क्रमक |
|-------|------------------------------|----------------------|-----------------|-------|
| २५    | माररजनो                      | स र ग म (म') प ध घ स | कातामणि         | ६१    |
| २६    | चारुङ्गी                     | स र ग म (म') प ध न म | श्रुधमप्रिया    | ६२    |
| २७    | सुरमाणी                      | स र ग म (म') प ध न म | रताणी           | ६३    |
| २८    | हरिकाम्बोनि<br>(हरिकाम्भाजि) | स र ग म (म') प ध न म | वाचस्पति        | ६४    |
| २९    | घोरङ्कगमरण                   | स र ग म (म') प ध न स | मेचकल्पाणी      | ६५    |
| ३०    | नागानदिना                    | स र ग म (म') प न न स | चित्राम्बरी     | ६६    |

## चक्र ६

|    |            |                        |                 |    |
|----|------------|------------------------|-----------------|----|
| ३१ | यागप्रिया  | स ग् ग म (म') प ध घ स  | सुचरित्र        | ६७ |
| ३२ | रागवधनी    | स ग् ग म (म') प ध न स  | ज्यानिस्वरुदिनी | ६८ |
| ३३ | गागयभूपणी  | स ग् ग म (म') प ध न स  | घालुवधनी        | ६९ |
| ३४ | वागधोस्वरी | स ग् ग म (म') प ध न स  | नामिकाभूपणी     | ७० |
| ३५ | गुल्िनी    | स ग् ग म (म) प ध न स   | कोसल            | ७१ |
| ३६ | चन्नाट     | स ग् ग म (म') प न् न स | रसिकप्रिया      | ७२ |

## चक्र ३

| क्रमक | पुवमेल<br>'म' | स्वर प्रवध           | उत्तरमेल<br>'म' | क्रमक |
|-------|---------------|----------------------|-----------------|-------|
| १३    | गायवप्रिया    | स र ग म (म') प ध ध स | धवताम्बरी       | ४९    |
| १४    | बकुलाभरण      | स र ग म (म') प ध न स | नामनारायणी      | ५०    |
| १५    | मायामालवगोडा  | स र ग म (म') प ध न स | कामवधनी         | ५१    |
| १६    | चक्रवाक       | स र ग म (म') प ध न स | रामप्रिया       | ५२    |
| १७    | सूयका त       | स र ग म (म') प ध न स | गमनध्रम         | ५३    |
| १८    | हाटकाम्बरी    | स र ग म (म') प न न स | विदवम्बरी       | ५४    |

## चक्र ४

|    |             |                       |               |    |
|----|-------------|-----------------------|---------------|----|
| १९ | झंकारध्वनि  | स र ग म (म') प ध ध स  | श्यामलागी     | ५५ |
| २० | नटभरवी      | स र ग म (म) प ध न स   | पञ्मुखप्रिया  | ५६ |
| २१ | कीरवाणी     | स र ग म (म') प ध न स  | मिह्रद्वमध्यम | ५७ |
| २२ | खरहरप्रिया  | स र ग म (म) प ध न स   | हमवती         | ५८ |
| २३ | गौरीमनोहारी | स र ग म (म') प ध न सं | धमवती         | ५९ |
| २४ | वरुणप्रिया  | स र ग म (म) प न न स   | नीतिमती       | ६० |

पञ्च

अध्याय ४

संज्ञा

| परमक<br>म | व्यंजन                        | उदाहरण                          | १५<br>१६ |
|-----------|-------------------------------|---------------------------------|----------|
| १०        | सारगमनी                       | स र ग म (ः) प ञ् ञ म            | १५       |
| ११        | षाण्णिका                      | म र ग म (ः) प ञ् ञ म            | १६       |
| १२        | सरसागा                        | स र ग म (म') प ञ् ञ म           | १७       |
| १३        | रिक्ताम्बाणि<br>(हरिकाम्बाणि) | प र ग म (म') प ञ् ञ म           | १८       |
| १४        | षीरान्कतामराणा                | प र ग म (म') प ञ् ञ म : मषकाणां | १९       |
| १५        | नागानन्दिना                   | स र ग म (म) प ञ् ञ म : विषाणां  | २०       |

अध्याय ५

|    |             |                         |          |
|----|-------------|-------------------------|----------|
| ११ | सागप्रिना   | स ग् ग म (म') प ञ् ञ म  | गृह्यात् |
| १२ | रागवर्जनी   | स ग् ग म (म') प ञ् ञ म  | गृह्यात् |
| १३ | गागयन्नुपगो | स ग् ग म (म') प ञ् ञ म  | गृह्यात् |
| १४ | वागधावरी    | स ग् ग म (म') प ञ् ञ म  | गृह्यात् |
| १५ | गुञ्जिना    | स ग् ग म (म') प ञ् ञ म  | गृह्यात् |
| १६ | चग्नाट      | स ग् ग म् (म') प ञ् ञ म | गृह्यात् |

## [ स्व ] लघु मेलकर्ता ( रामस्वामी )

| क्रमिक | पूर्वमेल 'म' | स्वर प्रबंध          | उत्तरमेल 'म' | क्रमिक |
|--------|--------------|----------------------|--------------|--------|
| १      | टोडा         | स र ग म (म') प ध न स | भावप्रिया    | १७     |
| २      | धनुका        | स र ग म (म) प ध न स  | शुभपतुवराडा  | १८     |
| ३      | नाटकप्रिया   | स र ग म (म) प ध न स  | पडविधमागती   | १९     |
| ४      | काकिलप्रिया  | स र ग म (म') प ध न स | स्वणागी      | २०     |
| ५      | बहुलाभरण     | स र ग म (म) प ध न स  | रामनारायणी   | २१     |
| ६      | मायामालवगोडा | स र ग म (म') प ध न स | कामधनी       | २२     |
| ७      | चक्रवाक      | स र ग म (म') प ध न स | रामप्रिया    | २३     |
| ८      | सूर्यकांत    | स र ग म (म') प ध न स | गमनप्रिया    | २४     |
| ९      | नटभरवी       | स र ग म (म') प ध न स | पण्मुखप्रिया | २५     |
| १०     | गिर्वाणी     | स र ग म (म') प ध न स | मिहेद्रमया   | २६     |
| ११     | खरहरप्रिया   | स र ग म (म') प ध न स | हेमवती       | २७     |
| १२     | गौरीमनोहारी  | स र ग म (म) प ध न स  | धमवती        | २८     |
| १३     | चारुवेशा     | स र ग म (म') प ध न स | श्रुपभप्रिया | २९     |
| १४     | सरसागी       | स र ग म (म) प ध न स  | लतागी        | ३०     |
| १५     | हरिवाग्भोजी  | स र ग म (म') प ध न स | वाचस्पति     | ३१     |
| १६     | शकराभरण      | स र ग म (म) प ध न स  | मेखवरुपाणी   | ३२     |

(क) गिष्ठा—

पङ्क्तं वदति मयूरो गात्रा रग्मति चपमम् ।  
 अत्रा वदति गाधार कौञ्चो वदति मयमम् ॥  
 पुष्पमाधारणे काले काकिलो वदति पञ्चमम् ।  
 अश्वस्तु धैवत वक्ति निपाद् वक्ति कुञ्जर ॥  
 —नारदी शिक्षा ।

पङ्क्तो वेद गिरण्डा स्यात्पम स्यादनामुखे ।  
 गात्रो रग्मति गाधार कौञ्चाश्चैत्र तु मयमम् ॥  
 काकिल पञ्चमो जेयो निपात् तु वङ्गान् ।  
 अश्वश्च धैरतो जेयो स्वरा मन्तत्रिधा मता ॥  
 —याज्ञवल्क्य शिक्षा ।

(ख) भरत—

(१) पङ्क्तश्च रूपमश्चैत्र गात्रारो मध्यमस्तथा ।  
 पञ्चमा धैवतश्चैत्र मसमश्च निपादवान् ॥  
 चतुत्रिधैवमतेषा त्रिजैय श्रितियोगत ।  
 वादी चैवाथ सवादी ह्यनुवादा त्रिजायपि ॥

(२) सवादी मध्यमप्राग पञ्चमस्यपमस्य च ।  
 पङ्क्तप्राग च पङ्क्तस्य सवाद पञ्चमस्य च ॥

(३) अन्तरस्वरमयोगो नित्यमारोहि मश्रय ।  
 कायस्वत्वा त्रिजैयेण नाररोहि कदाचन ॥

(४) —द्वे वाजे तुल्यप्रमाणतः पृथुपपादनदण्डमृच्छित पङ्क्त  
 प्रामाश्रित कार्ये । तयोरन्वतरौ मध्यप्रामिकौ कुर्यात् । पञ्च  
 मस्यापकृषे तामव पञ्चमस्य ध्रुपुत्कपवदान् पङ्क्तप्रामिकौ



कुर्यात् । एव श्रुतिरपकृष्टा भवति । पुनरपि तदेवापकर्षात्  
गाधारनिपादाद्यपि इतरस्या धैवतपमौ प्रविशत ध्रुत्यधि  
कत्वात् । पुनस्तदेवापकर्षाद्भैरवतर्पमावितरस्या पञ्चमपङ्क्तौ  
प्रविशत ध्रुत्यधिकत्वात् । तद्वत्पुनरपकृष्टाया तस्या पञ्चम  
मध्यमपङ्क्ता इतरस्या मध्यमनिपादगाधारवत्त प्रवेक्ष्यति  
चतु ध्रुत्यधिकत्वात् । ष्वमनेन श्रुतिदशनविधानेन द्वैग्रामिकयो  
द्वाविशा श्रुतय प्रत्ययगत-या ।

( भरतनाट्यशास्त्र अष्टाविंशोऽध्याय )

( ५ ) द्विकत्रिकचतुष्कास्तु ज्ञेया वशागता स्वरा ।  
कम्पिता ह्यधमुक्ताश्च -यन्मुक्तास्तथैव च ॥

× × ×

स्वराणां च श्रुतिकृत तच्च म सन्नबोधत ।  
-यन्मुक्ताङ्गुलिस्तत्र स्वरो ज्ञेयश्चतु श्रुति ॥  
कम्पमानाङ्गुलिश्चैव त्रिश्रुतिश्च स्वरो भवेत् ।  
द्विकोऽधाङ्गुलिमुक्तस्तु षट् श्रुत्याश्रिता स्वरा ॥

( म०न०-त्रिंशोऽध्याय । )

( ग ) शास्त्रदेव—

( १ ) गात वाद्य तथा नृत्य त्रय सङ्गीतमुच्यते ।  
मार्गा दशीति तद्देहा तत्रमाग स उच्यते ॥  
यो मार्गिना विरिञ्चायै प्रयुक्तो भरतादिभि ।  
दवस्य पुरत शम्भोनियताभ्युदयप्रद ॥  
दशे दश जनाना यद्द्रव्या हृदयरञ्जकम् ।  
गान च वादन नृत्य तद्देशाऽयमिधीयते ॥

( २ ) नादाऽतिसूक्ष्म सूक्ष्मश्च पुष्टोऽपुष्टश्च कृत्रिम ।  
इति पञ्चविधा धत्ते पञ्चम्याज स्थित ममान् ॥

परिशिष्ट २

- (३) व्यवहारे स्वमौ त्रेधा हृदि मन्द्रोऽभिधीयते ।  
 कण्ठे मध्यो मूर्ध्नि तारो द्विगुणश्चोत्तरोत्तर ॥
- (४) रिमया श्रुतिमकैका गाधारश्चेममाश्रित ।  
 पश्रुतिं धो निपात्स्तु पश्रुतिं मश्रुतिं ध्रित ॥
- (५) अथस्वर्गनिपादाद्यै पडन्या मूच्छना क्रमात् ।  
 मध्यमप्यममारभ्य सौवीरी मूच्छना क्रमात् ॥  
 पडन्यास्तन्धाऽधम्यस्वरानारभ्य तु क्रमात् ।  
 पडनस्थानस्वितैरन्याद्यै रनन्याद्या पर विट् ॥
- (६) ध्रुय तरमावी य स्निग्धोऽनुरणनात्मक ।  
 स्वत रथयति श्रोत्रचित्त म स्वर उच्यत ॥
- (७) मयूरवातकच्छागक्रौञ्चकाकिलददुरा ।  
 गनश्च सप्तपङ्क्तान् क्रमात्पुञ्जायन्यमो ॥
- (८) व्यक्तहे वुमह वासा वाणाद्वन्द्वे निन्तानम् ।  
 द्वे वीणे सप्तश कायै यथा नाणे समो भवेत् ॥  
 तथाद्वाविंशतिस्तन्य प्रयक तामु चादिमा ।  
 कार्या मऽतमञ्चाना द्विवायाञ्च वनिमनाक् ॥  
 स्यान्निरतरता ध्रुयोमध्य ध्वयन्तरा श्रुत ।  
 ( महातरलाकर-अध्याय १, प्रकरण २-४ )

(घ) रामामात्य—

- (१) दशरारागाश्च सकला पट्वज्रप्रामसमुद्भवा ।  
 प्रहाशान्याममऽत्रादि पादवैद्वज्रपूवका ॥
- (२) अन्तरस्य च काकिल्या प्राह्य प्रतिनिधिः क्रमात् ।  
 श्रुतमध्यमगाधारदश्रुतपट्वज्रनिपादक ॥
- (३) स्वयमुव स्वरा ह्येत न स्वश्रुत्या प्रकल्यता ॥४४॥  
 तस्मात्प्रमाणयुक्तं च कर्तुं मार्गो निरूप्यते ।  
 ध्रुतयो द्वादशाद्यै वा ययोरन्तरगोचरा ॥४५॥

मिथ सवादिनौ तौ तु स्वरौ सबत्र योनयत् ।  
 एव रत्नाम्प्रोक्तो मार्गाऽथ सप्रदक्षित ॥४६॥  
 स्वरप्रमाणता कर्तुं भागान्तरमथोच्यते ।  
 चतुथतया सभूत शुद्धोऽथ मद्रपञ्चम ॥४७॥  
 द्वितीयाया सारिकाया स्वयभूरिति कथ्यत ।  
 तस्माद्द्वितीयसार्यं य जाता सधेऽपि ते स्वरा ॥४८॥  
 स्वयभुव प्रमाणाख्या कर्तुं शक्या न चान्यथा ।  
 द्वितीयसाया जातस्य तया चापि द्वितीयया ॥४९॥  
 अनुमद्रस्य शुद्धस्य निपादस्य प्रमाणत ।  
 चतुथसार्यां सजात तया चापि तुरीयया ॥५०॥  
 मन्त्रे शुद्धनिपादाख्य सप्रमाणे कृते सति ।  
 चतुथमार्यां सजाता स्वरा सर्वे स्वयभुव ॥५१॥  
 प्रमाणयुक्ता कनापि न शक्या कर्तुमन्यथा ।  
 तुरीयसाया तया तु सजातस्य द्वितीयया ॥५२॥  
 व्युत्पद्जनिपादस्य चानुमद्रप्रमाणत ।  
 षष्ठसार्यां तन्त्रिक्या चतुथ्या जनिते स्वर ॥५३॥  
 व्युत्पद्जनिपादाख्य मन्त्रे मानयुत कृत ।  
 षष्ठमार्यां समुत्पन्ना स्वरा सर्वे स्वयभुव ॥५४॥  
 प्रमाणयुक्ता शक्यन्ते नान्यथा कर्तुमञ्जसा ।  
 पञ्चम्या सारिकाया तु पद्जमध्यमसमयात् ॥५५॥  
 तज्जाना प्रमयाश्च (?) त सर्वे स्यु स्वयभुव ।  
 पञ्चम्यां सारिकायां तु तया जातस्य तुयया ॥५६॥  
 मद्रस्य कैशिकाख्यस्य निपादस्य प्रमाणत ।  
 तृतीयाया सारिकाया जात तया द्वितीयया ॥५७॥  
 अनुमन्त्रे कैशिकाख्य निपादे मानसयुत ।  
 कृते सति तदुद्भूता स्वरा सर्वे स्वयभुव ॥५८॥

नृतायाया सारिकाया सञ्ज्ञानस्य नुरायया ।  
 तन्वा मन्द्रस्य गुदस्य धैवतस्य प्रमाणत ॥७९॥  
 आया सार्या ममुद्भूते तया चापि द्वितायया ।  
 अनुमन्त्रामिधे शुद्धे धैवत मानयोगिनि ॥६०॥  
 कृत सति समुत्पन्ना सर्वे प्रामाणिका स्वरा ।  
 अय प्रकार मारीपु पट्सूत्पन्नस्वरावले ॥६१॥  
 प्रमाणनिणयकृते रामामात्पन दक्षित ।

( स्वरमलकलानिधि तृतीय प्रकरण )

(च) सोमनाथ—

द्वादशविकृतापूर्वे वदन्ति तत्र तु पृथक् पृथक्चनित ।  
 मन्तेव स्युमिन्ना न पञ्च यदिम समध्वनय ॥२५॥  
 स्वान्त्यध्रुतातुपान्त्यध्रुती च सति पञ्चम क्रमात् स स्यात् ।  
 किन्तु विकारो दक्ष्या न पञ्चम तदिह स प्रथम ॥२६॥

( रागविनाथ अध्याय १ )

(छ) वैकटमात्री—

(१) पङ्कजस्वरस्य पुरतश्चत्वार क्रमात् स्वरा ।  
 ऋपमाग्यानका कचिद्गाधारान्यानकाश्च त ॥२॥  
 तत्राद्यो नैव गाधारश्चतुर्धा ऋपमो न हि ।  
 ऋपमात्रपि गाधारो द्वितीयकतृतीयको ॥ ३ ॥  
 तृतीय वा चतुर्थं व्यपेक्ष्य स्याद्द्वितीयक ।  
 ऋपमाख्य स ष्व स्याद्गाधारोऽपेक्ष्य चान्तिमम् ॥४॥  
 तृतीयो ऋपमाग्यानश्चतुर्परिणया भवेत् ।  
 स हि व्यपेक्ष्य गाधार प्रथम वा द्वितीयकम् ॥५॥  
 ष्व च सति निष्पन्न द्वितीयकतृतीययो ।  
 गाधारत्व च ऋपमत्र भूयमित्यत्र निणय ॥६॥

तस्मादाद्यद्वितीयौ च तृतीयश्चपमा मता ।  
 तप्प्राद्यो गौडरूपम श्रीरागरूपम पर ॥७॥  
 तृतीयो नाटरूपम इति लक्ष्यविदा मतम् ।  
 आद्य शुद्धपम पञ्चश्रुतिकपमसन्नक ॥८॥  
 द्वितीयश्च तृतीय पट्श्रुतिकपम उच्यते ।  
 लक्षणजैमयोक्तास्त त्रयो ररिह्यज्जका ॥९॥  
 द्वितीयश्च तृतीयश्च चतुर्थश्च त्रय स्वरा ।  
 सामान्यत स्युगाधारास्तेष्व्याद्य लक्ष्यवेदिभि ॥१०॥  
 प्राक्तं मुत्तारिगाधारो द्वितीया भैरवायुत ।  
 गाधारोऽथ तृतीयस्तु गौडगाधार उच्यते ॥११॥  
 लभणजैस्तु तप्प्राद्य शुद्धगाधार उच्यते ।  
 साधारणाव्यगान्धारा द्वितीय परिकीर्तित ॥१२॥  
 तृतीयोऽन्तरगाधार इत्यह तु वदामि तान् ।  
 क्रमाद्गगिगुनाम्नस्त्रीन् मलप्रस्तारसिद्धय ॥१३॥  
 ष्व च पङ्क्तात् पुरता निवसत्सु चतुःत्रपि ।  
 स्वरपु प्रथमादित्रितय ऋषमनामरम् ॥१४॥  
 गाधाराण्य द्वितीयादित्रयमित्यत्र निणय ।  
 चतुर्ध्वतपु जानस्य ररिवाण्यानशालिन ॥१५॥  
 गाधारत्रितयस्यापि पूजाङ्गाप्या मया कृता ॥१६॥

- (२) नियमनैव सम्राट् पङ्क्तस्तत्पुरत क्रमात् ।  
 विद्यमानपु चतुपु स्वरप्वन्यतरायुर्मा ॥१६॥  
 तत्रपम पूर्वमवा गाधारस्त्वनुना भवेत् ।  
 द्वयोमध्यमयारक् सम्राट्पो मध्यमो भवेत् ॥१७॥  
 नियमन हि सम्राट् पञ्चमस्तत्पुर स्थिता ।  
 स्वरा क्रमण चत्वारस्तेपु चान्यतरायुर्मा ॥१८॥

सप्राह्य पूर्वजातोऽत्र धैवत परिकीर्तित ।  
 पश्चाद्भवो निपाद स्यादिति सप्त स्वराश्च ये ॥४९॥  
 तथा च मलन मलो गीतवद्भिः प्रकीर्तित ।  
 भेदा द्विसप्ततिस्तस्य भवत्यस्माभिरीरित ॥५०॥  
 यनोपायेन मलास्ते द्विसप्ततिरिति स्फुगा ।  
 तमुपाय प्रवक्ष्यामि लक्ष्यज्ञमुत्तुद्धय ॥५१॥  
 रगौ रगी रगू चैव रिगी रिगू रगू तथा ।  
 पद्भदा इति पूर्वाङ्गे द्रष्टव्या गीतकोविदैः ॥५२॥  
 धनौ धनी धनू चैव धिनी धिनू धुनू तथा ।  
 उत्तराङ्गेऽपि पद्भदा द्रष्टव्या गीतकोविदैः ॥५३॥  
 पूर्वाङ्गतपद्भदा पद्जाया स्युः पृथक् पृथक् ।  
 उत्तराङ्गस्यपद्भेदा पञ्चमाद्या पृथक् पृथक् ॥५४॥  
 आद्य पूर्वाङ्गगो भेद उत्तराङ्गस्थितैः क्रमात् ।  
 योज्यत यदि पद्भेदैः पणमला समवन्त्यत ॥५५॥  
 पूर्वाङ्गस्य द्वितीयोऽपि भदस्तनैव वरमना ।  
 सयोज्यते यदि तदा पणमला समवन्त्यत ॥५६॥  
 एव तृतीयो भेदोऽपि पणमलोत्पादको भवेत् ।  
 चतुर्योऽपि तथैव स्यात्पञ्चमोऽप्येवमव हि ॥५७॥  
 एव षष्ठोऽपि विज्ञेय पणमलात्पत्तिकारणम् ।  
 अतः पूर्वाङ्गभेदानां पण्णामपि पृथक् पृथक् ॥५८॥  
 उत्तराङ्गस्थितैः पद्भिर्मदैः सयाजने कृत ।  
 पट्पणमलप्रकारेण मला पट्त्रिंशदागता ॥५९॥  
 पट्त्रिंशन्मलकण्डेषु प्रतिमलं च मध्यम ।  
 मसज्ञा यदि मध्य स्यात् पूर्वमलामिधास्तदा ॥६०॥  
 एतच्चैव तु पट्त्रिंशन्मलेषु प्रतिमलकम् ।  
 मसज्ञमध्यमस्थानं निसञ्ज्ञा यदि मध्यम ॥६१॥

निवेश्यत तदा तेषा भवेदुत्तरमन्ता ।  
इत्यस्माभि समुज्जीता जाता मलद्विसप्तति ॥६२॥

- ( ३ ) प्रसिद्धा पुनरतपु मला कतिचिद्व द्वि ।  
इत्यत न तु सर्वेऽपि तन तत्कल्पन वृथा ॥८१॥  
कल्पनागौरवन्यायादिति चेदिदमुच्यते ।  
अन्ता खलु दशास्तद्देशस्था अपि मानवा ॥८२॥  
तपु समातिकैरघावचसगातकोविदै ।  
य कल्पयिष्यमाणाश्च कल्प्यमानाश्च कल्पिता ॥८३॥  
अस्मदादिभिरज्ञाता ये च शास्त्रैरगोचरा ।  
ये च दशायरागास्तद्भागसामान्यमलका ॥८४॥  
ये न पन्तुवराख्याख्यकल्याणिप्रमुखा अपि ।  
नाना देशीयरागास्तद्भागसामान्यमलकान् ॥८५॥  
सप्रहीतु समुज्जीता ष्ठे मला द्विसप्तति ।  
ततश्चैतपु वैयध्यशङ्का किं कारण भवेत् ॥८६॥

( चतुर्दशो प्रकाशिका-प्रकरण ४ )

- ( ४ ) परमो गुरुरस्माक तानप्पाचायशेखर ।  
सर्वेषामपि रागाणामतद्दृश्यानुसारत ।  
ठायामकल्पयामास लक्ष्यमस्य तदव स ॥ ७ ॥

( चतु०-प्र० ७ )

- ( ५ ) मासते ध्रुतिरिथ्यादि स्वरालोत्रिपुटादिषु ।  
अहमव ध्रुतीयैर्दर्याह गोपालनायक ।  
अद्यप्रभृति ता सर्वे ध्रुतीर्जानन्तु पण्डिता ॥५७॥

( चतु०-प्र० २ )

गीतप्रबन्धयोरव भदो यदि न करप्यत ।  
कुत सिद्धयेद्यनुदण्डी कुता गोपालनायक ॥५॥

( चतु०-प्र० ९ )

( ज ) अटोवल—

षन्मवच्छिन्नवाणाया मध्य तारस्य स्थित ।  
 उमयोषड् नयोमध्य मध्यम स्वरमाचरत् ॥  
 त्रिभागात्मकरीणाया दञ्जम स्यात्तदाग्निमे ।  
 षड् नपञ्चमयोमध्य गाधारस्य स्थितिभवेत् ॥  
 सपयो पूर्वभाग च स्थापनीयोऽथ रिम्बर ।  
 सपयोर्मध्यदेशे तु धैवत स्वरमाचरत् ॥  
 तत्रातद्वयसत्यागाग्निपादस्य स्थितिभवेत् ॥

( सङ्गात-धारिणात् )

( झ ) श्रीनिवास—

भागत्रयादिते मध्य मरो ऋषमयश्चितात् ।  
 भागद्वयोत्तर मरो कुर्यात् कोमलरस्वरम् ॥  
 मरुधैवतयोमध्ये तीव्रगाधारमाचरत् ।  
 भागत्रयविशिष्टेऽस्मिन् तामगाधारपदञ्जयो ॥  
 पूर्वभागात्तर मध्ये म तीव्रतरमाचरेत् ।  
 भागत्रयान्विते मध्य पञ्चमोत्तरपदञ्जयो ॥  
 कोमलधैवत स्याप्य पूर्वभागे विवेकिमि ॥  
 तथैव षसयोमध्य भागत्रयसमन्विते ।  
 पूर्वभागद्वयादूर्ध्वं निपाद तीव्रमाचरन् ॥

( रागतत्वं विबोध )

( ट ) भातमण्ड—

पूर्वान्मयोश्च मर्जाश्च मध्य तारकस्य स्थित ।  
 तदूर्ध्वे ध्वतितारस्य सस्वरस्य स्थितिभवत् ॥  
 मध्यस्थानादिमपद्वन्मारभ्यातारपद्वन्नाम् ।  
 सूत्रं तुयात्तदूर्ध्वं तु स्वर मध्यममाचरत् ॥



भागत्रयसमायुक्तं तत्सूत्रं कारितं भवेत् ।  
 पूरभागाद्वयादग्ने स्थापनीयोऽथ पञ्चमः ॥  
 षड्जपञ्चमगं सूत्रमशत्रयसमन्वितम् ।  
 तत्राशद्वयसत्यागात् पूवभागे तु रिभवेत् ॥  
 पञ्चमोत्तरषड्जान्तर्यमध्यं धैवतमाचरत् ।  
 यथा शुद्धपमस्यासीं प्रस्पुटं पञ्चमो भवेत् ॥  
 मरुधैवतयोर्मध्यं तांशगाधारमाचरत् ।  
 तत्सवादिनिपादाख्यं षड्जधैवतया क्षिपेत् ॥  
 मध्यं षड्जपमरुयो संस्थितं कोमलपमं ।  
 षड्जपञ्चमभावेन तत्सवादी धक्कोमलं ॥  
 षड्जपञ्चमयोर्मध्यं गाधारं कोमलो भवेत् ।  
 मध्यपञ्चमयोर्मध्यं तीव्रमध्यममाचरत् ॥  
 सपयोर्मध्यभागे स्याद्भागत्रयसमन्विते ।  
 पूवभागाद्वयादग्ने निपादं कोमलो भवेत् ॥

( अभिनव-रागमञ्जरा )

## परिशिष्ट ३

इजिप्ट ( मिश्र ) के आधुनिक स्वर और मेल

नीचे दी हुई सारिणीके स्वर-मान मोखतार और मोशवफा-द्वारा वैज्ञानिक विधिसे निर्धारित किये गये हैं ।<sup>१</sup>

| क्रमिक | स्वर-संज्ञा<br>(मिश्र) | अंतराल |       | धातुकस्वर<br>(सेवट) |   | स्वर-संज्ञा<br>हिन्दुस्तानी |
|--------|------------------------|--------|-------|---------------------|---|-----------------------------|
|        |                        | दशमलव  | सवट   |                     |   |                             |
| १      | रास्त                  | १      | ०     | ०                   | स | स                           |
| २      | गाहनवाज                | १ ०५७  | २४ १  |                     |   | र                           |
| ३      | दोका                   | १ १२३  | ५० ३  | ५१                  | र | र                           |
| ४      | कुद                    | १ २००  | ७९ २  |                     |   | ग                           |
| ५      | सोका                   | १ २२८  | ८९ २  | ९७                  |   | ग                           |
| ६      | मीमबुसालीक             | १ २७४  | १०५ २ |                     | ग | ग (१२०)                     |
| ७      | गिरका                  | १ ३३०  | १२३ ९ | १२५                 | म | म                           |
| ८      | हजाज या साहा           | १ ४१७  | १५१ ३ |                     |   | म (११३)                     |
| ९      | नवा                    | १ ४९८  | १७५ ६ | १७६                 | प | प                           |
| १०     | हिसार                  | १ ५९०  | २०१ ४ |                     |   | ध                           |
| ११     | हुसनी                  | १ ६८५  | २२६ ६ | २२२                 | घ | घ' (२२७)                    |
| १२     | अगनु                   | १ ७७९  | २५० २ |                     |   | न                           |
| १३     | ईकार                   | १ ८३१  | २६२ ७ |                     |   | न                           |
| १४     | नाम माहुर              | १ ८८०  | २७४ २ | २७३                 | न | न                           |
| १५     | गवाव एत रास्त          | २ ०००  | ३०१ ० | ३०१ ०               | स | स                           |

१ Mo des in Modern Egyptian Music—M Mokhtar and M Moshawala Nature September 25, 1937

इन १४ स्वरामें-स ४ मेल तयार हाते है, अस —

( १ ) १, ३, ५, ७ ९, ११, १३ ।

( २ ) ३, ४, ८, ९, ११, १३, १ ।

( ३ ) ३, ५, ७, ८, ११, १२, १ ।

( ४ ) १, ३, ४, ७, ९, १० १४ ।

अरबी-फारसी स्वर-ग्राम और मेल\*

१ नीचे अरबी-फारसी स्वर ग्रामके १७ स्वर दिये जाते हैं जो अब्दुल कादिर ( १४वीं सदी ) के निर्धारित किये हुए हैं । ये फ़राबी ( मृत्यु ९५० ई० ) और मुहम्मद शीराजी ( मृत्यु १३१५ ई० ) के बताये हुए स्वरसे मिलते हैं । इन स्वरोंकी मनाएँ हिन्दुस्तानी रसी गयी हैं । स्वरोंके नीचे क्रमसे सेवट और भिन्नमें मान दिये गये हैं ।

|                        |                            |                      |                       |
|------------------------|----------------------------|----------------------|-----------------------|
| (१) स —                | (२) इ —                    | (३) र <sub>१</sub> — | (४) र —               |
| ०, १                   | २३ $\frac{३}{४}$           | ४६, $\frac{१०}{८}$   | ५१, $\frac{९}{८}$     |
| (५) ग —                | (६) ग <sub>१</sub> —       | (७) ग —              | (८) म —               |
| ७४, $\frac{३३}{४}$     | ९७, $\frac{५}{४}$          | १०२, $\frac{६३}{४}$  | १२५, $\frac{५}{४}$    |
| (९) प(म') —            | (१०) प <sub>१</sub> (म') — | (११) य —             | (१२) य —              |
| १४८, $\frac{५५}{४}$    | १७१, $\frac{५०}{४}$        | १७६, $\frac{३}{४}$   | १९९, $\frac{३६}{४}$   |
| (१३) ष <sub>१</sub> —  | (१४) ष —                   | (१५) न —             | (१६) न <sub>१</sub> — |
| २२२, $\frac{५}{४}$     | २२७, $\frac{३३}{४}$        | २५०, $\frac{१३}{४}$  | २७३, $\frac{१५}{४}$   |
| (१७) सं <sub>१</sub> — | (१८) सं ।                  |                      |                       |
| २०६, $\frac{११०}{४}$   | ३०१, २                     |                      |                       |

संकेत—

( १ ) जो स्वरोंके बीच '—' का अर्थ है 'लीमा' ( २३ सेवट ) का अन्तराल ।

- (२) दो स्वराक बीच '—' का अर्थ है कोमा ( ५ सेवट ) का अन्त राल । ठीक ठीक यह पायथागोरसका कामा है जो कोमा डायसिस ( ५ सेवट ) से कुछ बड़ा है ।
- (३) जिन स्वराकी दाहिनी ओर नीचे '१' अंक लगा है वे सच्चे आवतक स्वर हैं । ये पायथागोरसी स्वरासे ५ सेवट उतरे हुए होते हैं, जो यहाँ गुद्ध मान गये हैं । असलमें '१' चिह्नवाले स्वर आवतक मानसे भी एक एक स्विस्मा ( लगभग ५ से या ८८७।८८६ ) उतरे हुए हैं पर यहाँपर इसे छोड़ दिया गया है ।
- २ इन १७ स्वरासे १२ मुक्रामात या मेल तयार होत हैं जिनमें-से ८ तो सात स्वरवाले हैं और ४ आठ स्वरवाले । नीचे इन १२ मेलकी सारिणी दी जाती है जिसमें स्वरोका मान दिया गया है । अन्तिम खानमें गान समय भी बताया गया है ।

# भोक्रामात

| क्रम | मेल के नाम | स्वर प्रबन्ध   | गान समय                   |
|------|------------|----------------|---------------------------|
| १    | ईगार       | स र ग म प य नृ | सूर्यास्तके लगभग          |
| २    | नवा        | स र ग म प य नृ | आधोरात                    |
| ३    | बुसलीक     | स र ग म प य नृ | दोपहर बाद (दिन)           |
| ४    | रास्त      | स र ग म प य नृ | दोपहर                     |
| ५    | हुयनी      | स र ग म प य नृ | सूर्योदयक ३ घण्टे बाद     |
| ६    | हजाड       | स र ग म प य नृ | इस्फहानीके बाद            |
| ७    | रहाबी      | स र ग म प य नृ | सूर्योदय तक               |
| ८    | खगूला      | स र ग म प य नृ | सूर्योदयके ३ घण्टे बाद    |
| ९    | इराक       | स र ग म प य नृ | दोपहर तक                  |
| १०   | इस्फहानी   | स र ग म प य नृ | नवाके बाद                 |
| ११   | नुजय       | स र ग म प य नृ | जगूलाके बाद               |
| १२   | पूजक       | स र ग म प य नृ | सूर्यास्तसे ३ घण्टे पूर्व |

## अनुक्रमणिका

### अ

|               |                |                   |
|---------------|----------------|-------------------|
| अतिया वेगम    |                | २४५               |
| अनुनाद—       | Resonance—     | ५८                |
| —की तीक्ष्णता | —sharpness of— | ६३                |
| अनुनादक       | Resonator      | ५९                |
| अनुयोग—       | Coupling—      | ६४                |
| —दृढ़—        | —tight—        | ६५                |
| —शिथिल—       | —loose—        | ६५                |
| अरिस्टाटल     | Aristotle      | १२७, १४८, १६४     |
| असरेकर        |                | २५७               |
| अहोबल         |                | १८९, २०१, २५८ २७९ |
| अन्तराल       | Interval       | ७७                |

### आ

|          |             |           |
|----------|-------------|-----------|
| आकरण     | Stethoscope | ४७        |
| आर्चिक   |             | १४७       |
| आवर्तक   | Harmonic    | ३८        |
| आवृत्ति— | Frequency—  | १४ १६, १७ |
| —ग्रहज—  | —Natural—   | २६, ५६    |
| आगिक     | Partial     | ४१        |

### उ

|        |          |    |
|--------|----------|----|
| उपस्वर | Overtone | ४१ |
| उभार   | Crest    | २२ |

|                 |                        |               |
|-----------------|------------------------|---------------|
| शुक्रमणिका      |                        | ३०७           |
| उल्क-दृष्टवल    | Wolf—intercal          | १३४           |
| —नोट            | —note                  | ६४            |
|                 | ए                      |               |
| एँपाटोम         | Apotom                 | १२६           |
| एलिस            | Ellis                  | ८१, ९७, २५९   |
|                 | ओ                      |               |
| ओहव             |                        | १४६           |
| ओमका नियम       | Ohm's law              | ५४            |
| ओर्फियम         | Orpheus                | १४६           |
| ओवेन            | Owen                   | १३९           |
|                 | ऋ                      |               |
| ऋग्वेद—         |                        | १४७           |
| —प्रातिशाख्य    |                        | १५२           |
|                 | ए                      |               |
| कम्पन—          | Vibration—             | १२, १४        |
| —अनुदैर्घ्य—    | —longitudinal—         | १४            |
| —अनुप्रत्य—     | —transverse—           | १४            |
| —काल            | —period of—            | १४            |
| —प्रेरित—       | —forced—               | ५६            |
| —मुक्त—         | —free—                 | ५६            |
| —वक्र           | —curve                 | ३७, ५०        |
| कम्प विस्तार    | Amplitude of vibration | १४            |
| कर्णाटकी पद्धति |                        | ८९            |
| कला             | Phase                  | ३७, ५४        |
| कलिनाथ          |                        | १६८, १७३, १८५ |
| कार             |                        | २१६           |



|                 |                     |         |
|-----------------|---------------------|---------|
| काल             | Period              | १४      |
| कोहल            |                     | २६४     |
| बलमेष्ट         | Clement             | ९७,२१८  |
|                 | र                   |         |
| खाल             | Trough              | २२      |
| खुसरू           |                     | १४५,२८० |
|                 | ग                   |         |
| गमक             |                     | २२०,२६५ |
| गायिक           |                     | १४७     |
| गाघार ग्राम     |                     | १६८     |
| —सवाद           |                     | २५२     |
| गुण             | Quality, timbre     | ४९      |
| गुन्तया         |                     | २१६     |
| गेराडुस मर्केटर | Gerardus Mercator   | १३५     |
| गोपाल नायक      |                     | २००,२८२ |
| ग्रिय           | Node                | ३२      |
| ग्राम—          | Scale—              | ७६      |
| —अपस्वरक—       | —chromatic—         | १२७     |
| —आवत्तक—        | —Harmonic—          | ९८      |
| —द्विस्वरक—     | —diatonic—          | १२७     |
| —प्राकृतिक—     | —Natural—           | ९८,१२०  |
| —जटिल—          | —Complex—           | १३५,१३९ |
| —झारसी—         |                     | १२९     |
| —श्रुतिमूलक—    | —enharmonic—        | १२७     |
| —समसाधृत—       | —equal temperament— | ९२,१३४  |
| —साधारण—        | —tempered—          | ८२      |

|                   |                   |               |
|-------------------|-------------------|---------------|
| धनुःमणिका         |                   | ३०९           |
| —साधत—            |                   | १३१           |
| —स्वरसाधत—        | Meantone—         | १३२           |
| ग्राहक            | Receiver          | ३१            |
|                   | घ                 |               |
| घोष               |                   | ५२            |
|                   | च                 |               |
| चक्रिक प्रक्रिया  | Cyclic process    | १२१, १८२, १९३ |
| चतुदण्डीप्रकाशिका |                   | १९८           |
| च्लेडनीके चित्र   | chladni's figures | ५२            |
|                   | छ                 |               |
| छायालग            |                   | २४५           |
|                   | ज                 |               |
| जवारी             |                   | २१५           |
| जाति              |                   | १६१           |
| जीवा              |                   | २१५           |
| जोस               | Jones             | १६४           |
| ज्यावक्र          | Sine curve        | ४१            |
|                   | ट                 |               |
| टर्पेण्डर         | Turpender         | १४६           |
| टार्टिनी          | Tartini           | ७१            |
| टिण्डल            | Tyndall           | ३२            |
| टोनिक             | Tonic             | १६४           |
|                   | ड                 |               |
| डाट               | Mode              | ९०, २२९       |
|                   | ड                 |               |
| दाविन             | Darwin            | १३९, १७६      |

डीसोर्जी  
डारियन  
डोल

de Sorge  
Dorian  
Beat

ध्वनि और संगीत

७१  
२२३  
६८, ९८

समूरा  
तरंग—

त

Wave—

—अतिध्वनिक—

—ultrasonic—

—अनुदध्य—

—longitudinal—

—अनुप्रस्थ—

—transverse—

—जगम—

—Progressive—

—मान

—length

—विश्लेषण

—analysis of—

—विस्तार

—amplitude

—वग

—velocity

—संयोग

—Composition of—

—संश्लेषण

—Synthesis of—

—स्थावर—

—stationary

सानसन

२०० २०१, २८१

तारता

Pitch

तीव्रता

Loudness, intensity

तुम्बर

४३

त्साय्यु

४६

१४८, २१४

१४६

द

दाक्षिणात्य पद्धति

Danielou  
Pendulum

देनीलू

८९ १८९

दोलन

१३५

|                    |                |                    |
|--------------------|----------------|--------------------|
| अनुक्रमणिका        |                | ३११                |
| द्विभुज            | Tuning fork    | १५, ३५             |
| द्विवर्ण, जी० पी०— |                | २८१                |
|                    | ध              |                    |
| ध्रुपद             |                | २८२                |
| ध्वनि—             | Sound—         | ९                  |
| —तरंग              | —wave          | ४७                 |
| —मिश्र—            | —Composite—    | ४१                 |
| —वक्र              | —Curve         | ३८, ५०             |
| —वेग               | —velocity      | २७                 |
| —संचार             | —propagation   | १०                 |
|                    | न              |                    |
| नवाबअली            |                | २८२                |
| नाद—               | Musical Sound— | १२, ३९             |
| —अनाहत—            |                | ९, १६७             |
| —आहत—              |                | ९, १६७             |
| —मिश्र—            | —composite—    | ४१                 |
| —वकालिक—           | —nonperiodic—  | ५३                 |
| —सामकालिक—         | —periodic—     | ५३                 |
| नारद               |                | १४७, १४९, २१०      |
| नासिरुद्दीनखान     |                | २००                |
| नियामनखान          |                | २८१                |
| न्यास              |                | १६५                |
|                    | प              |                    |
| पाणिनि             |                | १४८                |
| पायथागोरस—         | Pythagoras     | १७, ९५, १२३, १३१   |
|                    |                | १४६, २०३, २०८, २२३ |
| —का कामा           | —comma of—     | १२४                |

|                       |                      |                   |
|-----------------------|----------------------|-------------------|
| पुरंदरदास             |                      | २७६               |
| प्रतापसिंह, महाराज—   |                      | २०९               |
| प्रतिग्रह य           | Antinode             | ३३                |
| प्राकृतिक प्रक्रिया   | Natural process      | ११९               |
| प्रेषक                | Transmitter          | ३१                |
| <b>फ</b>              |                      |                   |
| फोनोडाइक              | Phonodeik            | ३८                |
| फोरिपर                | Fourier              | ४०                |
| <b>ब</b>              |                      |                   |
| बिलासखी               |                      | २८१               |
| बजू नायक              |                      | २००, २८२          |
| बोसाक्                | Bosanquet            | १३५               |
| ब्राउन                | Brown                | ६१                |
| ब्लसेना               | Blaserna             | ९७                |
| <b>भ</b>              |                      |                   |
| भरत—                  |                      | ७८, ९५, १५०, १५३  |
|                       |                      | २३४, २७४, २७९     |
| —नाट्यशास्त्र         |                      | १५३, २८०          |
| भातखण्डे              |                      | २२६, २३९ २५७, २७८ |
| <b>म</b>              |                      |                   |
| मतङ्ग                 |                      | १५३ १६०, १६५, १६८ |
| मध्यम ग्राम           |                      | १५४               |
| मसिन                  | Mersenne             | १७                |
| महम्मद रजा            |                      | २०९, २२८, २८२     |
| माइक्रोफोन, गम तारका— | Microphone hot wire— | ६०                |
| मानव—अवतरण            | Descent of Man       | १३९               |

|                  |               |             |
|------------------|---------------|-------------|
| अनुक्रमणिका      |               | ३१३         |
| मिलर             | Miller        | ३८,५५       |
| मिसरो सिंह       |               | २८१         |
| मुरारी प्रसाद    |               | २४३ २८२     |
| मुहम्मद शाह      |               | २८१         |
| मुशी वाजिदअली    |               | २८२         |
| मच्छना           |               | १५८,१६८     |
| मेयर             | Mayer         | १००         |
| मेलडी            | Melde         | ३२          |
| मेसा             | Mesa          | १६४         |
| मक्सम्यूलर       | Max Muller    | १४०         |
| मोड              | Mode          | १५९         |
| मौलिक            | Fundamental   | ३८,४१       |
|                  | य             |             |
| यजुर्वेद         |               | १४७         |
| यमकत्व           | Symmetry      | २३९         |
| यंग, थामस        | Young, Thomas | ५१,१०७,२१६  |
|                  | र             |             |
| रामचन्द्रन       |               | २८३         |
| रामपालसिंह राजा- |               | २५९         |
| रामस्वामी        |               | १५१,१९३,२३७ |
| रामामात्य        |               | १२४,१७२,१८९ |
| राव              | Noise         | १२,३९,५३    |
| रेवरण्ड लॉक उड्ड | Rev Lockwood  | १३९         |
|                  | ल             |             |
| लॉगरिद्म         | Logarithm     | ८०          |
| लिड              |               | १२४         |

|                     |                      |                 |
|---------------------|----------------------|-----------------|
| लीनक                |                      | २२०             |
| लीमा                | Limma                | १२५             |
| ल आनडड ऊले          | Leonard Woolley      | १४०             |
| लोचन                |                      | २०१             |
| व                   |                      |                 |
| वक्र ध्वनि—         | Curve—Sound—         | ३८              |
| —वकालिक—            | —nonperiodic—        | ३९              |
| —सामकालिक—          | —periodic—           | ३९              |
| वजीर खाँ            |                      | २८१             |
| वाइत्ज़मान          | Waetzmann            | ७२              |
| वाइट                | White                | १३५             |
| वाटरहाउस            | Waterhouse           | १३९             |
| वादी सवाण           |                      | २४७             |
| विरलता              | Rarefaction          | २५              |
| विवादी              | Dis onant            | ९५ २५३          |
| विश्लेषक, हनरिसी का | Analys er of Henriss | ४१              |
| विष्णु दिगम्बर      |                      | २५७             |
| वेगे और मूर         | Wegel and Moore      | ४२, ६१          |
| वेबर                | Weber                | ३२              |
| वैकटमखा             |                      | १९१ १९८ २३७ २७६ |
| वदिक गान            |                      | १४६             |
| —पद्धति             |                      | १४५             |
| श                   |                      |                 |
| शाङ्गदेव            |                      | १५० १५१ १५३ १६५ |
| शिखा                |                      | १५२             |
| श्रीनिवास—          |                      | २०१             |

अनुक्रमणिका

३१५

१५०

१५३, १७४

४८

१७७

२६५

-आय्यगार

श्रुति-

-दहली

-प्रमाण-

-प्रयोग

Threshold of hearing

स

Condensation

२४

२८१

२८१

१५०

१४७

१४८

२१८, २६०

८०

सपनता

सदारण

सादिङ्गअली

सामवद

सामिक

सायणाचाय

सुब्रह्मण्य अय्यर

सवट

सेंट

सोमनाय

सोफ्रा पद्धति

सकीण

सक्रम

सक्रमिक प्रक्रिया

सगीत-

-गण-

-गायव-

-ग्राम्य-

-चानो-

-दरा-

Savart

Cent

Solfa System

Melody

Melodic process

Music

१२४, १९०, १९२

७५

२४५

११२

१२४

१३८

१५१

१५१

१४२

१२४

१५१



|                  |                 |                   |
|------------------|-----------------|-------------------|
| —भाग—            |                 | १५१               |
| सगीतरत्नाकर      |                 | १६६               |
| सघात             | Chord           | ११३               |
| सहति             | Harmony         | ११२               |
| स्टम्फ           | Stumpf          | १००               |
| स्टथस्कोप        | Stethoscope     | ४७                |
| स्टगवज           | Strangways      | १८२, २४६          |
| स्थिति स्थापकत्व | Elasticity      | १६                |
| स्वयभूस्वर       |                 | १९१               |
| स्वर—अतिविद्धति— |                 | २०२               |
| —अनिष्ट—         | Dissonant tone  | ९६                |
| —अनुवाणी—        |                 | १५३               |
| —इष्ट—           | consonant tone  | ९६                |
| —परिणामि—        | Resultant tone  | ७१, १०८           |
| —प्रवेशक—        | Leading note    | १५५, २६५          |
| —यागिक—          | Summation tone  | ७१                |
| —वज्रित—         |                 | २५४               |
| —वाणी—           |                 | १५३               |
| —विकृत—          |                 | ८४, १५५, १६९      |
| —विवादी—         |                 | १५३, २५४          |
| —शपिक—           | Difference tone | ७१                |
| —साधारण—         |                 | १५५               |
| —सवादा—          |                 | १५३               |
| स्वरमैलकलानिधि   |                 | १५१, १९३          |
| स्वरांतर         |                 | १४७               |
| स्वरित—          | Tonic           | ७५, १४७, १६४, २१३ |

अनुक्रमणिका

—चालन

हनुमानमत

हरिदास

हेनरिसी—

मीटोन

महोज

हमोण्ड

हृदयनारायण

Modulation

ह

Henri

Hemitone

Helmholtz

Hammond

३१७

१३१

२११, २२७

२०९, २८१

४१

१२३

५९, ७१, ९८, ११५, १५६

१६४, १८६, २१६, २३३

२५९, २७७, २७८

५४

२०१